उत्पादन कार्य

मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद वांग्मय से एक संकलन
Version 1

२४ जनवरी २०२०

श्रद्धेय श्री ए. नागराज जी द्वारा प्रणेत मध्यस्थ दर्शन (सह अस्तित्ववाद) में से शब्दों के संदर्भों के खोजने के क्रम में यह “उत्पादन कार्य” शब्द के संदर्भों का संकलन है। यदि यहाँ लिखे हुए और मध्यस्थ दर्शन के मूल वाङ्ग्मय में कोई अंतर मिले तो मूल वाङ्ग्मय को ही सही माना जाए। यहाँ लिखे हुए में त्रुटियों के सुधार और इसको और उपयोगी बनाने हेतु भागीदारी करने के लिए रोशनी साहू (sahuroshani@gmail.com) से संपर्क करें।

Version 0.1	Draft version created	Roshani Sahu, 18/09/2018
Version 0.2		Roshani Sahu, 24/01/2020

उत्पादन कार्य की परिभाषा

- **उत्पादन कार्य** - उपयोगिता सुन्दरता के लिए श्रम नियोजन। **(पृष्ठ नं. - 46)**

- **उत्पादन**
  - प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन पूर्वक उपयोगिता मूल्य और कला मूल्यों की स्थापना सहित रचित वस्तु।
  - प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन पूर्वक उपयोगिता व कला मूल्यों की स्थापना सहित सामान्य आकांक्षा और महत्वाकांक्षा के रूप में वस्तुओं के रूप प्रदान करने की क्रिया।
  - मनुष्येत्तर प्रकृति पर उपयोगिता एवं सुन्दरता की स्थापना किया जाना।
  - उपयोगिता मूल्य एवं उत्थान की दिशा में तन, मन व प्राकृतिक ऐश्वर्य में किया गया गुणात्मक परिवर्तन। **(पृष्ठ नं. - 46)**

(परिभाषा संहिता, संस्करण : तृतीय 2012, मुद्रण: 14 जनवरी 2016)

अनुक्रमणिका

स्वास्थ्य और इससे संबन्धित शब्द को लेकर मध्यस्थ दर्शन वांग्मय में आये सन्दर्भों को निम्न क्रम से संकलित किया गया है.

1. मानव व्यवहार दर्शन ३
2. मानव कर्म दर्शन ५
3. मानव अभ्यास दर्शन ७
4. मानव अनुभव दर्शन ९
5. समाधानात्मक भौतिकवाद १०
6. व्यवहारात्मक जनवाद १६
7. अनुभवात्मक अध्यात्मवाद २६
8. व्यवहारवादी समाजशास्त्र ३१
9. आवर्तनशील अर्थशास्त्र ४५
10. मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान ७६
11. मानवीय संविधान सूत्र व्याख्या ८१

12. जीवन विद्या – एक परिचय १०८
13. विकल्प एवं अध्ययन बिन्दु ११०
14. मानवीय आचरण सूत्र ११२
15. संवाद – भाग १ ११३
16. संवाद – भाग २ ११५
17. 10 सोपानीय व्यवस्था के अंतर्गत उत्पादन कार्य व्यवस्था ११७

मानव व्यवहार दर्शन

(संस्करण: 2011, मुद्रण: 2015)

- मानव ने अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही **उत्पादन कार्य** व प्रयोग किया है। **उत्पादन** एवं प्रयोग का फल ही अर्थोपार्जन है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 25)**
- जागृत मानव परंपरा में राज्य का स्वरूप अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था सूत्र अध्ययन से और आचरण से व्याख्या होने के आधार पर विधि को पहचानने के मुख्य रूप से पाँच मुद्दे पाए गए हैं। (१) मानवीय शिक्षा संस्कार, (२) न्याय-सुरक्षा, (३) **उत्पादन कार्य**, (४) विनिमय कोष, (५) स्वास्थ्य-संयम के रूप में गण्य हैं।
  राज्य प्रक्रिया में उक्त पाँचों व्यवस्थाएं सार्वभौमिकता के अर्थ में ही सार्थक होना पाया जाता है। मानवीय शिक्षा-संस्कार की सफलता अर्थ-बोध होने के रूप में है। न्याय-सुरक्षा की सफलता संबंधों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन पूर्वक उभय-तृप्ति के रूप में सार्थक होना पाया जाता है। **उत्पादन-कार्य** हर परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन के रूप में, समृद्धि के अर्थ में सार्थक होना पाया जाता है। विनिमय-कोष श्रम-मूल्य के पहचान सहित, श्रम विनिमय पद्धति से सार्थक होता है। और स्वास्थ्य-संयम मानव-परंपरा में जीवन जागृति को प्रमाणित करने योग्य शरीर की स्थिति-गति के रूप में सार्थक होता है। यह सब मानव सहज जागृति के अक्षुण्णता का द्योतक है अथवा सार्वभौम व्यवस्था, अखंड समाज और उसकी अक्षुण्णता का द्योतक है। यही राज्य वैभव का स्वरूप है। इस विधि से हर परिवार समाधान-समृद्धि पूर्वक जीना होता है। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर:130-131)**
- **आर्थिक सुरक्षा: -** राष्ट्रीय अर्थ सुरक्षा का नीति निर्धारण निम्न बिंदुओं के आधार पर किया जाना चाहिए: -
  1. व्यवस्था द्वारा सभी व्यक्तियों में उनकी क्षमता, पात्रता एवं योग्यता के आधार पर **उत्पादन-कार्य** में प्रवृत्त होने वाली नीति का विकास। इसका स्पष्ट स्वरूप परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन से है एवं समाधान-समृद्धि हर परिवार में प्रमाणित होने से है।
  2. परिवार समृद्धि के लिए प्रोत्साहन देना तथा तदनुरूप साधन सुलभता करने की नीति को अपनाना।
  3. जागृति सहज क्षमता, योग्यता, एवं पात्रता के आधार पर सम्मान व गौरव प्रदान करना।
  4. उत्पादन हेतु अधिकतम श्रम व साधन व्यय करने हेतु प्रोत्साहन देने वाली नीति का विकास करना।
  5. अनेक जाति, वर्ग, मत, संप्रदायों एवं पक्षात्मक विचारों से मुक्त समाधान पूर्ण मानवीयता सहज अखंड समाज नीति का विकास करना।
  6. स्वधन, स्वनारी/स्वपुरुष, दया पूर्ण कार्य-व्यवहार नीति का विकास करना।
  7. हर परिवार में समाधान-समृद्धि सहज आधार पर अमीरी-गरीबी का असंतुलन समाप्त करना।
  8. व्यवस्था के अंतर्गत हर आयुवर्ग के नर-नारियों को न्याय सुलभ कराने की पद्धति का विकास करना। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 134-135)**

मानव कर्म दर्शन

(संस्करण: 2010, मुद्रण:2017)

- मानव अपने को यदि मात्रा ही माने, तब भी क्या मानव की आवश्यकता स्पष्ट हुई है ? केवल मात्रा ही मानकर सोचने पर भी ऐसा लगता है, हम मानव स्वयं की आवश्यकता को निर्धारित नहीं कर पाये इसी कारण आवश्यकता अनिश्चित बनी रही और आवश्यकता के आधार पर भी हम व्यवस्था की सार्वभौमिकता को, उसके ध्रुवों को पहचान नहीं पाये। मानवत्व का एक ध्रुव मानव अपने आवश्यकता ही है, जो व्यवहार में, **उत्पादन कार्य** में, व्यवस्था में भागीदारी करने के रूप में प्रमाणित होता है। **(अध्याय:3 (9), पृष्ठ नंबर: 93)**
- जागृत मानव परंपरा में वस्तुओं का उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजनशील विधियाँ निष्पन्न होती हैं और प्रमाणित होती हैं। उपयोगिता अर्थात् वस्तु की उपयोगिता की सीमा परिवारगत आवश्यकता के रुप में स्पष्ट होती है। आवश्यकता से अधिक उत्पादन मानव परंपरा में इसलिए संभव हो गया है कि जो कुछ भी उत्पादन करते हैं, जितना भी उत्पादन करते हैं, उतने को भोग नहीं पाते हैं। इसलिए आवश्यकता से अधिक उत्पादन सूत्र स्पष्ट हो जाता है। यह आवश्यकता से अधिक उत्पादन, इस विधि से सहज हो गया कि जीवन में अक्षय शक्ति और बल का होना, जीवन और शरीर के संयुक्त रुप में **उत्पादन कार्य** संपन्न होना, इसका उपयोग शरीर पोषण, संरक्षण, समाज गति के रुप नियोजित होना जो सीमित रहना अर्थात् जिसकी सीमायें निर्धारित रहना होता है। यह स्वभाविक है, यह अभी मानव परंपरा भ्रमित रहने के स्थिति में भी देखा गया है कि कम से कम लोग **उत्पादन कार्य** में लगे हैं, ज्यादा से ज्यादा लोग उपयोग करते रहते हैं। जागृति के पहले से ही आवश्यकता से अधिक उत्पादन मानव कुल में संपादित होने का प्रमाण स्पष्ट है। ऐसे होते हुए भी भटकने का कारण एक ही है, हमें पढ़ाई में यह बताया जाता है- "आवश्यकता अनंत है, साधन सीमित है इसलिए संघर्ष पूर्वक ही हम अपने आवश्यकता को पूरा कर पायेंगे।" इस नजरिये से मानव का संग्रह सुविधा की ओर ज्यादा ध्यान देना, संग्रह-सुविधा का तृप्ति बिन्दु न मिलना, आवश्यकता को अनंत मान लिया। यही भटकाव, और भ्रम का आधार है। इस चक्कर से हम तभी छूट पायेंगे, जब यह स्पष्ट और प्रमाणित हो जाय कि हर परिवार की आवश्यकता सीमित है, आवश्यकता को पूरा करने की संभावना ज्यादा है, जीवन शक्तियाँ अक्षय हैं, जीवन और शरीर के संयुक्त रुप में ही उत्पादन होता है, शरीर की आवश्यकता सीमित है। इस नजरिये से समृद्धि की ओर हमारा ध्यान जाता है। इसका स्रोत परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन होना ही है। **(अध्याय:3(12), पृष्ठ नंबर: 120- 121)**

- समझदारी के साथ मानव का स्वास्थ्य संयम विधा में भागीदारी करना एक स्वभाविक प्रक्रिया है। इसके साथ ही शिक्षा संस्कार, न्याय सुरक्षा, **उत्पादन कार्य**, विनिमय कार्यों में भागीदारी करना सभी समझदार मानव का कर्त्तव्य एवं दायित्व हो पाता है। समझदारी के साथ कर्त्तव्य और दायित्व स्वीकृति सहज रूप में प्रमाणित हो जाता है। समझदारी के अनन्तर अर्थात् सहअस्तित्ववादी ज्ञान, विज्ञान, विवेक संपन्नता के उपरान्त दायित्व और कर्त्तव्य को स्वीकारने में देरी होती ही नहीं, यह स्वयं स्फूर्त विधि से प्रमाणित होती, प्रगट होती है। इन सबको भली प्रकार से परीक्षण, निरीक्षण कर निश्चित किया गया है। हर नर-नारी इसको परीक्षण पूर्वक सत्यापित कर सकते हैं, यह मानव परम्परा के लिए महत्वपूर्ण प्रेरणा रही है। **(अध्याय:17, पृष्ठ नंबर: 158)**

मानव अभ्यास दर्शन

(संस्करण: द्वितीय, मुद्रण: 2018)

- विश्लेषित स्वीकृत होना ही अध्ययन है। रूप, गुण, स्वभाव और धर्म की प्रत्यक्षानुभूति ही विश्लेषण है, जो स्थितिवत्ता व सत्य है। अस्तु, अध्ययन का फलन ही अनुभव है। अनुभव विहीन प्रत्येक **उत्पादन-कार्य** में त्रुटि एवं व्यवहार-कार्य में अपराध भावी है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 21)**
- उत्पादन का सीधा संबंध विनिमय कार्य व स्वास्थ्य संयम कार्य, शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य** संरक्षण से हैं। इन पाँचों की एकसूत्रता उत्पादन के लिये अनिवार्य है। यही व्यवस्था का आद्यान्त कार्यक्रम है। मूल्य-विहीन संबंध नहीं है। संबंध विहीन व्यवस्था एवं व्यवहार नहीं है। उत्पादन के संबंध-निर्वाह में जो न्यूनताएं हैं वही लाभोत्पादक वाणिज्य के जन्म का कारण है। यह उस समय तक रहेगा जब तक उत्पादन संबंध का निर्वाह एकसूत्रतापूर्वक पूर्ण न हो जाय। **(अध्याय: 15, पृष्ठ नंबर: 64)**
- उत्पादन को दूसरी वस्तु व सेवा में बदलने के लिये अपनाई गई सुगम पद्धति ही विनिमय है, जिसकी सफलता के लिये प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक आवश्यकीय वस्तु का सहज-सुलभ होने के लिये केन्द्रों का होना आवश्यक है। **उत्पादन-कार्य** जितना महत्वपूर्ण है उतना ही उसके सहायक तत्व संरक्षण भी महत्वपूर्ण हैं। संरक्षण के अभाव में सशंकतावश, साधनों के अभाव में उत्पादन सामग्रियों की असंपूर्णतावश, शिक्षा के अभाव में अक्षमतावश, विनिमय के अभाव में दूसरी वस्तु व सेवा में परिवर्तित करने के विघ्नवश उत्पादन में क्षति होती है। व्यवस्था का प्रत्यक्ष रूप में से उत्पादन एवं उसके सहायक तत्वों को सर्वसुलभ बनाना है। विधि का शुद्ध रूप ही सामाजिक मूल्यों यथा जीवन मूल्य, मानव मूल्य, स्थापित मूल्य व शिष्ट मूल्य का संरक्षण एवं संवर्धन है। ऐसी शुद्ध व्यवस्था

के अंगभूत श्रम नियोजन एवं श्रम-विनिमय-पद्धति द्वारा सफल होने की पूर्ण संभावना है क्योंकि प्रत्येक मानव शोषण के विरुद्ध है। प्रत्येक मानव न्याय का याचक है। प्रत्येक मानव सही करना चाहता है। प्रत्येक मानव भौतिक समृद्धि एवं बौद्धिक समाधान से संपन्न होना चाहता है। साथ ही प्रत्येक वस्तु में निश्चित श्रम नियोजन होता है। प्रत्येक वस्तु का किसी एक वस्तु की अपेक्षा में श्रम मूल्य निर्धारण उपयोगिता मूल्य के आधार पर होता है। प्रत्येक वस्तु को प्रत्येक स्थान पर सर्वसुलभ बना देना सहज है। **(अध्याय:16, पृष्ठ नंबर: 65)**

- **मानव का सम्पूर्ण कार्यक्रम धार्मिक, आर्थिक एवं राज्यनीति में, से के लिए है।**

यही उत्पादन, व्यवहार, विचार एवं अनुभूति पूर्णता को प्रदान करने में चरितार्थ होता है। इन पूर्णता प्रदायी क्षमता में असमर्थ "नीति त्रय" स्वयं में परिपूर्ण नहीं है। अर्थात जीवन चरितार्थता योग्य कार्यक्रम प्रदायी उपकार सिद्ध नहीं होती। नीति एवं व्यवस्था का मूल उद्देश्य पूर्णता से संपन्न होना और पूर्णता को प्रस्थापित, स्थापित एवं संरक्षित करना ही है। तृप्ति ही पूर्णता का द्योतक है। आयाम चतुष्टय में ही तृप्ति की चरितार्थता है। यह समृद्धि, अभय, समाधान एवं सत्य है। इनसे संपन्न होना ही जीवन तृप्ति विकास, सतर्कता, सजगता एवं भ्रम मुक्ति सिद्धि होती है। कार्यक्रम तृप्ति की अपेक्षा के अर्थ में है। उन्हें पाने के लिए ही सर्वप्रयास है। व्यवस्था, विधि, सभ्यता-संस्कृति प्रत्यक्ष रूप में प्रयास है। इसकी सफलता शिक्षा-प्रणाली एवं व्यवस्था संहिता पर निर्भर है जो मानव की ही प्रबुद्धतापूर्ण क्षमता के अनुरूप-प्रतिरूप होती है। पुन: यही शिक्षा व्यवस्थापूर्वक प्रबुद्ध जनजाति का निर्माण करने का आधार होती है। इस प्रकार प्रबुद्ध व्यक्ति के द्वारा शिक्षा एवं व्यवस्था संहिता का उद्गमन होना, उसके व्यवहारान्वयन से प्रबुद्ध जनजाति का निर्माण होना उदितोदित क्रम से अर्थात् पुन: परिष्करण, परिमार्जन तथा अनुसंधान पूर्वक संपन्न पाया गया है। इस क्रम में गुणात्मक परिवर्तन ही अभीष्ट रहा है। मौलिक अधिकार का प्रयोग एवं व्यवहार सुलभ होना ही "नीति-त्रय" की उदात्तता है। "नीति-त्रय" संहिता के उद्गमन का मूल उद्देश्य है। इसकी सार्थकता व्यवहार में ही सिद्ध होता है। यही अखण्डता है। प्रत्येक स्तर में मौलिक अधिकार का व्यवहारान्वयन होना ही स्वतंत्रता है। यही अभयता है। जीवन मौलिकता से भिन्न नहीं है। यही सत्यता मानव को जीवन संचेतनानुक्रमानुंषगी व्यवहार करने के लिए प्रेरणा है। यही "कार्यक्रम-त्रय" के उद्गमन का मूल कारण है। जीवन कार्यक्रम विहीन नहीं है। काँक्षा सहित नियति क्रमानुषंगी प्रक्रिया ही कार्यक्रम है। क्रम केवल नियति सहज है। नियति स्वयं में विकास एवं जागृति परम्परा है। नियन्त्रित गति ही नियति है। विकास क्रम में पायी जाने वाली क्रम-प्रणाली अथवा सघन प्रणाली ही नियति-क्रम है। क्रम विकास व जागृति के अतिरिक्त प्रमाणित नहीं है। प्रामाणिकता ही विकास व जागृति की गरिमा है। यह मानव के द्वारा प्रकट होने वाली उपलब्धि है। यह केवल अनुभव, व्यवहार एवं प्रयोग ही है। कार्यक्रम ही संस्कृति, सभ्यता, विधि एवं व्यवस्था का पालनकारी है। संपूर्ण कार्यक्रम का लक्ष्य मूल्योद्घाटन एवं मूल्य वहन है। यही मानव में पायी जाने वाली मौलिकता, मूल्याँकन योग्य योग्यता एवं मूल्यानुभूति योग्य क्षमता है। इसी के निर्वाह में प्रयोग एवं व्यवहार की पाँचों स्थितियों में दश सोपानीय परिवार सभा व्यवस्था के रूप में चरितार्थता है। संपूर्ण कार्यक्रम गुणात्मक परिवर्तन "में, से, के लिए" है। गुणात्मकता गुरुमूल्यन प्रक्रिया है। ऐसी गुरुमूल्यनीयता मानव जीवन में क्रियापूर्णता एवं आचरण पूर्णता पर्यन्त भावी है। मानव में गुणात्मक परिवर्तन का परिचय उनके परस्पर व्यवहार में होता है। **उत्पादन कार्य**, व्यवहार कार्य से संबद्ध है ही। व्यवहार अनुभूति बिना सफल होता नहीं है। अर्थात् व्यवहार मानसिकता, व्यवस्था मानसिकता अनुभव मूलक विधि से जागृति पूर्ण स्थिति है अथवा जागृत मानव सहज मानसिकता है। अनुभूति प्रधानत: मूल्य-त्रय में, से, के लिए है। यही अनुभूति व्यवहारीयता में शिष्टता को उद्गमित करता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि सभी स्तरों के प्रयोगित एवं व्यवहृत मौलिक अधिकार मानव में गुणात्मक परिवर्तन के देयी हैं। अर्थ की सदुपयोगात्मक एवं सुरक्षात्मक क्षमता ही गुणात्मक परिवर्तन का लक्षण है अन्यथा में ह्रास अवश्यम्भावी है। मानव के विकास का देय सामाजिकता है न कि केवल विशाल उत्पादन-विनिमय। सामाजिकता के बिना मानव आश्वस्त एवं विश्वस्त नहीं है। आश्वासन एवं विश्वसन प्रदान करना ही कार्यक्रम-त्रय का उद्देश्य है। इसकी पराभवता संस्कृति एवं सभ्यता को स्थापन-प्रस्थापन एवं संरक्षण-संवर्धन करने में असमर्थता के रूप में स्पष्ट होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि मानव कासर्वोच्च आयाम जो अनुभव है प्रधानत: उसी से प्रमाणित कार्यक्रम-त्रय को सर्वसुलभ बनाने पर ही मानव जन जाति को अनुभव के लिए अनुगमन कराने में समर्थ होता है। प्रमाण

सिद्ध कार्यक्रम ही मानव को प्रमाणित बनाने में समर्थ होता है। प्रमाण अनुभव, व्यवहार एवं प्रयोग से अधिक नहीं है। आर्थिक कार्यक्रम को प्रयोग, प्रमाण, सुरक्षात्मक कार्यक्रम को व्यवहार प्रमाण तथा सदुपयोगात्मक कार्यक्रम को अनुभव प्रमाण प्रधानत: सिद्ध करता है जबकि मूलत: ये तीनों कार्यक्रम मूल्यों पर ही आधारित है। आर्थिक कार्यक्रम शुद्धत: उत्पादन पर आधारित है। उत्पादन का प्रयोग सिद्ध होना अनिवार्य है। प्रयोग सिद्ध पद्धति के बिना उत्पादन-विनिमय सफल नहीं होता जो प्रसिद्ध है। राज्यनैतिक कार्यक्रम शुद्धत: अर्थ की सुरक्षा पर आधारित है। यही उसका लक्ष्य एवं कार्यक्रम भी है। अर्थ की जो व्यवहार एवं व्यवहारिकता है उसी का संरक्षण होना है। परस्पर मूल्यों का आदान-प्रदान होना सर्व देशकाल एवं जन-जाति में दृष्टव्य है। यही व्यवहार है। इसी में मानव, प्रत्येक मानव अपनी व्यवहार-क्षमतापूर्वक त्रिमूल्यों का आदान-प्रदान करने में सीमित है। इससे अधिक व्यवहार सीमा नहीं है। इन्हीं "मूल्य त्रयों" का शोषण, वंचना, प्रवंचना, द्रोह एवं विद्रोह न होने के लिए राज्यनैतिक कार्यक्रम है। इसे चरितार्थ करना ही उसकी सफलता है। सफलता के लिए ही कार्यक्रम को प्रभावशील किया जाना प्रसिद्ध है। तन-मन-धन से अधिक अर्थ मानव में नहीं है। ये क्रम से शिष्ट मूल्य, स्थापित मूल्य एवं वस्तु मूल्य ही है। मानव ही मूल्यों को धारित एवं उद्घाटित करता है। यही सत्यता उसकी सुरक्षा की अनिवार्यता है जो अपरिहार्य है। धर्मनैतिक कार्यक्रम पूर्णतया अर्थ के सदुपयोग पर आधारित है। अर्थ की सदुपयोग परम्परा स्वयं में धर्मनीति है। यह प्रधानत: अर्थ के उपयोग, सदुपयोग एवं वितरण की प्रक्रिया सें संबद्ध है। वस्तु मूल्य का आदान-प्रदान वस्तु व सेवा के रूप में, शिष्ट मूल्य का आदान-प्रदान मुद्रा, भंगिमा व अंगहारपूर्वक वस्तु के अर्पण एवं सेवा के रूप में तथा स्थापित मूल्य का आदान-प्रदान शिष्ट मूल्य सहित व्यंजनीयता के रूप में है। प्रत्येक मूल्य व्यंजनीयता से संबद्ध है ही। व्यंजनीयता ही मानव में तादात्म्य प्रक्रियानुषंगिक शिष्टता को प्रकट करती है। शिष्टता में वस्तु मूल्य समर्पित है ही। इस विश्लेषण से यह निर्णय स्पष्ट होता है कि स्थापित मूल्यों के आनुषंगिक शिष्ट मूल्य एवं शिष्ट मूल्यों के आनुषंगिक वस्तु मूल्य का प्रत्येक संबंधों में व्यवहृत किया जाना धर्मनैतिक कार्यक्रम है। यही विशुद्ध रूप से मानव में वांछित सुख परिपाकात्मक मूल प्रवृत्तियों से संपन्न होता है जिसके लिए ही मानव कुल तृषित है।...**(अध्याय:39, पृष्ठ नंबर: 129-131)**

मानव अनुभव दर्शन

(संस्करण: 2011, मुद्रण: 2016)

- **Not found**

समाधानात्मक भौतिकवाद

(संस्करण: 2009)

- पहले चार समुदायों के संदर्भ में विश्लेषण पूर्वक उनकी स्थिति स्पष्ट की जा चुकी है। इनके अतिरिक्त लोगों को हम आम जनता कहते है। जिनमें पहले, आम जनता में से कुछ लोगों के पास सर्वकालीन **उत्पादन कार्य** हाथ में है। दूसरे कुछ लोगों के पास अर्धकालीन **उत्पादन कार्य** हाथ में हैं। तीसरे कुछ लोगों के पास अल्पकालीन **उत्पादन कार्य** हाथ में हैं। चौथे कुछ लोगों के पास कोई भी **उत्पादन कार्य** हाथ में नहीं है। इन चार स्वरूपों में दिखने वाली आम जनता में से **उत्पादन कार्य** शून्य समुदाय द्वारा अंशकालीन अर्धकालीन या पूर्णकालीन **उत्पादन कार्य** आज की तिथि में धनोपार्जन कार्य की ओर गतिशील होना पाया जा रहा है। इसी प्रकार अंशकालीन **उत्पादन कार्य** अथवा धनोपार्जन कार्य अथवा अर्धकालीन **उत्पादन कार्य** अथवा धनोपार्जन कार्य जिन जिन समुदायों के हाथ में

हैं, वे पूर्णकालीन धनोपार्जन कार्य में व्यस्त होने के लिए गतिशील है। पूर्णकालीन **उत्पादन कार्य** अथवा धनोपार्जन कार्य जिनके पास हैं वे संग्रह कार्य में संलग्न होते दिखाई पड़ रहे हैं। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 24)**

- न्याय पूर्वक सुख और शांति, व्यवस्था पूर्वक शांति और संतोष, तथा अनुभव पूर्वक संतोष और आनंद जीवन में प्रमाणित होता है। प्रत्येक मानव इसे अनुभव कर सकता है। ऐसे अखण्ड समाज- परिवार मूलक व्यवस्था, विश्व परिवार में व्यवहार रूप दे सकता है। व्यवस्था कम से कम 100 से 200 परिवारों के बीच में, अर्थात् 1000 से 2000 जनसंख्या के बीच स्वायत्त विधि से सफल हो सकती है। स्वराज्य की परिभाषा ही हैं-स्वयं का वैभव, स्वयं का स्वरूप मानव, मानव के समान वस्तु जीवन है। जीवन का संबोधन "स्वयं" अथवा "स्व" है। इस प्रकार जीवन का वैभव ही राज्य है। अस्तु, जीवन का वैभव- स्वराज्य। जीवन वैभव जागृति की अभिव्यक्ति हैं। जागृति का अर्थ सर्वतोमुखी समाधान एवं प्रामाणिकता है। इसका व्यवहार रूप परिवार परंपरा में समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व है। यही एक परिवार से विश्व परिवार तक प्रमाणित होने की वस्तुएँ हैं। इसके क्रियान्वयन क्रम में सर्वमानव के लिए न्याय सुलभता, उत्पादन सुलभता, विनिमय सुलभता लक्ष्य है। इसकी अक्षुण्णता के लिए शिक्षा-संस्कार, स्वास्थ्य-संयम सहज सुलभ रहेगा। इसको ही ग्राम स्वराज्य व्यवस्था का रूप देने के क्रम में दस सदस्यीय परिवार स्वयं अपने एक परिवार के प्रतिनिधि को, पहचानने की व्यवस्था रहेगी। हर दस (10) परिवार से एक एक सदस्य "परिवार समूह सभा" के लिए निर्वाचन पूर्वक पहचान करेगा। ऐसे दस परिवार समूह सभा अपने में से एक एक व्यक्ति को ग्राम परिवार सभा के लिए निर्वाचन पूर्वक पहचान करेगा। ग्राम सभा में समाहित दस (10) व्यक्तियों में से सभा प्रधान को पहचाने रहेंगे। ग्राम सभा, "स्वराज्य कार्य संचालन" समितियों को, मनोनीत करेगी। ऐसी समितियाँ पाँच होगी-
  1. शिक्षा-संस्कार समिति
  2. न्याय सुरक्षा समिति
  3. स्वास्थ्य संयम समिति
  4. **उत्पादन कार्य** समिति
  5. विनिमय कोष समिति

  इन सबके अपने-अपने कार्य परिभाषित, व्याख्यायित रहेंगे। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 181-182)**

- मानवीयता पूर्ण व्यवहार, व्यवस्था, संविधान, शिक्षा-संस्कार के साथ-साथ आहार, विहार, व्यवहार, व्यक्तित्व और प्रतिभा में संतुलन को प्रमाणित करने के लिए अति आवश्यक है। व्यवहार, मानवीय आचरण के रूप में, व्यवस्था में भागीदार होने के रूप में स्पष्ट व नियंत्रित, संतुलित हो जाता है। व्यवस्था में भागीदारी, व्यवहार में संबंधों व मूल्यों को निर्वाह करना, व्यवस्था के लिए पूरक होता है। व्यवस्था में भागीदारी प्रधानत: न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य** और विनिमय-कोष कार्यों में भागीदारी हैं। इसके अतिरिक्त भी प्रत्येक मानव आहार-विहार करता ही है। **(अध्याय:9 (1), पृष्ठ नंबर: 200)**
- **न्याय:-** संबंध, मूल्य, मूल्यांकन, उभयतृप्ति है। मौलिकता न्याय का स्वरूप सहज रूप में ही संबंध मूल्य और मूल्यांकन ही है। यह मानव संबंध, नैसर्गिक संबंध और उत्पादन सबंध के रूप में स्पष्ट होता है। मानव संबंध व्यवहार सूत्र का स्वरूप हैं। नैसर्गिक संबंध पूरकता सहज सत्यता हैं। उत्पादन संबंध उपयोगिता सहज सबंध हैं। इनमें उपयोगिता को प्रमाणित करने के लिए प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन और कला मूल्य की स्थापना और उसके मूल्यांकन के रूप में हैं। आवर्तन विधि संपन्न विनिमय प्रक्रिया पूर्वक व्यवहारिक होना पाया जाता हैं मानव संबंध समाज रचना का आधार हैं। परिवार मूलक विधि से समाज रचना निरंतर सहज हैं। मानवत्व ही परिवार संबंधों की तृप्ति का सूत्र है। परिवार ही विश्व परिवार के रूप में अखण्ड समाज हैं। परिवार रचना के साथ व्यवस्था की अभिव्यक्ति एक अनिवार्य स्थिति हैं। व्यवस्था सहज अभिव्यक्ति क्रम में न्याय, विनिमय और उत्पादन प्रधान प्रक्रिया हैं। न्याय प्रक्रिया में स्थापित एवं शिष्ट मूल्यों का मूल्यांकन मौलिक हैं। विनिमय प्रकिया में श्रम मूल्यों का मूल्यांकन मौलिक हैं। उत्पादन कार्यों में अथवा उत्पादन विधि में श्रम नियोजन मौलिक हैं। इस प्रकार मौलिकता त्रय पूर्वक सार्वभौमिकता और अक्षुण्णता सहज होता है। इसी अभिव्यक्ति के लिए मानवीय शिक्षा-

संस्कार और स्वास्थ्य-संयम आवश्यकीय कार्यक्रम हैं। इसी के आधार पर सार्वभौम व्यवस्था और अखण्ड समाज रचना के लिए, मानव का जागृत होना पाया जाता है। **(अध्याय:9(4), पृष्ठ नंबर: 247-248)**

- **मानव में समाधान अस्तित्व सहज सह-अस्तित्व में अनुभव व प्रमाण हैं** - मानव सह-अस्तित्व में इन अंतर्सम्बन्धों को जानने, मानने, पहचानने, निर्वाह करने के रूप में समाधानित होता हैं। पदार्थावस्था से प्राणावस्था; पूरकता, उदात्तीकरण और प्राणावस्था से पदार्थावस्था के अंर्तसम्बन्ध पूरकता और समृद्धि के रूप में हैं, यह समाधान है। इसका दृष्टा मानव ही है। प्राणावस्था से जीवावस्था की शरीर रचनाएँ प्राण सूत्र विधि से रचना सूत्र विधि में उदात्तीकरण तथा बीज परंपरा के स्थान पर वंश परंपरा की स्थापना एवं उसकी निरंतरता दिखाई पड़ती हैं। कोई यंत्र ऐसा देखने को नहीं मिला कि अभी तक अथक प्रयास द्वारा बीजों से गुणात्मक परिर्वतन कर सका हो। मात्रा, तादाद में रूप में; गुणवत्ता प्रयोजनों के अर्थ में सार्थक हैं। स्तुषी पुष्टि हुई, इससे मात्रात्मक परिवर्तन ही हुआ न कि गुणात्मक पुष्टि। जबकि सारा प्रयास गुणात्मक परिवर्तन के लिए ही रहा।
  इस उद्देश्य से प्राप्त किये गये बीजों से यही प्रमाणित होता हैं कि इसकी कोई वंश परंपरा सिद्ध नहीं होती हैं। जहाँ तक मोटाई की बात हैं, या मात्रा की बात हैं, यह घटता-बढ़ता रहता हैं। इस प्रकार सारा परिश्रम वंचना-प्रवंचनाएँ, व्यापार विधि से उन्नत बीज, उन्नत खाद नाम से किसानी पर व्यय अधिकाधिक बढ़ता गया। बड़े-बड़े उद्योग मोटे होते गए, किसान अपने घर को सफेद रंग नहीं दे पाता। कपड़ों में सफेदी ला नहीं पाता, गाड़ी-घोड़ा लाना तो दूर की बात रही। किसानों में वही किसान चतुर माने जाते हैं जो किसानों के अतिरिक्त व्यापार विधि को अपना चुके हैं। इसलिए आहार प्रयोजन के लिए सही **उत्पादन कार्य** किसानी ही हैं। किसान सही समृद्धि को अनुभव कर सकें, ऐसी व्यवस्था को पहचानना आवश्यक हैं। **(अध्याय:9(8), पृष्ठ नंबर: 284-285)**
- प्रत्येक परिवार में **उत्पादन-कार्य** संपन्न होता हुआ देखने को मिलता हैं अथवा इसकी आवश्यकता इस धरती पर सभी स्थितियों में प्रमाणित है। **(अध्याय:9(10), पृष्ठ नंबर: 309)**
- मानव सहज रूप में जागृत होना चाहता ही है। जागृति पूर्वक ही उत्पादन कार्यों में प्रदूषण निवारण के उपाय भी समझ में आते हैं और **उत्पादन कार्य** संयत हो जाता है। संयत होने का तात्पर्य उत्पादित वस्तुओं में गुणवत्ता की मजबूती श्रेष्ठता, तादाद, उपयोगिता, सदुपयोगिता और प्रयोजनीयता के अर्थ में है। इसकी सार्थकता के स्वरूप में व्यवस्था और व्यवस्था में भागीदारी, नियंत्रण का ध्रुव बनती हैं, इसलिए नियंत्रण संभव हैं। ऐसी स्थिति अखण्ड समाज सूत्र से सूत्रित रहेगी और उसकी अक्षुण्णता मानव परंपरा सहज जागृति के आधार पर सफल सार्थक रहेगी। **(अध्याय:9(10), पृष्ठ नंबर: 322)**
- व्यवहार प्रमाण के आधार पर ही सार्वभौम व्यवस्था और अखण्ड समाज प्रमाणित हो पाता है। इसलिए आवश्यकताएँ सीमित अथवा संयत होती हैं। वर्तमान में विश्वास ही व्यवस्था का प्रमाण हैं। इसलिए भी मानव का संयत होना सहज होता हैं। मानव का संयत होना ही आवश्यकताओं को संयत अथवा सीमित होना हैं। यही समझदारी की मूल वस्तु हैं। ऐसी समझदारी के आधार पर ही सीमित आवश्यकताओं के आधार पर **उत्पादन कार्य** संयत होना, विनिमय कार्य लाभ-हानि से मुक्त विधि से संपन्न होना, देखने को मिलता हैं। फलत: लाभोन्माद संयत होना सहज हैं। कोई एक उन्माद संयत होने के आधार पर, अन्य दोनों उन्माद संयत हो जाते हैं। लाभोन्माद, कामोन्माद और भोगोन्माद ही मानव परंपरा में अव्यवस्था का कारक एवं द्योतक हैं। न्याय सुलभता से भोगोन्मादी और कामोन्मादी प्रवृत्तियाँ संयत हो जाती हैं। समग्र व्यवस्था में भागीदारी, सर्वतोमुखी समाधान और प्रामाणिकता के आधार पर सहज ही लाभोन्माद का संयत होना संभव है। इस प्रकार तीनों उन्माद शांत होकर, सार्वभौम व्यवस्था, अखण्ड समाज परंपरा के उत्सव में अथवा नित्य उत्सव में विलीन हो जाते हैं। **(अध्याय:9(10), पृष्ठ नंबर: 326-327)**
- निर्भमता का प्रमाण मानवत्व सहित व्यवस्था, समाज और सामाजिकता है। समाज और सामाजिकता में, मानव से मानव को विश्वास सहज ही होता हैं। क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति का व्यवस्था और व्यवस्था में भागीदार होना विश्वास का प्रमाण हैं। ऐसी व्यवस्था में प्रमाणित होना, जागृति और जागृति प्रकरण प्रमाण रूप में होता हैं। अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था ही जागृति का द्योतक है।

उक्त तथ्यों से यह स्पष्ट हो गया कि जीने की कला, विचार शैली और अनुभव बल के आधार पर ही, मानव परंपरा अपनी जागृति का साक्ष्य प्रस्तुत कर पाती हैं। भविष्य के प्रति आश्वस्त एवं वर्तमान में प्रमाण रूप में अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था के रूप में वैभवित हो पाता है। यही मानव का लक्ष्य हैं। इस लक्ष्य के संदर्भ में ही आवश्यकता, उत्पादन के लिए उद्योग तथा संबंध और संतुलन को बनाये रखना सुलभ हो जाता हैं। मुख्य बात यह है कि -

1. व्यवस्था में मानव संयत होता हैं, जो जागृति का प्रमाण है।
2. परिवार मानव की आवश्यकता संयत होती हैं, यह जागृति का प्रमाण हैं।
3. प्रत्येक परिवार आवश्यकता से अधिक उत्पादन करता हैं, यह जागृति का प्रमाण है।
4. प्रत्येक परिवार अथवा प्रत्येक अवस्था में परिवार समृद्धि का अनुभव करता हैं, यह जागृति का प्रमाण है।

इस तथ्य को ऐसा समझा जा सकता हैं कि जब परिवार अपनी स्वायत्तता की परिभाषा में वर्तमान होता हैं, तब यह परस्पर संबंधों को पहचानता हुआ, मूल्यों को निर्वाह करता हुआ और मूल्यांकन करता हुआ देखने को मिलता हैं। साथ ही परिवार में अपनाया हुआ **उत्पादन कार्य** में भागीदार होता हुआ देखने को मिलता है। इस क्रम में आवश्यकता से अधिक उत्पादन, प्रमाणित होता हैं। इसके मूल में यह भी तथ्य प्रभावशील रहता हैं कि जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में प्रत्येक मानव वैभवित होने के कारण, जीवन शक्तियाँ अक्षय होने के कारण आवश्यकताएँ सीमित होने के कारण आवश्यकता से अधिक उत्पादन होता है। फलत: समृद्धि का अनुभव होना संभव है। **(अध्याय:10, पृष्ठ नंबर: 327-329)**

- मानव जागृत परंपरा सहज रूप में जीने के क्रम में शरीर को निरोग रखना भी एक कार्य है। इस क्रम में जो संक्रामक, आक्रामक विधियों से जो कुछ भी परेशानियाँ देखने को मिलती हैं, उसके निवारण के लिए सर्वत्र सहज रूप में पाई जाने वाली जड़ी-बूटी आदि घरेलू वस्तुओं से बहुत सारे रोगों को ठीक करने का अधिकार हर परिवार में स्थापित कर लेना सहज है। क्योंकि परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था क्रम में स्वास्थ्य-संयम कार्यक्रम प्रत्येक परिवार का एक दायित्व हैं। इस क्रम में पवित्र आहार पद्धति एक प्रमुख कार्यक्रम रहेगा। इसे ध्यान में रखकर कृषि कार्य के लिए जो समझदारी चाहिए उसको भी स्वीकृति करना आवश्यक हो जाता हैं। इस क्रम में धरती का उर्वरक संतुलन को बनाए रखना एक आवश्यकता है। इसमें मानव का दायित्व भी बनता हैं। धरती, अनाज **उत्पादन-कार्य**, उर्वरकता का संतुलन स्वाभाविक रूप में एक-दूसरे से आवर्तनशील कार्य हैं। इस आवर्तनशीलता में पहले भी संतुलन का जिक्र किया जा चुका है। इसमें मुख्य बात यही है कि धरती में उपजी हुई संपूर्ण हरियाली, दाना को निकालने के उपरान्त सभी घास, भूसी, जानवर खाकर गोबर गैस के अनंतर खाद बनकर खेतों में समाने की विधि को अपनाना चाहिए। अन्यथा घास, भूसी ज्यादा होने की स्थिति में अच्छी तरह से सड़ाकर खाद बनाना चाहिए। यह खेतों में डालना चाहिए। यह विधि सर्वाधिक कास्तकारों के यहाँ प्रचलन में हैं ही। इसकी तादाद बढ़ाने की आवश्यकता है। जैसे-जैसे खेत अधिक होता हैं वैसे-वैसे खाद की मात्रा भी अधिक होना आवश्यक है। कीटनाशक या कीट नियंत्रक कार्यों को भी कास्तकारों को अपने हाथों में बनाए रखना चाहिए जिससे पराधीनता की नौबत न आए। **(अध्याय:9(10), पृष्ठ नंबर:330-331)**
- हर परिवार में आवश्यकता से अधिक उत्पादन होने के आधार पर प्रत्येक परिवार में शरीर पोषण, संरक्षण और समाज गति के अर्थ में निश्चित **उत्पादन-कार्य** विधिवत् निर्धारित रहना संभव हो जाता हैं। फलस्वरूप उत्पादन सुलभता का अनुभव होना सहज हैं। इस प्रकार न्याय सुलभता, उत्पादन सुलभता, विनिमय सुलभता सहज आवर्तनशील वैभव, स्वयं नित्य उत्सव के रूप में स्वराज्य व्यवस्था को प्रमाणित कर देता हैं। ऐसे उत्सव के अभिन्न अंगभूत मानवीय शिक्षा-संस्कार और स्वास्थ्य संयम सहज कार्यक्रम मानव कुल में व्यवहृत होता ही रहेगा। **(अध्याय:9(10), पृष्ठ नंबर: 338)**
- मानव जड़-चैतन्य-प्रकृति का संयुक्त साकार रूप है। मानव शरीर रचना की परंपरा शरीर संयोग से संपन्न होना ज्ञातव्य है। जीवन अपनी जागृति को प्रमाणित करने की अनिवार्यता वश, मानव शरीर को संचालित करता है

जबकि जीवों के शरीर को भी जीवन ही संचालित करता है। इसमें उद्देश्य वंशानुषंगीय कार्यकलापों को वर्तमान में प्रमाणित करता रहता है। यही मानव और जीवों के उद्देश्य में भेद है। मानव परपंरा में जीवन प्रमाणित होता है, जबकि जीवावस्था में शरीर सहज क्रियाकलाप प्रमाणित होता है। जीवन का उद्देश्य जागृति है। जागृति सहज व्याख्या अस्तित्व में जागृति सहज ज्ञान, दर्शन और आचरण ही है। मानव जब कभी भी जागृति सहज प्रमाणों को प्रस्तुत करेगा, तब इन्हीं तीन बिंदुओं में अपने को व्याख्यायित करेगा। दर्शन के अर्थ में दृष्टा और दृश्य दोनों समाहित है। दृष्टा का अर्थ समझने वाला है और समझा हुआ है। मानव ही दृष्टा है। दृष्टा रूपी मानव में छ: (6) दृष्टियाँ होती हैं। जिसमें से न्याय, धर्म, सत्य से नियंत्रित प्रिय, हित और लाभ (समृद्धि) दृष्टियाँ जागृत मानव में प्रमाणित होती है। भ्रमित मानव में केवल प्रिय, हित और लाभ दृष्टियाँ प्रकाशित होती है। जीवन जागृति के अर्थ में ज्ञान यही है -जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन ज्ञान और मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान। जीवन-ज्ञान और अस्तित्व दर्शन के फलस्वरूप, जागृति सार्वभौम व्यवस्था विधि से आचरण, कार्य, व्यवहार के रूप में प्रमाणित हो पाता है। इसी के साथ, जागृतिपूर्वक जो कुछ भी **उत्पादन कार्य** करते हैं और करने के लिए प्रयत्न करते हैं, वह सब सह-अस्तित्व सहज मानसिकता सहित ही संपन्न होना देखने को मिलता है। फलस्वरूप मानव सह-अस्तित्व सहज **उत्पादन कार्यकलापों** को योजनापूर्वक अपनाता रहेगा। इसलिए नैसर्गिक संबंधों का निर्वाह, मूल्यों का निर्वाह और मूल्यांकन सहज हो पाएगा। मानव सह-अस्तित्व अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था के रूप में ही प्रमाणित हो पाता हैं। इसलिए मानव संबंधों का पहचान, मूल्यों का निर्वाह व मूल्यांकन सहज ही संपन्न होगा। इन दोनों स्थितियों के फलस्वरूप प्राकृतिक ऐश्वर्य पर जीवन और शरीर की संयुक्त विधि से नियोजित श्रम वस्तु में स्थापित उपयोगिता व कला मूल्य के आधार पर मूल्यांकन होना सहज हो जाता हैं, यही मूलत: प्रतीक का मुद्रा का विकल्प है। **(अध्याय:9(11), पृष्ठ नंबर: 348-350)**

व्यवहारात्मक जनवाद

(संस्करण: 2009, मुद्रण: 2017)

- अतएव संवेदनशील चर्चा आदि मानव ने जब से शब्दो द्वारा या भाषा द्वारा एक दूसरे के लिए निश्चित संकेतों को प्रसारित करना शुरू किया, तब से अभी तक इन्द्रिय सन्निकर्षात्मक अथवा संवेदनशील चर्चाओ को कहते-सुनते, लिखते-पढ़ते ही आया है। अन्य चर्चाए जो कुछ भी है, इन्द्रिय सन्निकर्ष के सीमा में ही स्वर्ग-नर्क आदि रोमांचक चर्चा, परिकथा, उपन्यासो को गढ़ा हुआ दिखाई पड़ती है। यह भी मेघावियो को विदित है, इस प्रकार जन प्रवृति इन्द्रिय सन्निकर्ष और उससे सम्बंधित घटनाओ के वर्णन में ही परिसीमित रहना सुस्पष्ट है। इस धरती पर आज की स्थिति में 600-700 करोड़ आदमी विद्यमान है। हर आदमी ज्यादा से ज्यादा जीने के लिए इच्छुक, कम से कम **उत्पादन कार्य** में भाग लेने का इच्छुक, अधिकाधिक सुविधा-संग्रह को एकत्रित करने के लिये इच्छुक, अतिभोग बहुभोग के लिए इच्छुक होता हुआ देखने को मिल रहा है। सन 1950 से हर दशक में इस मानसिकता से सम्पन्न व्यक्तियो की संख्या में वृद्धि होती हुई बीसवीं शताब्दी के इस दशक में 45 से 50% व्यक्ति इस प्रवृति में आ चुके हैं। इसमें अपने सार्थकता वैभव और महिमा की पहचान बनाने के लिये प्रयत्नशील होते हुए देखने को मिल रहे है। इसी के साथ साथ यह भी एक परिस्थिति जन्म चुकी है कि अधिकांश लोगो ने **उत्पादन कार्य** में भागीदारी की आवश्यकता को मान लिया है। जबकि इस स्थिति में मानव के लिए **उत्पादन कार्य** के लिए प्रवृति घटती जा रही है। अतएव आज की स्थिति में कुछ विडम्बनाएँ जनचर्चा के रूप में समावेशित हुई है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 30)**
- आज की स्थिति में सम्पूर्ण शिक्षा, नौकरी, व्यापार, प्राद्यौगिकीय प्रवृत्ति के रूप में प्रवर्तित होता हुआ देखने को मिल रहा है। प्राद्यौगिकीयता में सभी **उत्पादन कार्य** जहाँ तक जनोपयोगी है वह सब सार्थक होना स्पष्ट है। इन सभी उत्पादनीयता के पक्ष में जनसंवाद, हर उत्पादन की पवित्रता, सटीकता, उपयोगिता, सदुपयोगिता के अर्थ में संवाद की आवश्यकता है ही। जनसंवाद एक अनुस्युत क्रिया है यह मूलत: आज भी आगे भी मनाकार को साकार करने के अर्थ में है। इसी क्रम में विविध प्रयास, शोध योजनाएँ, प्राद्यौगिकी, उत्पादन के अर्थ में जनकार्य स्थली तक पहुंच चुका है। इसमें बहुत सारे लोग भागीदीरी कर ही रहे है। प्राद्यौगिकी की नौकरी, व्यापार ये सभी लाभोन्मादिता के रूप में उन्मुख, प्रवर्तित, कार्यरत होता हुआ देखने को मिलता है। यही मुख्य मुद्दा है जिसको देखने वाले सभी इन तीनो कार्यो में नहीं है या ये तीनो कार्य मिला नहीं है ऐसे सभी इनके प्रवृतियों को देखकर अपने गरीबी को अधिमूल्यन करते हुए त्रस्त होता हुआ देखने को मिलता है। जनसंवाद में होना क्या चाहिये ? इस पर निष्कर्षो को निकालने की आवश्यकता है। साथ में उपर कहे हुए विधाओ के अनुसार विश्लेषण आवश्यक है। इस प्रकार जनसंवाद विश्लेषण और निष्कर्ष के रूप में सार्थकता के अर्थ में प्रेरक होना आवश्यक है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 35-36)**
- मानवाकांक्षा के सार्थकता के अर्थ में जनसंवादो की सार्थकता को पहचानने की आवश्यकता है। इसमें सर्वप्रथम व्यवहार में ही सार्थक होने की बात आती है। व्यवहार में सार्थक होने के लिए संवाद में इस तथ्य को पहचाना जा सकता है कि परस्परता में ही व्यवहार होता है और प्राकृतिक ऐश्वर्य और मानव की परस्परता में **उत्पादन कार्य** संपन्न होता है

  व्यवहार कार्यकलाप में, **उत्पादन कार्यकलाप** में अनेकानेक विधाएँ जनसंवाद के लिए विषय बन जाती हैं। संबंध एक मुद्दा है यह सहअस्तित्व में ही प्रमाणित होना पाया जाता है। धरती, हवा, पानी, जंगल, पहाड़ वन, वनस्पति, अन्न, औषधियो के साथ, परस्पर, सहअस्तित्व होना पाया जाता है। इतना ही नहीं सूरज, चाँद, सौर

व्यूह, आकाश गंगा के साथ मानव का सहअस्तित्व है ही। इन सभी विधाओ में मानवसंवाद अपने लक्ष्य के अर्थ में होने की आवश्यकता है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 39)**

- हर राज्य राष्ट्रीय पर्व दिवस की पावन बेला में राज्य की अखंडता सार्वभौमता, अक्षुण्णता का नारा अथवा जिक्र करते ही हैं। जबकि सन 2000 के पहले दशक तक ऐसा कोई ऐसा राज्य अथवा धर्म नहीं हुआ जिसका अन्य धर्मों के साथ विरोध न हो, अथवा जो सबके लिए स्वीकार्य हो, ऐसा कोई धर्म ग्रंथ तैयार हो नहीं पाया। सभी अपने ढंग से श्रेष्ठता का दावा करते ही हैं। हर श्रेष्ठता की कसौटी है, जो सर्वमान्य स्वीकृत हो जिसके फलन में समाधान, समृद्धि, अभय सह अस्तित्व के रूप में प्रमाणित हो, स्वीकृत हो, और व्यवस्था के रूप में मानवीय शिक्षा-संस्कार, न्याय- सुरक्षा, परिवार की आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य**, विनिमय कोष, (लाभ हानि मुक्त) और स्वास्थ्य- संयम कार्य रूप में प्रमाणों का वर्चस्व वर्तमान हो। इस प्रकार अखंड समाज, सार्वभौमता का प्रयोजन स्पष्ट हो जाता है। इन प्रयोजनों के साथ ही निरंतरता का वैभव होना पाया जाता है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 44)**
- जागृति स्वयं में समझदारी का अभिव्यक्ति संप्रेषणा प्रकाशन ही समाधान है। समझदारी ही समाधान है। समाधान स्वयं सुख होना स्पष्ट किया जा चुका है। इस प्रकार संवाद विधि से स्पष्ट होता है कि मानव सन 2000 तक जागृति क्रम में ही जिया। जागृति की अपेक्षा बनी रही और जागृति के प्रस्ताव के रूप में मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद मानव के समक्ष उपस्थित हुआ। इससे यह स्पष्ट हो गया जीव संसार के सदृश्य मानव शरीर स्वस्थता के आधार पर जीने जाते हैं तो शरीर स्वस्थता का प्रयोग भोग और संघर्ष व युद्ध में ही होता है। अधिकाधिक उत्पादन – कार्य भी भोग और युद्ध के लिए ही हो रहे हैं। यह सभी समुदायगत मानव का स्वरूप है जबकि मानव सुखी होना चाहता है। युद्ध और भोग विधि और सुखी निरंतरता नहीं हो पाई। इसलिए मानव व्यवस्था में जीने में सफल नहीं हो पाया। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 47-48)**

- मानव, मानव के साथ जो भी करता रहा उसका व्यवहार नाम हुआ और मानवेतर प्रकृति के साथ जो किया वह सब **उत्पादन कार्य** कहलाया। व्यवहार व **उत्पादन कार्यो** का निश्चित, चिन्हित क्षेत्र स्पष्ट हो गया है। जितनी भी समस्याएँ उत्पादन विधा में बनी रही उनका निराकरण उपाय खोजते रहे और मानव की आवश्यकताओं के आधार पर वस्तुओं का निर्माण कार्य किये जैसे आहार, आवास, अलंकार, दूरश्रवण, दूरदर्शन, दूरगमन वस्तुओं का मानव निर्बाध रूप से उत्पादन करने योग्य हो गये। इस क्रम में मानव अपने आश्वस्ति की जगह पहुंचने तक इन प्रौद्योगिकी विधाओं में प्रयुक्त ईंधन से उर्जा ग्रहण किये और उसके अवशेष धरती, जल और वायु को प्रदूषित कर दिया। वायु प्रदूषण का प्रबल प्रभाव धरती के वातावरण के शतांश में से तीस अंश को घटा दिया अथवा धरती के जितनी ऊंचाई में वातावरण फैला रहा, उसमें से सौ में से तीस भाग घट गया। यह सब विज्ञान विधा से प्रस्तुत वक्तव्य है। इस विधि से घटित सम्पूर्ण प्रदूषण मानव त्रासदी का प्रधान कारण हो गया है। इसमें से प्रधान कारण ईधन अवशेष ही रहा। इससे अनेक विपदाएँ धरती के सिर पर मँडराने लगी, इसके फल स्वरूप धरती ही ताप ग्रस्त हो गई। धरती का ताप विगत दशक के मध्यकाल तक शान्त रहा अर्थात पहले जैसा था वैसा ही रहा, अर्धदशक के बाद ताप बढ़ने के संकेत विशेषज्ञो को मिलने लगे। इसी बीच नदी, नाला, तालाब का पानी मानव उपयोगी नहीं रहा। फसल की स्वस्थता के भी प्रतिकूल हुई, फसल भी रोगी हुई। ऐसे प्रदूषित आहार से मानव कुल को अनेक प्रजाति के रोग पीड़ाएँ हो गई। मानव के लिए समुद्र के अतिरिक्त जो क्षेत्रफल है वह कम हुआ। इसी क्रम में धरती पर वन वनस्पतियाँ रही उसका सर्वाधिक शोषण होता ही रहा। आगे चलकर खनिजो के दोहन से धरती असंतुलित होने लगी। यह असंतुलन अपने आप में सर्वाधिक खतरनाक होना पाया जा रहा है। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 62)**
- आवश्यकता पर जब नजर डाली गई कृषि सर्वप्रथम आवश्यकता है। मानव कुल को सर्वप्रथम आश्वासन, इस धरती पर कृषि में सफल होने के आधार पर ही घटित हुई है। आज भी कृषि उत्पादन सर्वश्रेष्ठ सर्वाधिक उपयोगी है। इसलिए इसकी परम आवश्यकता है। कृषि सम्पदा अपने में आश्वस्त रहने के लिए अर्थात कृषक आश्वस्त विश्वस्त रहने के लिए धरती के साथ उर्वरकता, जल संसाधन, बीज परंपरा और ऋतु कालीन कीट नियंत्रण,

औषधियों का ज्ञान और कर्म अभ्यास सम्पन्न रहना आवश्यक है। तभी कृषक कृषि करने के विश्वास को बनाए रख पाता है। आज की स्थिति में मानव लाभकारिता के आधार पर कृषि कार्य करने की सोचता है। जबकि कृषि समृद्धिकारी है। इसके आधार पर कृषि को पहचानने की आवश्यकता है। कृषि को लाभ हानि मुक्त समृद्धकारी वस्तु के रूप में स्वीकारने की जरूरत है। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 63)**

- व्यवहार व्यवस्था का तात्पर्य अथवा समाज व्यवस्था का तात्पर्य मानव में, से, के लिए लक्ष्य समेत जीने की विधि, विधान, कार्य और व्यवहार ही है। व्यवहार विधि संबंधो के आधार पर मूल्यों के निर्वाह करने के दायित्व पर निर्भर किया जाता है। इसके लिए जो क्रमबद्धता अर्थात निर्वाह के लिए जो क्रम बद्धता होती है यही विधान है। इन विधि विधान के आधार पर सर्वप्रथम स्वस्थ मानसिकता की पहचान, निर्वाह, मूल्यांकन विश्वास का मूल आधार होता है। स्वस्थ मानसिकता जागृत मानसिकता होती है। जागृत मानसिकता अनुभवमूलक मानसिकता है। जागृतिपूर्ण मानसिकता अपने में मानवीयता, देव मानवीयता, दिव्य मानवीयता को प्रमाणित करने के क्रम में उद्धत रहती ही है। मानवीयता, देव मानवीयता, में परिवार और समाज व्यवस्था मानवीयता पूर्ण आचरण सहित प्रमाणित होना बनता है। इसी क्रम में दिव्य मानवीयता समग्र व्यवस्था में भागीदारी पूर्वक स्वतंत्रता, स्वराज्य को प्रमाणित करने में सार्थक हो जाती है। स्वतंत्रता, स्वराज्य सह अस्तित्व विधि से वैभवित होते है। स्वराज्य व्यवस्था में स्वाभाविक विधि से मानवीय शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य**, विनिमय-कोष, स्वास्थ्य-संयम कार्य और व्यवस्था अपने आप में निर्वाह होते है। ऐसे स्वराज्य व्यवस्था परिवार मूलक विधि से विश्व परिवार व्यवस्था तक दश सोपानीय विधि से सार्थक हो जाते है। हर स्थितियों में सामान्य रूप में 10-10 समझदार व्यक्तियों की एक सभा सम्पन्न होती है। एक परिवार में 10 समझदार व्यक्ति होते हैं। ऐसे 10 व्यक्तियों में से एक व्यक्ति परिवार व्यवस्था के अतिरिक्त और सोपानीय व्यवस्था में भागीदारी के लिए निर्वाचित रूप में प्रस्तुत होना बनता है। ऐसे व्यक्ति को हर परिवार में पहचान लेना एक स्वाभाविक प्रक्रिया रहता ही है। **(अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 83)**
- दरिद्रता का तात्पर्य बौद्धिक रूप में समझदारी में विपन्नता, भौतिक समृद्धि होने में विपन्नता, समाधानित होने में विपन्नता, वर्तमान में विश्वास (अभयता) में विपन्नता, सहअस्तित्व में विपन्नता, व्यवस्था में भागीदारी करने में विपन्नता, **उत्पादन कार्य** करने में विपन्नता, न्याय-सुरक्षा में विपन्नता, स्वास्थ्य-संयम में विपन्नता, उपकार कार्यो में विपन्नता ये सभी विपन्नताएँ मानव को दरिद्र बनाने में समर्थ है। इन सभी प्रकार की विपन्नताओं से मुक्ति समझदारी से ही है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 87)**
- हर मानव स्वराज्य स्वतंत्रता चाहता ही है। स्वतंत्रता का स्वरूप यही है :-
  - स्वयं में विश्वास करने में स्वतंत्रता
  - श्रेष्ठता का सम्मान करने में स्वतंत्रता
  - प्रतिभा को लोकव्यापीकरण में स्वतंत्रता
  - व्यक्तित्व को प्रमाणित करने की स्वतंत्रता
  - उत्पादन में स्वावलंबी होने की स्वतंत्रता
  - व्यवहार में सामाजिक होने की स्वतंत्रता

  यही छः विधा में स्वतंत्रता है इसमें निष्णात होने के फलस्वरूप:-

  - मानवीय शिक्षा कार्य में स्वतंत्रता
  - न्याय सुरक्षा कार्य में स्वतंत्रता
  - **उत्पादन कार्य** में स्वतंत्रता
  - विनिमय कार्य में स्वतंत्रता
  - स्वास्थ्य-संयम कार्य में स्वतंत्रता

स्वयं स्फूर्त विधि से सम्पन्न होती है। इनमें हमें पारंगत होना है प्रमाणित होना है यही स्वतंत्रता का वैभव है। स्वतंत्रता के साथ स्वराज्य, स्वराज्य के साथ स्वतंत्रता अविभाज्य है। परिवार संबंध, मानव संबंध, प्राकृतिक संबंधो में न्याय और संतुलन प्रमाणित करने में स्वतंत्रता बनी ही रहती है। **(अध्याय: 6, पृष्ठ नंबर: 91)**

- मानवीय शिक्षा में कर्म दर्शन का अध्ययन कराया जाता है जिसमें कायिक, वाचिक, मानसिक, कृतकारित, अनुमोदित भेदों से हर मानव को कर्म करने की सत्यता को बोध कराया जाता है। इससे मानव का विस्तार समझ में आता है। इससे स्वयं में विश्वास का आधार बनता है। मानसिक रूप में जितनी भी क्रियाएँ होती है वे सब कायिक और वाचिक मानसिक विधि से कार्यरूप में परिणित होती है। फलस्वरूप उसका फल परिणाम होता है फल परिणाम के आधार पर समाधान या भ्रमवश समस्या का होना पाया जाता है। जागृत परम्परा में किसी भी प्रकार की समस्या का कायिक या वाचिक मानसिक विधि से निराकरण स्वयं से ही निष्पन्न होना पाया जाता है। इस तरह से स्वायत्तता का प्रमाण मिलता है। स्वायत्तता अपने में सर्वतोमुखी समाधान सम्पन्नता ही है। जहाँ कहीं भी स्पष्ट रूप में देखने को मिलेगा समस्या का निराकरण स्वयं में ही हो जाने को स्वायत्तता बताई गयी है। कार्य का स्वरूप नौ प्रकार से बताया गया है। यह **उत्पादन कार्य** ,व्यवहार कार्य और व्यवस्था कार्य में प्रमाणित होना देखा गया है। सभी कार्य इन तीन तरीकों से ही सम्पन्न होना देखा गया है। इन सभी कार्यो का उद्देश्य एक है मानवाकांक्षा को सफल बनाना। यही मानव लक्ष्य होने के आधार पर कर्मतंत्र, व्यवहार तंत्र, समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने का तंत्र ये तीनो तंत्र मानव लक्ष्य को प्रमाणित करना ही है। इसी का नाम कर्मदर्शन है। कर्मदर्शन का सम्पूर्ण स्वरूप अपने में मानव जितने प्रकार के कार्य करता है, उसकी सार्थकता क्या है, कैसे किया जाये। इन तीनो विधा में अध्ययन कराता है। इससे मानव जाति मार्गदर्शन पाने की अथवा व्यवस्था में जीने की प्रेरणा पाना एक देन है। अतएव कायिक, वाचिक, मानसिक क्रियाकलापो में संगीतमयता की आवश्यकता पर एक अ'छा संवाद हो सकता है। मानव की संम्पूर्ण संवेदनाएँ अर्थात शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध के रूप में पहचानी जाती है जिसे हर सामान्य व्यक्ति पहचानता है। इसके नियंत्रण के लिए सम्पूर्ण ज्ञान, दर्शन, आचरण को संजो लेने का प्रमाण प्रस्तुत करना ही अभ्युदय समाधान है। इसका मुद्दा यही है कि कायिक वाचिक मानसिक रूप में एकरूपता चाहिये या नहीं। यदि चाहिये तो मध्यस्थ दर्शन सहअस्तितत्ववाद में पारंगत होना आवश्यक है। नहीं की स्थिति में इसकी जरूरत नहीं है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 106)**
- दसो परिवार संस्कृति सभ्यता में एक रूपता को बनाए रखेंगे। कला और उत्पादन क्रियाओ के प्रोत्साहन से अपनी अपनी पहचान बनाए रखने में सतत स्वयं स्फूर्त विधि से सम्पन्न होते जायेंगे। इस स्वायत्ता को पहचानने के उपरान्त सम्मिलित व्यवस्था दस परिवार में समाधान, समृद्धि का अनुभव होना, प्रमाणित होना, गवाहित होना बन जाता है। यही परिवार समूह सभा का वैभव होना पाया जाता है। इस वैभव के साथ यह भी स्वयं स्फूर्त होता है इसकी विशालता की आवश्यकता है। जैसे परिवार में परिवार समूह व्यवस्था की प्रवृति स्वयं स्फूर्त होती है। इसी प्रकार परिवार समूह सभा ग्राम परिवार की विशालता दस के गुणन में होते हुए ग्राम सौभाग्य को प्रमाणित करने का उद्देश्य बन जाता है। क्योकि समूचे ग्राम में कम से कम 10 परिवार समूह सभा से निर्वाचित सदस्य होगी। दस परिवार सभा अपना सौभाग्य प्रमाणित किये रहना स्वाभाविक रहता है। इन आधारो पर हर परिवार समूह सभा से एक एक व्यक्ति का निर्वाचन होना सहज हो जाता है। इस स्वयं स्फूर्त निर्वाचन से जन प्रतिनिधि अपने दायित्व, कर्तव्य से सम्पन्न, सजग प्रमाणित रहता ही है क्योंकि समझदार परिवार से ही जन प्रतिनिधि की उपलब्धि होना पाया जाता है। इसके हर परिवार के समझदार होने की व्यवस्था, लोक शिक्षा और शिक्षा विधि से, मानवीय शिक्षा का बोध कराने की व्यवस्था सुचालित रहेगी ही। इस प्रकार से तीसरे सोपान के लिए दस जनप्रतिनिधि परिवार समूह सभा से निर्वाचित होकर ग्राम सभा के लिए उपलब्ध रहेंगे। इसके निर्वाचन की कालावधि को हर ग्राम सभा अपनी अनुकूलता के आधार पर अथवा सबकी अनुकूलता के आधार पर निर्णय लेगी। उस कालावधि तक मूलत: परिवार से निर्वाचित होकर परिवार समूह से निर्वाचित होकर ग्राम परिवार सभा कार्यक्रम में भागीदारी करने के लिए पहुँचे रहते है। इनके लिए कोई मानदेय या वेतन स्वीकार नहीं होता है। क्योंकि हर परिवार समृद्ध रहता ही है। समाधान समद्धि के आधार पर ही जनप्रतिनिधि निर्वाचन होना पाया

जाता है। जब दसो जनप्रतिनिधि एकत्रित होते है ये सभी प्रतिनिधि हर कार्य करने योग्य रहते हैं। व्यवस्था कार्य में ऐसा कोई भाग नहीं रहेगा जिसे यह कर नहीं पायेगे। दूसरा हर कार्य के लिए समय और प्रक्रिया को निर्धारित करने में समर्थ रहेंगे। इस शोध के आधार पर मानवीय शिक्षा- संस्कार में पारंगत जैसे एक गॉव में प्राथमिक शिक्षा का आवश्यकता तो रहता ही है उसमें पारंगत रहेंगे। न्याय-सुरक्षा कार्य में पारंगत रहेंगे। **उत्पादन-कार्य** में पारंगत रहेंगे। विनिमय कार्य में पारंगत रहेंगे। स्वास्थ्य संयम कार्य में भी पारंगत रहेंगे। प्राथमिक स्वास्थ्य विधा में सभी पारंगत रहेंगे। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 112-113)**

- **(तीसरा सोपान)** व्यवस्था की **तीसरी कड़ी उत्पादन कार्य** है। इन उत्पादन कार्यों में कृषि, पशु पालन, ग्राम शिल्प, हस्त कला की प्रधान रूप में पहचान रहेगी। इसी के साथ ग्राम उद्योग की संभावना रहेगी। ग्रामोद्योग में ऊर्जा संतुलन कार्य रहेगा। यह स्थानीय परिस्थिति के साथ ग्राम सभा निर्णय करेगी। उत्पादन कार्यों की जितनी भी श्रेष्ठतम क्रिया प्रक्रिया तकनीकी होगी वह सभी परिवार में समावेश रहेगी। साथ में यह भी प्रावधान रहेगा कि किसी एक परिवार में स्वयं स्फूर्त श्रेष्ठता होने की स्थिति में समूचे 100 परिवार में सुलभ कराने की व्यवस्था ग्राम सभा में निहित रहेगी। हर परिवार अपने में आगे का कोई श्रेष्ठ कार्य करने में सफल होता है उसे तत्काल ग्राम सभा के आवगाहन में लाने की स्वतंत्रता रहेगी।

  गोबर गैस, सूर्य उर्जा, वायुतरंग और कचरा गैस इन सब से ईधन और प्रकाश की व्यवस्था और तकनीकी सहज सुलभ रहेगी। ग्राम सभा के जन प्रतिनिधि इस बात को तय करेगे गृह उद्योग, ग्राम शिल्प, स्थानीय सम्पदा के आधार पर क्या-क्या उद्योग हो सकते है इसकी सूची बनेगी। इसके लिए समुचित तकनीकी सुलभ कराने की व्यवस्था करेगे। हर समझदार परिवार श्रेष्ठता और गतिशीलता के साथ जुटा रहेगा। इसलिये हर श्रेष्ठता, गतिशीलता के स्रोत ग्राह्य रहना स्वाभाविक रहेगा। आरम्भिक चरण में हर परिवार को समझदार बनाना प्रधान कार्य रहेगा। गाँव के हर व्यक्ति के लिए न्याय सुलभ होने में भरोसा न्याय पूर्वक जीने में विश्वास बना रहना ही ग्राम स्वराज्य सफल होने का बिन्दु है। इसी आधार पर हर परिवार में **उत्पादन कार्य** स्वीकृत रहता है ही। उनके लिए ग्राम सभा जो कुछ भी प्रस्तावित करेगी स्वीकृत होती रहेगी। ग्राम सभा अपने में निष्ठा बनाए रखेगी। बाजार में जो चीज जितने पैसे का मिलता है उतने पैसे में यदि गाँव में तैयार होता है तो गांव में तैयार करने का निर्णय लेगी। क्योंकि गॉव में एक व्यक्ति के समुचित उत्पादन का प्रावधान हो जाता है। इसी विधि से आहार आवास अलंकार सम्बंधी वस्तुओ के प्रति नजरिया रहेगी। इसके अनन्तर सम्पूर्ण महत्वाकांक्षी वस्तुएँ जैसे दूर दर्शन, दूर गमन, दूर श्रवण सम्बंधी वस्तुओ को सहज संभालने के लिए सम्पूर्ण कर्माभ्यास करने की व्यवस्था रहेगी। इसके अनन्तर इनसे किसी वस्तु को निर्मित करने की सम्भावना गाँव की परिस्थिति में होने के आधार पर उन-उन वस्तुओ को निर्मित करने का कार्यक्रम गाँव में सम्पन्न होगा। कृषि में बीज स्वायत्ता, उर्वरक स्वायत्तता, कीटनाशक औषधियों की स्वायत्तता, पानी की स्वायत्तता बनी रहेगी। पानी की स्वायत्तता क्रम में अति आधुनिक विधि से हम जो पाताली जल स्रोत उपयोग करने में सफल हो गये है, इसकी पूरकता की विधियों को सोचना आवश्यक है। अभी तक चली संग्रह सुविधावादी विधि से इस ओर ध्यान नहीं गया अथवा कारगर विधि से ध्यान नहीं गया। अब समझदार ग्राम स्वराज्य व्यवस्था का इस ओर ध्यान देना स्वाभाविक है। अस्तु पाताली जल स्रोत जितना हम उपयोग करते है कम से कम तीन गुना, ज्यादा से ज्यादा चार गुना वर्षाकालीन पानी को संग्रह कर रखने की व्यवस्था हर कृषक अपनी जमीन में बनाए रखेगा। जिसमें से कुछ भाग उड़ जाता है, कुछ भाग जमीन पी जाती है जो पाताल जल स्रोत बन जाती है जिससे पाताल जल तादाद बने रहने का सूत्रपात हो सके। जिससे धरती की सतह पर जो वन, वनस्पति शेष है वे सुरक्षित रह सके। क्योंकि पाताल जल स्रोत जितना नीचे चला जायेगा। धरती की सतह का जल और जल स्रोत सूखने की संभावना रहेगी। वर्तमान में सर्वाधिक नदी नाले, तालाब, सरोवर सूखा हुआ देखने को मिलता है। सतह में वन, वनस्पति और औषधि, वनोपज प्रचुर मात्रा में होने के लिए धरती की सतह के ऊपर पानी सर्वाधिक रहना आवश्यक है। तभी नदी नाला किनारा, कुआं, तालाब, सरोवर ये सब भी पानी से भरपूर दिखाई पड़ेंगे। जैसे ऋतु संतुलन और धरती के सन्तुलन की स्थिति में रहे आये हैं।

  इस क्रम में हम अच्छी तरह से कृषि उत्पादन के साथ इमारती एवम जलाऊ लकड़ी का भी अपने खेतों में उपज

लेना सहज है। हर समझदार कृषक को भूमि के सदुपयोग को अपनी पूरकता विधि से पहचानना बन जाता है। अतएव **उत्पादन कार्य** के सभी आयामों की संभावनाओं के आधार पर तकनीकी कर्म अभ्यास गाँव में स्थापित करने का अधिकार ग्राम सभा में बना रहेगा। कृषि के चारो स्वायत्ता के पक्ष हर ग्राम सभा सुलभ सार्थक बनाने का कार्य करेगी। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 114- 116)**

- **(चौथा सोपान)** तीसरी कड़ी में **उत्पादन कार्य** एक महत्वपूर्ण भूमिका है ही। परिवार समूह सभा में प्रौद्योगिकी के पक्ष में जितनी भी जानकारी चाहिये उन सब में पारंगत रहना आवश्यक है। ये दसों सदस्य ग्रामोद्योग, लघु उद्योग विधा में पारंगत रहेंगे। जैसे वन खनिज की संतुलित व्यवस्था है। वैसे ग्राम उद्योग विधा में उद्योगों को स्थापित करेगें। जैसे पढ़ाई की सामग्री, अलंकार सम्बंधी सामग्री, गृह निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री, दूरगमन दूर दर्शन, दूरश्रवण सम्बंधी उपकरणों को निर्मित करने की व्यवस्था बनी रहेगी। ऐसा उत्पादन उन दस गाँव की आवश्यकता के अर्थ में रहेगा। इस **उत्पादन कार्य** में श्रम निवेश परस्पर दस गाँव के बीच ही बना रहेगा। इसका आदान प्रदान के लिए विनिमय कोष बनाना स्वाभाविक है। इस विनिमय कोष के साथ आदान-प्रदान का सम्बंध बनाए रखेगी। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 118-119)**
- **(पांचवा सोपान)** बुनियादी तौर पर हर परिवार समझदार होने के आधार पर ही क्षेत्र परिवार सभा का वैभव भी प्रमाणित होने की संभावना बनी रहती है। हर मानव का उद्देश्य साम्य होने के आधार पर व्यवस्था सूत्र व्याख्या अपने आप स्पष्ट होती है। इसकी भी प्रथम कड़ी शिक्षा-संस्कार कार्यक्रम है। इन शिक्षा संस्कार कार्यो में यथावत एक विद्यालय रहेगा। इसके पहले की सीढ़ी में जो प्रौद्योगिकी बनी रहती है उसके योगदान पर उत्तर माध्यमिक शालाएँ और स्नातक शालाएँ क्रम विधि से कार्य करेगी। क्रम विधि का तात्पर्य हर इन्सान चाहे नारी हो, नर हो समझदार होने के लिए कार्य करेगा। समझदारी का किसी उँचाई इस क्षेत्र परिवार सभा के अन्तर्गत प्रमाणित होना स्वाभाविक है। ऐसे प्रमाण के लिए तमाम व्यक्ति प्रशिक्षित रहेंगे। इसी कारणवश स्नातक पूर्व और स्नातक विद्यालय किसी क्षेत्र सभा के अन्तर्गत संचालित रहेंगे। जिसमें मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्ववाद की रोशनी में ज्ञान, विज्ञान, विवेक सम्पन्न विधि से हर विद्यार्थी की मानसिकता में स्थापित करने का कार्य होगा। इसी क्रम में हर सभा के अधिकार में कुछ मझोले, बड़े प्रौद्योगिकी समायी रहेगी। इसके लिए बुनियादी रूप में आवश्यकीय सभी साधन क्षेत्र सभाओं के प्रौद्योगिकी सम्पदा से निर्मित किये रहेंगे। इस विधि से हर क्षेत्र परिवार सभा में मझोले और छोटे उद्योगो का **उत्पादन** प्रचुर होने की व्यवस्था रहेगी। प्रधानत: ये उद्योग आवास, अलंकार, दूरश्रवण, दूरदर्शन, दूरगमन सम्बंधी यंत्रो को बनाने के कार्य में प्रवृत्त होगा। इसी सोपान में एक विनिमय कोष रहेगा जिसका सम्बंध इसके पहले के चारो सोपानों के विनिमय कोष से रहेगा। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 119-120)**
- **(छठवाँ सोपान)** - इसकी तीसरी कड़ी **उत्पादन कार्य** रहेगी। यह बड़े-बड़े उद्योगो के सम्बंध में सोच विचार करेगी। लघु उद्योग, ग्राम उद्योग, कुटीर उद्योग ग्राम शिल्प के मूल द्रव्यो को तैयार करने के सम्बंध में रहेगी। दूर श्रवण, दूरदर्शन, दूरगमन, के यंत्र उपकरणों को निर्मित करने के भी साधारण प्रयास रहेगी। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 120 – 121)**

- **(सातवीं सोपान)** - तीसरी कड़ी **उत्पादन कार्य** होगी बड़े उद्योगो को यह परिवार सभा संचालित करेगी। जिससे सभी मंडलों की आवश्यकता पूरी होती रहे। जिससे गाँव-गाँव के लिए यान वाहन सब उपलब्ध हो सके। इसी क्रम में **उत्पादन कार्य** में शोध कर्माभ्यास की व्यवस्था बनी रहेगी। वर्तमान से आगे श्रेष्ठतम यान वाहन, दूर संचार तंत्र सम्बंधी यंत्रो को, उपकरणों को तैयार करने का कार्य करने के रूप में पहचाना जायेगा। जिससे देश धरती की आवश्यकता पूरी होती रहे। तकनीकी प्रक्रिया में जो मंडल समूह सभा अपने में श्रेष्ठता को पहचाने जायेंगे उसे

सभी सोपनीय सभाओं के लिए प्रस्तुत किये रहेंगे। इसी प्रकार तकनीकी कर्माभ्यास का लोकव्यापीकरण करने की संभावना बनाए रखेंगे। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 123)**

- **(आठवीं सोपान)-** तीसरी कड़ी अपने आप में **उत्पादन कार्य** की रहेगी इसमें बड़े उद्योग समाहित रहेंगे प्रत्येक मुख्य राज्य में यातायात जैसे रेल सम्बंधी उपकरणों को प्राप्त करने का कार्यक्रम बना रहेगा। हर मुख्य राज्य परिवार सभा में इसकी परिपुष्टता को बनाये रखने की व्यवस्था रहेगी। जैसे बड़े बड़े वाहन इनको बनाने की प्रौद्योगिकी बनी रहेगी। इस क्रम में प्रत्येक राज्य सभा अपने में समृद्ध होने की व्यवस्था बनी रहेगी। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 124)**
- **(नवें सोपान)-** इस सभा की तीसरी कड़ी **उत्पादन कार्य** रहेगी जो आकाश गमन आदि यंत्रो को तैयार करने की प्रौद्योगिकी बनाये रखेगी। साथ में जलप्रवाह बल से विद्युत उपार्जन कार्य सम्पादित करने की व्यवस्था और दायित्व रहेगी। इसी के साथ साथ वायु प्रवाह, समुद्र तरंग विधियों से भी विद्युत उपार्जन करने के उपक्रम समावेशित रहेंगे। इसी प्रौद्योगिकी कार्यक्रम के साथ और श्रेष्ठतर उपलब्धियो के लिए प्रयोगशील रहने के अधिकार समावेशित रहेंगे जिससे ऊर्जा संतुलन सुलभ हो। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 125)**
- **(दसवीं सोपान) -** इस सभा की तीसरी कड़ी **उत्पादन-कार्य** है। उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनशीलता का मूल्याँकन करना सभी सोपानीय उत्पादनो के सम्बन्ध में पूर्णतया सजग रहना सन्तुलन वस्तु उत्पादन के लिए प्रधान राज्य सभाओं का मार्ग दर्शन देना बना रहेगा। इस सभा के सम्पूर्ण साधनो को मुख्य राज्य सभाओं के जो मुख्य प्रौद्योगिकी रहेगी उसी के बलबूते पर पूरा साधन एकत्रित रहेगा। साधनो के सदुपयोग का चित्रण, प्रेरणा देने का अधिकार इस सभा में निहित रहेगा। आरंभिक स्थिति में आवश्यक समझने पर सामरिक तंत्रो का उत्पादन प्रौद्योगिकीय विधि से विश्व राज्य सभा में रहेगा। उसके लिए स्रोत सभी प्रधान राज्य सभाएँ है। सभी आवश्यक तकनीकी प्रचलित हो चुकी है। इस विश्व राज्य सभा में एक विश्व सुरक्षा समिति बनी रहेगी। इसमें सभी प्रधान राज्य सभा के एक एक प्रतिनिधि निर्वाचित विधि से प्रस्तुत रहेंगे।

जहाँ तक सामरिक तंत्र के लिए आवश्यक है इसकी आवश्यकता तब तक रहेगी जब तक परस्पर राज्यों में पूर्ण विश्वास एकरूपता का सेतु न बन जाये। इस विधा में निश्चयन यही है समझदारी के साथ परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था सार्थक रहेगी। थोड़े दिन उपरान्त मानव कुल में सामरिक उत्पादन सर्वथा अयोग्य सिद्ध होकर रहेगा।

यह भी एक परिकल्पना मानव कुल कर सकता है कि दूसरे किसी पृथ्वी से इस पृथ्वी पर आक्रमण करने का भ्रम हो सकता है। इसमें कही भी मानव हो, शनैः शनैः जागृत होते हुए जागृतिपूर्ण विधि से समग्र व्यवस्था को पहचानने का मुहूर्त हर पृथ्वी पर उदय होता ही है। क्योंकि पूरी प्रक्रिया इस धरती पर जैसी गुजर चुकी है उसे देखने पर अनुमान यही होता है किसी पृथ्वी पर भिन्न जलवायु में मानव कुल का विस्तार होते-होते पूरी उस पृथ्वी का ज्ञान होना उसका भौगोलिक और जलवायु सम्बन्धी स्वरूप समझ में आना विभिन्न जलवायु से दूरसंचार जुड़ना, ये सब शनैः शनैः गतिशील सोच-विचार का परिणाम होता रहेगा। ऐसी संभावना के चलते अन्ततोगत्वा जागृति पूर्ण विधि को तलाशना होता है।

जागृति पूर्ण विधि को तलाशने के उपरान्त सदा-सदा से बनी हुई इतिहास जुड़ी हुई मिलती है और जागृति के उपरान्त व्यवस्था का सूझबूझ होना मानव कुल की ही प्रतिष्ठा है। मानसिकता के आधार पर जागृति को विकसित करने वाला, पहचानने, जानने, मानने, प्रमाणित करने वाला एक मात्र मानव ही है।

हर जलवायु में विभिन्न प्रकार के आदमी होते है अर्थात मानव शरीर का रचना विभिन्न नस्ल, रंग, रूप का होता है। यह बात इसी धरती पर गवाहित हो चुकी है। इसी प्रकार अन्य धरती पर भी हो सकती है। जागृति की महिमा सार्वभौम व्यवस्था अखंड समाज का प्रमाण किसी अन्य धरती अथवा अनंत धरती में भी मानव का उदय हो चुका हो, उन सबका स्वरूप एक ही हो जाता है यानि मानसिक स्वरूप, क्योंकि उद्देश्य एक ही बनता है। दृष्टा कर्ता भोक्ता पद निश्चित हो जाता है। इन तथ्यो से हमें विदित होता है हम मानव लक्ष्य सम्पन्न विधि से जीने के

लिए जागृति एक मात्र सहारा है। मानव जागृति सहित सहअस्तित्व रूप में नित्य वर्तमान है ही। वर्तमानता सदा-सदा के लिए नित्य है। इस विधि से हम सर्वशुभ कल्पना, परिकल्पना और प्रमाण तक की स्थिति में आते है कि परिवार मूलक स्वराज्य विधि से विश्व मानव परिवार सभा को अभी तक वैभवित न होते हुए, वैभवित होने की संभावना मानव मन तक पहुंचता है। सम्भावना तक स्वीकृति होती है। आगे मानव की चाहत बलवती होने की स्थिति में व्यवहार में वर्तमान हो सकता है यही आवश्यकता हर मानव में विद्यमान है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 126- 128)**

अनुभवात्मक अध्यात्मवाद

(संस्करण: 2009)

- समग्र व्यवस्था में भागीदारी करने का तात्पर्य - मानवीय शिक्षा कार्य में, न्याय सुरक्षा कार्य में, परिवार की आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** में, लाभ-हानि मुक्त विनिमय कार्य में, स्वास्थ्य-संयम कार्य में भागीदारी करने से है। **(भूमिका से)**
- मानव परंपरा तब तक भ्रमित रहना भावी है जब तक समुदाय और समुदायगत आवश्यकता की हठधर्मिता, सुविधा संग्रह की हठधर्मिता, भोग-अतिभोगवादी हठधर्मिता, आदमी को मूलत: दुखी मानने वाली हठधर्मिता, स्वार्थी, अज्ञानी और पापी मानने वाली हठधर्मिता, कोई एक समुदाय अपने को धर्मी अन्य को विधर्मी मानने की हठधर्मिता, द्रोह-विद्रोह-शोषण और युद्ध को एक आवश्यकता मानने वाली हठधर्मिता, व्यक्तिवादी (अहम्तावादी) मानसिकता के लिये सभी हठधर्मिता रहेगी। इसका निराकरण जागृति ही है। जागृति पूर्ण परंपरा मे ही अर्थात् जागृत शिक्षा-संस्कार, जागृत न्याय व्यवस्था और जागृत **उत्पादन कार्य**-व्यवस्था, जागृत लाभ-हानि मुक्त विनिमय व्यवस्था और जागृत स्वास्थ्य संयम पीढ़ी से पीढ़ी को सुलभ होने से है। ऐसी जागृत पूर्ण परंपरा में पीढ़ी से पीढ़ी जागृत होते ही रहना एक अक्षुण्ण परंपरा है। ऐसी परंपरा में अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था सर्वसुलभ होने की कार्यप्रणाली, पद्धति, नीति क्रियाशील रहेगी फलत: विविध प्रकार से समुदायों को अपनाया हुआ भ्रम अपने आप विलय होना स्वाभाविक है। यह अनुभव मूलक जीने के क्रम में पाया जाने वाला वैभव है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 21-22)**
- उत्पादन सुलभता अर्थात् परिवार में जितने भी परिवार मानव रहते हैं उन सबकी आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** होना परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था क्रम में सहज और सुलभ है। इस विधि से हर परिवार समृद्ध होने सहज समीचीनता सुलभ रहता ही है। इसी के साथ श्रम मूल्य के आधार पर विनिमय प्रणाली सर्वसुलभ होता ही है। इस विधि से लाभ-हानि मुक्त विनिमय सम्पन्न होना सहज है। फलस्वरूप लाभ से होने वाली अहम्ता (अहंकार) और हानि से होने वाली पीड़ा से मुक्त होना स्वाभाविक रहता ही है। समाधान, समृद्धि, शांति और सुख का सूत्र होना और न्याय सुलभता के साथ ही वर्तमान में विश्वास होना देखा गया है। बीसवीं शताब्दी के दसवें दशक तक यह प्रणाली मानव कुल में प्रभावी नहीं हुई है। इस स्थिति में भी यह अनुभव किया गया है स्वायत्त विधि से किया गया **उत्पादन कार्य** से समृद्धि का और सम्बन्ध, मूल्य, मूल्यांकन, उभय तृप्ति विधि से

न्याय का प्रमाण हमें सुलभ हो चुका है। अब रहा विनिमय प्रणाली अभी तक प्रचलित लाभोन्मादी के अन्तगत ही हम लेन-देन जैसा उत्पादन और विनिमय मुद्रा के आधार पर करते हुए भी समृद्धि का अनुभव किया। इसलिये और कहा जा सकता है कि लाभ-हानि मुक्त विनिमय प्रणाली प्रत्येक परिवार में, से, के लिये शांति कारक सूत्र होना देखा गया। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 39)**

- स्वास्थ्य-संयम जागृति विधि से अर्थात् अनुभव विधि से स्वायत्त होना सहज है। सम्बन्ध-मूल्य-मूल्यांकन-उभय तृप्तिकारी मानसिकता स्वयं का प्रमाण है और स्वास्थ्य समाधान, सह-अस्तित्व, वर्तमान में विश्वास, परिवार सहज आवश्यकता से अधिक **उत्पादन-कार्य**, न्याय-सुरक्षा में भागीदारी उसकी निरंतरता को बनाये रखने योग्य शरीर को संतुलित किये रहना स्वायत्तता के रूप में हर व्यक्ति में प्रमाणित होना समीचीन है। जीवन जागृति को मानव परंपरा में प्रमाणित करने के लिये शरीर की आवश्यकता और इसका उपयोग, सदुपयोग और प्रयोजनों के सम्बन्ध में हर व्यक्ति जागृत रहना आवश्यक होना है क्योंकि अनुभव की महिमा जागृति ही है। इसी सत्यतावश मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कारपूर्वक ही अथवा सुलभता से ही स्वायत्तता अपने आप संस्कारित होना पाया जाता है। स्वायत्त मानव ही परिवार मानव होना, परिवार मानव ही अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था का धारक-वाहक होना, अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था ही मानव में, से, के लिये परम सौभाग्य स्थिति, गति होना, फलस्वरूप मानव सहज सर्वशुभ, जीवन सहज नित्य शुभ, हर मानव में, से, के लिये प्रमाणित होता है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 39-40)**
- स्वायत्त मानव का प्रमाण रूप मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार ही है। इसकी महिमा को स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन और व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वालंबन है। ऐसे स्वायत्त मानव ही परिवार मानव के रूप में प्रमाणित होना पाया जाता है। हर परिवार मानव परस्परता में सम्बन्धों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन और उभय तृप्ति को पाना देखा गया है। परिवार मानव ही परिवार सहज आवश्यकता के अनुसार अपनाया गया **उत्पादन कार्य** में एक दूसरे के पूरक होते हैं, भागीदारी का निर्वाह करते हैं, फलस्वरूप परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन होना देखा गया है। यही समृद्धि, समाधान, न्याय सूत्र होना देखा जाता है। परिवार में समाधान और समृद्धि सम्बन्धों के आधार पर पाये गये उभय तृप्ति सहज न्यायपूर्वक व्यवस्था में जीना सहज होता हुआ देखा गया है। इन्हीं सहजता की पुष्टि में आवश्यकता से अधिक उत्पादन समृद्धि को प्रमाणित कर देता है। व्यवस्था में जीना ही समाधान का प्रमाण है और वर्तमान में विश्वास है। अतएव स्वायत्त मानव स्वरूप अनुभव मूलक होना देखा गया है। फलस्वरूप परिवार मानव, समाज मानव और व्यवस्था मानव के रूप में होना नियति सहज अभ्युदय (सर्वतोमुखी समाधान) और प्रामाणिकता (अनुभव और पूर्ण जागृति) सहज मानव में सार्थक होना देखा गया है। इसी आधार पर यह "अनुभवात्मक अध्यात्मवाद" लोक मानस के लिये प्रस्ताव के रूप में प्रस्तुत है। मानव ही ज्ञानावस्था की इकाई होने के कारण जागृति और सर्वतोमुखी समाधान को स्वीकारता ही है। यह अनुभव मूलक विधि से ही सर्वसुलभ होता है। ऐसे अनुभव और जागृति विधि से ही इस धरती को सुरक्षित बनाये रखने में मानव की भागीदारी अपेक्षा रूप में स्वीकार हो चुकी है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 40-42)**

- भौतिक संसार के रूप में पदार्थावस्था, और प्राणावस्था के रूप में वनस्पति संसार एवं सभी जीव शरीर तथा मानव शरीर रचना अर्थात् रासायनिक संसार होना दिखाई पड़ता है। यहाँ संसार का तात्पर्य सार रूप में अर्थात् प्रयोजन रूप में रचनाओं को प्रस्तुत करना ही है। इसका प्रमाण भौतिक-रासायनिक संसार में प्रत्येक इकाईयाँ अपने-अपने 'त्व' सहित व्यवस्था के रूप में ही हैं। बीसवीं शताब्दी के दसवें दशक तक मानव अपने 'मानवत्व' सहित व्यवस्था होने में प्रतीक्षारत है। प्रतीक्षारत रहना भ्रम मुक्ति की ओर गति अथवा दिशा सहज अपेक्षा का द्योतक है। भ्रमित रहना बंधन की प्रगाढ़ता का द्योतक है। इन दोनों स्थिति में अमानवीयता ही प्रचलित रहते हुए, बंधन की पीड़ावश अथवा भ्रम सहज कुण्ठावश जागृति की प्रतीक्षा होना देखा जाता है। प्रगाढ़ रूप में भ्रमित व्यक्ति, समुदाय अथ से इति तक शरीर को जीवन मानने-मनाने के लिये कटिबद्ध रहता है। यही जीवन सहज अनुभव और जागृति का निर्मूल्यन बिन्दु है। जीवन के स्थान पर शरीर को ही जीवन मान लेना प्रगाढ़ भ्रम का

गवाही है। इसी भ्रमवश ही मानव जितने भी भ्रमात्मक क्रियाकलापों को कर पाता है वह सब समस्या में ही परिणित हो जाते हैं। जैसे, विज्ञान संसार की महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ दूर संचार के रूप में और दूसरा उत्पादन कार्यों में गति के रूप में यंत्रों को प्रमाण के रूप में प्रस्तुत किया है। यह अपने में उपलब्धियाँ होते हुए मानव में जागृति, अनुभव परंपरा न होने के कारण इनके उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजनशीलता के स्थान पर सुविधा-भोग-अतिभोग का साधन बनकर रह गया है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 42- 43)**

- इस प्रकार भय, प्रलोभन, आस्थावादी विचारों के साथ ही मानव कुल अपना गति बनाये रखने में अभ्यास करता रहा। पहले विचार के मूल प्रतिपादन में ईश्वर से सब पैदा होता है। इसमें प्रमुख तथ्य आँखों में दिखने वाली वस्तुओं को माया कहा गया। दूसरे विचार के अनुसार ईश्वरीयता गौण हो गया, वस्तु प्रधान हो गया। वस्तुवादी मूल प्रतिपादन में वस्तु से चेतना पैदा होने की बात कही। उसका सूत्र रचना के साथ जोड़ा गया। रचना के अनुसार चेतना पैदा होने की बात कही। यही भौतिकवाद का मूल प्रतिपादन है। विविध रचनाएँ मानव के सम्मुख देखने को मिलता ही रहा। इसी के साथ-साथ शरीरवाही यानों वस्तुवाही वाहनों, शब्दवाही, दृश्यवाही यंत्रों-उपकरणों को मानव के सम्मुख प्रस्तुत किया। इसके प्रति सामान्य लोगों की भी आस्था जुड़ी। इसलिये इस ओर सर्वाधिक लोगों का ध्यान गया, स्वीकारा गया। इसी के साथ-साथ उत्पादन कार्यों में सहायक यंत्रोपकरणों को निर्मित किया गया। रचना के आधार पर ही वस्तुएँ काम किया रहता है। सम्पूर्ण रचनाओं को यंत्र के रूप में पहचानने के लिये प्रयत्न किया, कोशिश किया। कुछ को स्वीकार पाये, कुछ को नहीं स्वीकार पाये। जहाँ तक पदार्थावस्था की रचनाएँ हैं उनके उपयोग से ही सर्वाधिक अथवा सम्पूर्ण यंत्र निर्मित होते आया। हर यंत्र ईंधन संयोग से चलता रहा। विज्ञान के कथन के अनुसार रचना के अनुसार काम करता है जबकि ईंधन संयोग के बिना कोई यंत्र काम नहीं किया। वनस्पति एवं शरीर को यंत्र रचना के रूप में मानते हुए अंततोगत्वा हड्डी के आधार पर सम्पूर्ण रचना, सम्पूर्ण जीव शरीर, सम्पूर्ण मानव शरीर को मानते हुए नृतत्व (मानव तत्व) को उन्हीं किसी हड्डी में होने के अन्दाज पर खोजते आ रहे हैं। इसी के साथ प्रयोग दर प्रयोग के परिणिति को अंतिम सत्यता मानते हुए अबाध गति से प्रयोगों को बुलंद किये रहते हैं। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 48- 49)**
- सम्पूर्ण प्रयोगों को **उत्पादन कार्य** प्रयोग, औषधि कार्य प्रयोग के रूप में सकारात्मक पक्ष में होना पाते हैं। सकारात्मक पक्ष का तात्पर्य है - नित्य समाधान के अर्थ में सूत्रित होने से है। ऐसे नित्य समाधान जागृतिपूर्ण मानव परंपरा में ही लोकव्यापीकरण सर्वशुभ होना स्पष्ट है। जागृति पूर्ण विधि से भ्रम जन्य जितने भी योजना कार्यकलाप है समाधान के अर्थ में परिवर्तित होना पाया जाता है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 71-72)**
- स्वराज्य व्यवस्था ही होता है, शासन नहीं होता। व्यवस्था के संदर्भ में पहले से उसके स्वरूप को स्पष्ट किया जा चुका है। परिवार मानव विधि से ही स्वराज्य वैभव का उदय होना देखा जाता है। हर परिवार में शरीर यात्रा के लिए शरीर पोषण, संरक्षण एवं समाज गति के लिये आवश्यकीय वस्तुओं को उत्पादित करने का भी कार्यकलाप समाया रहता है। सम्बन्ध-मूल्य-मूल्यांकन-उभयतृप्ति अथवा परस्पर तृप्ति विधि से व्यवहार और आचरण को प्रकट करना मूलत: परिवार का तात्पर्य है। ऐसे परिवार में उक्त तीनों प्रकार की आवश्यकताएँ बनी ही रहती है। इसके निर्वाह क्रम में **उत्पादन कार्य** की आवश्यकता बना ही रहता है। इसका तात्पर्य यह हुआ परिवार गति और समाज गति के लिए **उत्पादन कार्य** भी एक आवश्यकीय तत्व है। अस्तु, सम्बंध-मूल्य-मूल्यांकन और उभय तृप्ति विधि से परिवार और समाज सूत्र और आवश्यकता से अधिक **उत्पादन-कार्य** में परिवार के हर सदस्य का उपयोगिता-पूरकता विधि से भागीदारी परिवार व्यवस्था और समाज व्यवस्था के सूत्र में प्रमाणित हो पाता है। इसीलिये प्रत्येक परिवार में, से, के लिए न्याय सुलभता, उत्पादन सुलभता, विनिमय सुलभता, स्वास्थ्य-संयम सुलभता नित्य सार्थक होना सहज है। जिसका स्रोत रूप में मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार और स्वास्थ्य-संयम कार्यकलापों के रूप में होना पाया जाता है। इस प्रकार व्यवस्था सार्वभौमता के दिशा में प्रशस्त होता है और अखण्ड समाज का सूत्र भी नित्य प्रभावी होना पाया जाता है। इसमें मूलसूत्र सह-अस्तित्व सूत्र ही है। यह अथ से इति तक अनुभवमूलक विधि से ही समझ में आता है। अभिव्यक्ति, संप्रेषणा, प्रकाशन होता है फलत: हर व्यक्ति स्वायत्त मानव, परिवार मानव, समाज व्यवस्था मानव के रूप में प्रमाणित होता है। यही अनुभव परंपरा की

गरिमा और महिमा है। इसी का फलन मानवापेक्षा और जीवनापेक्षा परिपूर्ति और तृप्ति व उसकी निरंतरता बन पाती है। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 180- 181)**

- मानव परंपरा में शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन कार्य**, विनियम कोष, स्वास्थ्य-संयम, व्यवस्था व व्यवस्था में भागीदारी सहज मुद्दों पर जागृत सहज प्रमाण होना, जानने-मानने-पहचानने में निरीक्षण समर्थ होना और निर्वाह करने में निष्णात रहना ही प्रामाणिकता है। निष्णातता का तात्पर्य निरीक्षण पूर्वक हर कार्य व्यवहारों को पूर्ण रूपेण, पूर्णता के अर्थ में प्रतिपादित, प्रकाशित और प्रमाणित करना ही है। यह मानव सहज अपेक्षा और आवश्यकता होना देखा गया। इसकी दूसरी विधियों में मानव कायिक, वाचिक, मानसिक, कृत-कारित और अनुमोदित विधाओं में जागृतिपूर्ण कार्यकलापों को प्रमाणित करना ही है। यह सर्वमानव स्वीकृत है। स्वीकृति को सर्वत्र देखने के लिए जागृत होना चाहते हैं या भ्रमित रहना चाहते हैं, इसके उत्तर में हर व्यक्ति जागृति का ही पक्ष लेते हैं। जागृति का सुस्पष्ट स्वरूप अस्तित्व में जागृत होना ही है। अस्तित्व में जागृत होने का गतिक्रम स्वरूप अपने आप में सह-अस्तित्व में ही निहित है। जिसको हम सह-अस्तित्व के रूप में पहचानते हैं। सह-अस्तित्व में ही परमाणु में विकासक्रम और विकास, विकसित परमाणु ही जीवन पद में होना जीवन ही जीवनी क्रम, जागृतिक्रम, जागृति और जागृतिपूर्ण विधियों से विविध परंपराओं में मुक्त रहने, अखण्डता सार्वभौम व्यवस्था सहज रूप में वर्तमानित रहने तथा गठनशील परमाणुओं में भौतिक-रासायनिक क्रियाकलापों के फलन में रचना-विरचनाएँ वर्तमान है, इन्हीं सह-अस्तित्व सहज गति को जानने-मानने-पहचानने-निर्वाह करना ही जागृति और जागृति का प्रमाण है। इससे यह विदित होता है ऊपर कहे सभी क्रमों में हर मानव, सर्वाधिक मानव प्रमाणित होना ही जागृत मानव परंपरा का स्वरूप होना सुस्पष्ट हो गई। यही सर्वसुख विधि को सार्थक बनाता है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 225- 226)**
- मानव में जागृत परंपरा स्थापित होने प्रमाणित होने और उसकी निरंतरता को बनाए रखने के लिए सर्वसुखवादी विधि और व्यवस्था ही एक मात्र शरण है। यह पहले से ही स्पष्ट हो चुकी है जागृति ही विधि है, इसे प्रमाणित करना ही व्यवस्था है। यही व्यवस्था मानवीयता पूर्ण शिक्षा-संस्कार सुलभता व्यवस्था अपने स्वरूप में न्याय-सुरक्षा सुलभता, विनियम-कार्य सुलभता, **उत्पादन-कार्य** सुलभता, स्वास्थ्य-संयम कार्य सुलभता रूप में होना देखा गया है। यह सर्वसुलभ होना समीचीन है, आवश्यक और संभव है। मानव परंपरा में जागृति का प्रमाण मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार ही है। जागृति और व्यवस्था के निरंतरता क्रम में स्वास्थ्य-संयम प्रणाली अपने आप मानव में, से, के लिये करतलगत होता है। इस प्रकार जागृति और जागृतिमूलक विधि से व्यवस्था सार्वभौम होना स्वाभाविक है। क्योंकि हर मानव जागृत होना चाहता ही है और हर मानव व्यवस्था में जीना चाहता ही है। यही अस्तित्व में अनुभव की महिमा है सह-अस्तित्व का प्रभाव है फलत: जागृति और जागृति का प्रमाण रूप सार्वभौम व्यवस्था मानव परंपरा में सार्थक होता है। यही "अनुभवात्मक अध्यात्मवाद" का प्रयोजन है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 226- 227)**

व्यवहारवादी समाजशास्त्र

(संस्करण : 2009)

- सकारात्मक पक्ष सम्पूर्ण वैज्ञानिक उपलब्धि जैसे दूरश्रवण, दूरदर्शन, दूरगमन संबंधी वस्तुओं की उपलब्धि महत्वपूर्ण रही। फलस्वरूप आँख, कान, मुँह और पैर की दूरियाँ घट गई। **उत्पादन कार्य** में गति आई उसके अनुकूल तकनीकी विधाएँ विकसित हुई, यही सकारात्मक पक्ष है। **(अध्याय:1, पृष्ठ नंबर:7)**
- मानव परम्परा का संतुलन अखण्ड समाज और सार्वभौम व्यवस्था के रूप में प्रामाणिक होना सहज है। यह दोनों अविभाज्य रूप में प्रतिष्ठा और गरिमा है। मानव कुल का संतुलन सर्वतोमुखी समाधानपूर्वक ही सम्पादित होना पाया जाता है क्योंकि सर्वतोमुखी समाधान सम्पन्न परिवार संतुलित रहना पाया गया है। हर परिवार में एक से अधिक व्यक्तियों का होना सर्वविदित है अथवा सम्मिलित कार्य-व्यवहार का होना पाया जाता है। परिवार की परिभाषा भी इसी तथ्य को पुष्ट करता है यथा परिवार में प्रस्तुत अथवा सम्मिलित सभी व्यक्ति एक दूसरे के साथ संबंध को पहचानते हैं एवं मूल्यों का निर्वाह करते हैं, मूल्यांकन करते हैं और उभय तृप्ति पाते हैं और परिवार सहज आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** में सभी पूरक होते हैं। इन्हीं आधारों पर समाधान और समृद्धि का प्रमाण प्रस्तुत हो पाता है। मानव का परिभाषा समाहित रहता ही है यथा मनाकार को साकार करने वाला मन: स्वस्थता सहज प्रमाण प्रस्तुत करने वालों के रूप में होना देखा गया है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 29-30)**
- विकल्पों का प्रधान बिन्दुओं को,
  1. चेतना विकास मूल्य शिक्षा-संस्कार तकनीकी शिक्षण कार्य में विकल्प,
  2. ज्ञान, दर्शन, विवेक, विज्ञान विधि विचारों में विकल्प,
  3. न्याय सुरक्षा विधान में विकल्प,
  4. स्वास्थ्य संयम कार्य में विकल्प,
  5. विचार व आचरण विधि में विकल्प,
  6. व्यवहार कार्य विधि में विकल्प,
  7. उत्पादन विधि में विकल्प,
  8. विनिमय विधि में विकल्प,
  9. उपयोग विधि में विकल्प।

  इन विकल्पों को हम भले प्रकार से पहचान चुके हैं। इस विश्वास से कि हम जिन विकल्पों को अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था के सूत्र के रूप में समझ चुके हैं वह सर्वमानव में स्वीकृत है ही। जैसे प्रसंग के रूप में -

  1. **उत्पादन कार्य** में स्वायत्त होने के उद्देश्य सहित प्रत्येक परिवार **उत्पादन कार्य** में भागीदारी का निर्वाह करना। समझदारी से समाधान, श्रम से समृद्धि।
  2. **उत्पादन कार्य** में नियोजित होने वाले श्रम मूल्य का पहचान उसका मूल्यांकनपूर्वक श्रम विनिमय प्रणाली को अपनाना। यह लाभ हानि मुक्त होना स्वीकार्य है।
  3. आवश्यकता से अधिक उत्पादन, उत्पादन से उपयोग, उपयोग से सदुपयोग, सदुपयोग से प्रयोजनशील विधियों को स्वीकारा गया है। उपयोग विधि से परिवार न्याय और व्यवस्था, सदुपयोग विधि से समाज न्याय और व्यवस्था, प्रयोजनीयता विधि से प्रामाणिकता और जागृति मानव कुल में लोकव्यापीकारण होने का सहज सुलभता को देखा गया।....**(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 70-71)**
- स्वतंत्रता :- प्रत्येक मानव अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था (मानव धर्म) में भागीदारी निर्वाह करने, कराने एवं करने के लिये मत देने में स्वतंत्र है। अखण्ड समाज और सार्वभौम व्यवस्था की अक्षुण्णता मानवीय शिक्षा-संस्कार, स्वास्थ्य-संयम, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य**, विनिमय-कोष, सुलभता सहित है जिसका क्रियान्वयन दस सीढ़ी में होता है। 1. 'परिवार' सभा, 2. 'परिवार समूह' सभा, 3. 'ग्राम परिवार' सभा, 4. 'ग्राम समूह' परिवार सभा, 5. 'ग्राम क्षेत्र' परिवार सभा, 6. 'मंडल' परिवार सभा, 7. 'मंडल समूह' परिवार सभा, 8. 'मुख्य राज्य' परिवार सभा, 9. 'प्रधान राज्य' परिवार सभा और 10. 'विश्व राज्य'। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 126)**

- व्याख्या - यह अभिव्यक्ति, संप्रेषणा, प्रकाशन बीज रूप में हर परिवार में प्रमाणित होना स्वाभाविक है। परिवार में हर सदस्य स्वायत्त होना ही उनके वयस्कता का प्रमाण है। ऐसे प्रमाण सम्पन्न परिवार के रूप में स्थिति परस्परता में ही संबंधों का पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन और उभय तृप्ति जिसका नाम विश्वास है, प्रमाणित होती है एवं निरन्तरता बनी रहती है। और परिवार सहज आवश्यकता के आधार पर अपनाया/स्वीकारा गया **उत्पादन कार्य** में एक-दूसरे के लिये पूरक होते हैं। यह समृद्धि का स्रोत होना पाया जाता है। यह प्रत्येक परिवार में, से, के लिये संभावी है। समृद्धि का अनुभव सामान्य आकांक्षा, संबंधी वस्तुओं से होना पाया जाता है। महत्वाकांक्षा संबंधी वस्तुएं समृद्धि के लिये सहायक है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 132-133)**
- परिवार सभा सभ्यता - सम्बन्ध, मूल्य, मूल्यांकन विधियों से सम्पन्न अनुभव ही सभ्यता की प्रतिष्ठा है। परिवार ही अपने परिपक्वता विधि से सभा के स्वरूप में प्रमाणित होता है। इस प्रकार सभा ही सभ्यता की अभिव्यक्ति, संप्रेषणा, प्रकाशन स्रोत है। सभा स्वरूप क्रम से दस सीढ़ियों में स्पष्ट है। मूलत: परिवार सभा ही अन्य स्तरीय सभाओं की रचना-कार्य और प्रवृत्तियों को प्रवर्तित करता है। परिवार में समाधान, समृद्धि और परस्परता में विश्वास, प्रतिष्ठा के रूप में अनुभव होना ही, उसकी विशालता की आवश्यकता स्फूर्त होती है। इसी क्रम में परिवार के अन्य कार्य सूत्र भी आशय के रूप में सूत्रित रहता ही है। धरती में अकेले व्यक्ति या परिवार नाम की स्वरूप की व्यवस्था नहीं है। अनेक व्यक्ति, अनेक परिवार के रूप में मानव प्रकाशित है। इसलिये परस्पर परिवार में विश्वास का सूत्र फैलना एक आवश्यकता रहता ही है। इसी क्रम में परिवार समूह, ग्राम मुहल्ला परिवार होना एक साधारण विधि है। इसमें परिवार का आशित विनिमय, न्याय, स्वास्थ्य-संयम, शिक्षा-संस्कार अपेक्षा के रूप में ही रहता है। क्योंकि परिवार आवश्यकीय सभी सामान्य आकांक्षा एवं महत्वाकांक्षा सम्बन्धी वस्तुओं को निर्मित नहीं करता। आवश्यकता से अधिक एक-दो वस्तुओं को अवश्य ही उत्पादित करता है एवं विनिमय पूर्वक अन्य वस्तुओं में बदलने की आवश्यकता बनी रहती है। यह एक आवश्यकीय प्रक्रिया है। इसे दूर-दूर तक सूत्रित करना एक आवश्यकता है। मानव जागृतिपूर्वक ही सामाजिक होना पाया जाता है। यह शिक्षा-संस्कारपूर्वक ही होता है। इसका परीक्षण, सर्वमानव के साथ होना सहज है। इस विधि से संबंधों को विशाल और विशालतम रूप देना आवश्यकता है। इसी विधि से ग्राम परिवार सभा से विश्व परिवार सभा तक सम्बन्ध रचना मानव का चिर कामना नैसर्गिकता सहज विधि से स्पष्ट हुआ है। इस विधि से धरती के मानव न्याय, जो अखण्ड समाज के अर्थ को ध्वनित करता है, के साथ समाधान जो सार्वभौम व्यवस्था को ध्वनित करता है, के साथ जागृति जो इन दोनों को संतुलित रूप में प्रमाणित है, के साथ निरन्तर जीने की कला को, अनुभव बल को, विचार शैली को सर्वथा परिपूर्ण रूप में जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना संभव है। जागृत परंपरा ही शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, विनिमय-कोष, **उत्पादन-कार्य** और स्वास्थ्य-संयम के रूपों में हर सभा के परस्परता में, हर सभा में प्रमाणित होता है और उसका मूल्यांकन होना एवं उसकी तृप्ति सर्वसुलभ होना ही मानवीयतापूर्ण आचार संहिता का परम लक्ष्य है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 133-135)**
- मन: स्वस्थता विधि जागृति और जागृति पूर्णता का द्योतक है। ऐसी स्वस्थ मानसिकतापूर्वक परिवार मानव प्रतिष्ठा के रूप में मनाकार को साकार पूर्वक, समृद्धि सम्पन्न होते हैं। जागृत मानसिकता पूर्वक ही परिवारगत **उत्पादन कार्य** में एक-दूसरे का पूरक होना स्वाभाविक है। जीवन शक्तियाँ अक्षय होने और शरीर की और समाज गति की आवश्यकता अपने में सीमित है। इसी आधार पर हर परिवार अपने में समृद्ध होने की व्यवस्था सहज है। यह सहजता जागृति पूर्वक हर मानव में समझ रूप में, विचार रूप में, कार्य रूप में और व्यवहार रूप में प्रमाणित होना ही जागृत परम्परा का विशालता और उसका प्रमाण है। प्रमाण स्वयं में प्रभाव क्षेत्र का द्योतक है। इस क्रम में मानव अपने परिभाषा के अनुरूप मौलिक अधिकार सम्पन्न है।? **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर:139-140)**
- विवाह सम्बन्ध परिवार में, से, के लिये आवश्यकीय वस्तुओं के लिये अपनाया गया **उत्पादन-कार्य** में भागीदारी करने की प्रतिज्ञा है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 149)**
- सेवा :- **उत्पादन-कार्य** में भागीदारी ही श्रम नियोजन का प्रधान अवसर, संभावना व आवश्यकता है क्योंकि परिवार सहज आवश्यकता, शरीर पोषण, संरक्षण और समाज गति के अर्थ में उत्पादन का प्रयोजन स्पष्ट होता है। इनमें आहार, आवास, अलंकार और दूरदर्शन, दूरश्रवण और दूरगमन संबंधी वस्तु व उपकरण गण्य हैं।

आवास, अलंकार और दूरश्रवण, दूरदर्शन, दूरगमन संबंधी उपकरणों के सम्बंध में स्वाभाविक रूप में ही मतभेद विहीन होना पाया जाता है। जहाँ तक आहार संबंधी बात है शाकाहार-मांसाहार भेद से पूर्ववर्ती समय काल युगों से अभ्यस्त होना पाया गया। इस मुद्दे पर यह देखा गया है मानवीयतापूर्ण समझदारी और शिष्टता के योगफल में जीने की कला प्रादुर्भूत होता ही है। जिसमें से एक आयाम आहार प्रणाली एवं वस्तुओं का चयन है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 159-160)**

- तीसरे प्रकार से स्वधन, पुरस्कार के रूप में प्राप्त धन। मानवीयतापूर्ण परंपरा में श्रेष्ठता का सम्मान होना स्वाभाविक है। श्रेष्ठता का मूल्यांकन मानवीयतापूर्ण परंपरा में व्यवस्था में भागीदारी, स्वायत्त मानव, परिवार मानव और समग्र व्यवस्था में भागीदारी उसकी गति और श्रेष्ठता पुरस्कृत होना स्वाभाविक है। इसी के साथ-साथ स्वास्थ्य-संयम कार्यों में श्रेष्ठता, उत्पादन-कार्यों में श्रेष्ठता, विनिमय-कार्यों में श्रेष्ठता, मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार कार्यों में श्रेष्ठता का मूल्यांकन और पुरस्कार मानव परंपरा में सहज है। इन किसी भी विधाओं का मूल्यांकन और पुरस्कार मानव परंपरा में सहज है। इन किसी भी विधाओं में श्रेष्ठता का सम्मान ग्राम परिवार सभा से विश्व परिवार सभा तक किसी स्तरीय परिवार सभा में श्रेष्ठ व्यक्ति का सम्मान किया जाना मानव परंपरा का ही सम्मान है। इस विधि से प्राप्त वस्तु स्वधन में गण्य होता है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 165-166)**
- जागृत मानव संबंधों में निहित मूल्य निरंतर निर्वाह होता है। समझदारी पूर्वक मूल्यांकन में उभयतृप्ति सदा-सदा ही रहता है। यह स्वायत्त मानव पूर्वक परिवार मानव सहज विधि से सहज होना पाया जाता है। सदा-सदा के लिये परिवार में सम्बन्ध-मूल्य-मूल्यांकन-उभयतृप्ति होती है। परिवार की परिभाषा भी है परस्पर सम्बन्धों को पहचानते हैं, मूल्यों का निर्वाह करते हैं, मूल्यांकन करते हैं और उभयतृप्ति पाते हैं। यही परिवार का आधार बिन्दु है। अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था का सूत्रपात "परिवार मानव" पद ही है। परिवार व्यवस्था सार्वभौम व्यवस्था के लिये सूत्र है। परिवार रचना स्वयं अखण्ड समाज रचना का सूत्र है। जागृत परिवार मानव परिवार सहज आवश्यकता के लिये समझदारी से अपनाया **उत्पादन-कार्य** के लिये एक-दूसरे के पूरक होना पाया जाता है। इस विधि से हर परिवार में समाधान, समृद्धि प्रमाणित होती है, अभय सह-अस्तित्व का सूत्र समाया रहता है। इसे प्रमाणित करने की आवश्यकता क्रम में अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था का ताना-बाना, इसलिये बना है कि समाज ही व्यवस्था और व्यवस्था ही समाज को संतुलित बनाये रखता है। परिवार क्रम विधि से समाज रचना, सभा क्रम में व्यवस्था गति स्पष्ट हो जाता है। जैसे परिवार ही स्वायत्त मानवों का संयुक्त अभिव्यक्ति होना स्पष्ट किया जा चुका है। हर नर-नारी स्वायत्त पद में ही परिवार मानव अर्हता, स्वत्व, स्वतंत्रता, अधिकार को प्रमाणित करते हैं। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 172)**
- स्वायत्त मानव परंपरा में सभा क्रम, परिवार क्रम, 10-10 की संख्या में सहज ही पहचाना जाता है। सर्वमानव स्वायत्त मानव रूप में अपने प्रतिष्ठा को जानने-मानने, पहचानने-निर्वाह करने का सौभाग्य मानवीयतापूर्ण शिक्षा परंपरा में, से नित्य गति के रूप में समीचीन रहता है। सह-अस्तित्व विधि से व्यवस्था को, जागृति विधि से परिवार को पहचानना, निर्वाह करना मानव सहज आवश्यकता व वैभव है। अस्तित्व सहज रूप में ही सह-अस्तित्व वर्तमान है। यथा पदार्थावस्था, प्राणावस्था, जीवावस्था, ज्ञानावस्था, इसी धरती पर नियति क्रम विधि से प्रमाणित है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि जागृति का धारक-वाहकता प्रत्येक मानव का जागृति सहज स्वत्व है; और सह-अस्तित्व सहज वैभव है। इस प्रकार अस्तित्व सहज व्यवस्था को जानना-मानना-पहचानना, निर्वाह करना ज्ञानावस्था सहज जागृत मानव से ही प्रमाणित होती है। जागृति सहज विधि से ही समाज रचना स्वाभाविक होता है अथवा होने वाला स्वरूप है। होना वर्तमान ही है। वर्तमान की निरंतरता है। इसलिये व्यवस्था एवं समाज की निरंतरता है। सभा क्रम में निर्वाचन विधि से सम्पन्न होता है। परिवार रचना अर्थात् अखण्ड समाज रचना विधि सम्बन्धों की पहचान विधि से सम्पन्न हो जाता है। यथा एक परिवार में दस स्वायत्त मानवों के सहभागिता को पहचाना जाता है। जो परस्परता में सम्बन्ध मूल्य-मूल्यांकन-उभयतृप्ति पूर्वक रहते हैं, परिवारगत **उत्पादन कार्य** में परस्पर पूरक होते हैं यह सर्ववांछित स्वरूप स्वायत्त मानव जागृत सहज वैभव के रूप में पाया जाता है। सह-अस्तित्व सहज प्रमाण के रूप में एक से अधिक व्यक्तियों का होना भी प्रमाणित होता है। इसीलिये दस व्यक्तियों का होना संख्या के रूप में बतायी जाती है, घटना के रूप में यह संख्या ज्यादा कम हो

सकता है। क्योंकि मानव संख्या के अर्थ में सीमित नहीं है किंवा कोई भी वस्तु संख्या के रूप में सीमित नहीं है क्योंकि हरेक-एक रूप, गुण, स्वभाव, धर्म सहज वैभव है, अविभाज्यहै। गणित केवल रूप सीमावर्ती गणना है। आंशिक रूप में गुण (गति) का भी गणना सम्पन्न होता है। धर्म, स्वभाव और मध्यस्थ गुण (गति) का गणना संभव ही नहीं है। अतएव गणित विधि के साथ गुण और कारण विधि से मानव अपने भाषा को इनके अविभाज्यविधि से समृद्ध बनाने की आवश्यकता है। इन तीनों विधि से ही हर वस्तु को, उन-उनके सम्पूर्णता को समझना सहज है। हर वस्तु अपने सम्पूर्णता में रूप, गुण, स्वभाव, धर्म का वैभव है। ऐसे सम्पूर्णता का महिमा ही है प्रत्येक अपने 'त्व' सहित व्यवस्था है और समग्र व्यवस्था में भागीदार है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 173- 174)**

- परिवार विधि में हर सम्बोधन प्रयोजन से लक्षित होना पाया जाता है। और हर प्रयोजन हर व्यक्ति के अपेक्षा सहित सम्बोधन का वस्तु है।....

....समितियों में सम्बोधन

गुरू-शिष्य	-	शिक्षा-संस्कार विधा में
आचार्य-आवेदक	-	न्याय-सुरक्षा विधा में
पितामह, पिता-माता, पुत्र-पुत्री	-	**उत्पादन-कार्य** सम्बन्ध
आयु के अनुसार	-	विनिमय-कोष सम्बन्ध
सहयोगी - साथी	-	स्वास्थ्य-संयम विधा में। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 183)**

- 5. किसी **उत्पादन कार्य** में पारंगत मानव अन्य को पारंगत बनाने के लिए प्रवृत्तशील रहता है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 192)**
- जागृत परम्परा में मानव ही सम्पूर्ण आयाम, कोण, दिशा व परिप्रेक्ष्य सर्व देशकाल में जागृत शिक्षा यथा अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिंतन रूपी जीवन ज्ञान सहज परम ज्ञान, अस्तित्व दर्शन सहज सह-अस्तित्व रूपी परम दर्शन, मानवीयतापूर्ण आचण रूपी परम आचरण, ज्ञान-विज्ञान विवेक सम्मत समाधानपूर्ण शिक्षा-संस्कार सुलभ होता है। जागृति सहज मानवीयतापूर्ण आचरण और मानव सहज परिभाषा के अनुरूप शास्त्रों का प्रणयन स्वाभाविक रूप में ही है। आवर्तनशील अर्थशास्त्र अपने सह-अस्तित्व सहज सूत्रों के प्रतिपादन सहित व्याख्यायित हुआ है। यह परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन के लिये अपनाया हुआ **उत्पादन कार्य** में नियोजित श्रम, उत्पादन सहज उपयोगिता के आधार पर उसका मूल्यांकन फलस्वरूप श्रम विनिमय प्रणाली स्थापित होती है। यह समझ के करो विधि से सर्वसुलभ हो जाता है। इसी क्रम में यह व्यवहारवादी समाजशास्त्र भोगोन्मादी समाज शास्त्र के स्थान पर प्रस्तावित किया है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 195-196)**
- इस विश्लेषण से यह बात स्पष्ट हो गया कि जीवन जागृतिपूर्वक ही हर मानव स्वायत्तता पूर्वक परिवार मानव होने का प्रमाण सहित स्वयं में व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी का निर्वाह करता है। जीने की कला दूसरे विधि से मानवीयतापूर्ण आचरण विधि मानव सहज परिभाषा क्रम से ही मानवीयता का व्याख्या सहज ही सार्थक हो जाता है। सार्थक होने का तात्पर्य अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था क्रम में भागीदारी है। अखण्ड समाज सूत्र परिवार विधि से सार्थक होना पाया जाता है। परिवारों का स्वरूप और विशालता को दश सोपानों में स्पष्ट किया गया है। इसी के साथ-साथ दश सोपानों में सभा-स्वरूप व्यवस्था कार्य, कर्तव्य, दायित्व को स्पष्ट किया है। परिवार क्रम में मूल्य, चरित्र, नैतिकता अविभाज्यता को सहज ही स्पष्ट किया जा चुका है। दश सोपानीय समाज रचना और व्यवस्था गति अपने-आप में एक दूसरे को संतुलित करने के अर्थ से हम अभिहित होते हैं। जैसे:- परिवार- जिसका सूत्र सम्बन्ध मूल्य, मूल्यांकन, उभय-तृप्ति और परिवारगत **उत्पादन-कार्य** में पूरकता फलस्वरूप परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन है। परस्पर परिवार व्यवस्था में विनिमय एक

अनिवार्य कार्य है। इसी के साथ सीखा हुआ को सिखाने, किया हुआ को कराने, समझा हुआ को समझाने का कार्य प्रणाली सदा-सदा जागृत मानव पंरपरा में वर्तमान रहता ही है। इसी क्रम में सर्वमानव सुख, सर्वमानव शुभ और सर्वमानव समाधान सर्वसुलभ होता ही रहता है। इस स्थिति को पाना सर्वमानव का अभीप्सा है। अतएव सुलभ होने का मार्ग सुस्पष्ट है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 196-197)**

- शिक्षा-संस्कार सम्पन्न होने के उपरान्त हर व्यक्ति को स्वायत्त और परिवार मानव के रूप में पहचानना स्वाभाविक होता है। परिवार मानव के रूप में ही हर सम्बन्धों का निर्वाह होना, प्रमाणित होना और प्रयोजित होना मूल्यांकित होता है। इसी आधार पर मौलिक अधिकारों को कार्य, व्यवहार, आचरण रूप में प्रमाणित करना ही परिवार मानव सहज सार्थकता है। परिवार मानव संबंधों में, से एक विवाह सम्बन्ध एक पत्नी, एक पति संबंध है। परिवार मानव का कार्य रूप अपने आप में व्यवस्था में जीना ही है। दूसरी भाषा में मानवीयतापूर्ण परिवार में ही व्यवस्था का प्रमाण सदा-सदा के लिये वर्तमानित रहता है। यही जागृत मानव परंपरा का भी साक्ष्य है। परम्परा में प्रधान आयाम परिवार और व्यवस्था का नित्य प्रेरणा स्रोत शिक्षा-संस्कार ही होना पाया जाता है। अतएव स्रोत और प्रमाण के संयुक्त रूप में ही अखण्ड समाज और सार्वभौम व्यवस्था का सूत्र प्रतिपादित होता है। निष्कर्ष यही है परिवार में ही समाज सूत्र और व्यवस्था सूत्र कार्य, व्यवहार, आचरण रूप में प्रमाणित होना ही मानव परंपरा का वैभव है। यही मानवीयता पूर्ण परिवार का तात्पर्य है। इसी में समाधान, समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व का प्रमाण प्रसवित होता है। इस क्रम में हर परिवार में समाधान और समृद्धि का दायित्व, कर्तव्य, आवश्यकता और प्रयोजन परिवार के सभी सदस्यों में स्वीकृत होना और प्रभावशील रहना ही अथवा प्रमाणित रहना ही परिवार की महिमा और गरिमा है। मानवीयता पूर्ण परिवार का अपने परिभाषा में भी यही तथ्य इंगित होता है जैसा परिवार में भागीदारी निर्वाह करता हुआ हर सदस्य एक दूसरे के संबंधों को पहचानते हैं; मूल्यों का निर्वाह करते हैं और मूल्यांकन करते हैं। फलस्वरूप उभयतृप्ति एक दूसरे के साथ विश्वास के रूप में जानने, मानने, पहचानने और निर्वाह करने के रूप में प्रमाणित होता है। यही परिवार सहज गतिविधि का प्रधान आयाम है। इसी के साथ दूसरा आयाम परिवार में भागीदारी निर्वाह करता हुआ हर सदस्य परिवार गत **उत्पादन-कार्य** में भागीदारी का निर्वाह करते हैं। फलस्वरूप परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन होना पाया जाता है। जिससे समृद्धि का स्वरूप सदा-सदा परिवार में बना ही रहता है। इसीलिये परिवार और ग्राम परिवार, परिवार समूह और परिवार के रूप में जीने की कला अपने आप में प्रसवित होती है। समृद्धि समाधान, सम्बन्धों, मूल्य, मूल्यांकन के आधार पर बनी ही रहती है। समाधान और समृद्धि सूत्र परिवार में विश्वास के रूप में प्रमाणित होता ही है। इसी आधार पर विशालता की ओर विश्वास के फैलाव की आवश्यकता निर्मित होता है। यही सह-अस्तित्व के लिये सूत्र है। इस प्रकार से परिवार और व्यवस्था का दूसरे भाषा में परिवार मूलक विधि से व्यवस्था का संप्रेषणा, प्रकाशन सर्वसुलभ हो जाता है। ऐसी सर्वसुलभता मानवीय शिक्षा-संस्कार स्वरूप से ही हो पाता है। यही शुभ, सुंदर, समाधानपूर्ण परिवार विधि है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 226- 228)**
- मानव सहज जागृति प्रभाव विशालता की ओर गतिशील होना स्वाभाविक है। जैसा मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार एक परिवार में परिवार का विरासत न होकर सम्पूर्ण विश्व मानव का स्वत्व होना पाया जाता है। इसीलिये मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार सार्वभौम होना सहज है। इसी प्रकार न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य**, विनिमय-कोष, स्वास्थ्य-संयम क्रियाकलाप भी सार्वभौम होता ही है। इन पाँचों आयाम का सार्वभौम रूप में वर्तमान होना ही अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था का द्योतक है। दाम्पत्य संबंध ऐसी व्यवस्था में भागीदारी का संकल्पोत्सव होना पाया जाता है, ऐसे संकल्प का प्रमाण समाधान और समृद्धि का स्वरूप ही है। यही परिवार मानव का लक्ष्य और आवश्यकता है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 229)**
- व्यवस्था संबंध - व्यवस्था में जीने का प्रमाण परिवार में होता है। समग्र व्यवस्था में भागीदारी सहज क्रम में व्यवस्था संबंध को पहचानने की आवश्यकता उत्पन्न होती है। जैसा परिवार में न्याय-सुरक्षा का प्रमाण संबंध, मूल्य, मूल्यांकन तन, मन, धन का सदुपयोग-सुरक्षा विधि से प्रमाणित हो जाता है। यही परिवार मानव का मानवीयतापूर्ण परिवार का परिभाषा है। इसीलिये परिवार में परस्पर हुई पिता-पुत्र, भाई-बहन, मित्र, गुरू, शिष्य, पति-पत्नि, माता-पिता इन संबंधों में संबोधन सहज संबध चिन्हित होता है और **उत्पादन-कार्य** में

भागीदारी प्रमाणित रहता ही है। हर परिवार में वस्तुओं का उपयोग, सदुपयोग भी साक्षित रहता है। विनिमय-कार्य के लिये और विशाल संबंध की आवश्यकता बनी रहती है। एक परिवार की आवश्यकता जितने प्रकार की वस्तुओं की बना रहता है उनमें से कुछ वस्तुओं को किसी भी परिवार में उत्पादित होना स्वाभाविक है विनिमयपूर्वक एक परिवार में उत्पन्न वस्तु को दूसरे परिवार प्राप्त कर लेना ही वस्तुओं का आदान-प्रदान का तात्पर्य है। इस विधि से विनिमय एक आवश्यकीय क्रियाकलाप है; यह स्पष्ट हो जाता है। व्यवस्था के आयामों में विनिमय एक आयाम है। व्यवस्था रूप में ही संपूर्ण आयाम सहित परंपरा स्पष्ट होती है यथा मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार परंपरा अन्य सभी चार आयामों के लिये स्रोत और संतुलन सूत्र होना पाया जाता है। प्रत्येक आयाम में मानव अपने संतुलन पूर्वक कार्य-व्यवहार करने के क्रम में हर सूत्र व्याख्यायित हो जाता है। यथा मानवीय शिक्षा-संस्कार में ये देखने को मिलता है कि यथार्थता, वास्तविकता, सत्यता रूप में समझा हुआ को संस्कारों के रूप में; किया हुआ को प्रमाणों के रूप में दूसरी भाषा में जिया हुआ को अथवा जीने की विधि को प्रमाण के रूप में देखा जाता है। समझने का जो कार्यक्रम है जिसमें समझाने वाली क्रिया समाहित रहती हैं यही संस्कार का कारण है यह अध्ययन पूर्वक सम्पन्न होना पाया जाता है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 233- 234)**

- दृष्टा पद का प्रमाण ही है जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना; यह हर मानव में स्वीकृत है, अपेक्षित है। यह जागृति पूर्वक सफल होता है। अतएव मानव दृष्टा पद जागृति प्रतिष्ठावश ही निरीक्षण, परीक्षण, सर्वेक्षण कार्य संपन्न करता है। फलस्वरूप मानवत्व सहित जीने का प्रमाण वर्तमानित होता है। इसी क्रम में तन, मन, धन का सदुपयोग-सुरक्षा स्वाभाविक कार्य होने के कारण सदुपयोग विधि से सुरक्षा प्रमाणित होता है; और सुरक्षा-विधि से सदुपयोग प्रमाणित होता है। यही न्याय-सुरक्षा का, संतुलन का तात्पर्य है। सदुपयोग और सुरक्षा करने की संपूर्ण संभावना, मानव परंपरा में प्राकृतिक ऐश्वर्य के रूप में देखने को मिलता है। प्राकृतिक ऐश्वर्य नैसर्गिकता के रूप में समीचीन है। मानव परंपरा संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था के रूप में समीचीन है। संस्कृति क्रम में शिक्षा-संस्कार ही प्रधान मुद्दा है और सभ्यता में इसी शिक्षा-संस्कार का प्रमाणपूर्वक पोषण विधि प्रमाणित होता है; यह आचरण का ही स्वरूप है। इसी के साथ नैसर्गिकता समीचीनता अपने-आप में ऋतु-संतुलन के रूप में वर्तमानित रहना ही उसकी सार्थकता है और मानव के लिये अपरिहार्यता है। इसे सुरक्षित रखना मानव का मौलिक अधिकार है। इस प्रकार मानवीयतापूर्ण पद्धति, सभ्यता रूपी मानवीय आचरण ही मौलिक अधिकारों के रूप में विभिन्न आयामों में विभिन्न सार्थक अर्थों में प्रायोजित होना पाया जाता है। इस प्रकार अर्थ का सदुपयोग ही सुरक्षा को प्रमाणित करता है। यही संतुलन का तात्पर्य है। ऐसी न्याय-सुरक्षा क्रम में **उत्पादन-कार्य** एक आयाम है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 237-238)**
- **उत्पादन-कार्य** प्रणाली, पद्धति, नीति सहज विधि से व्यवस्था का अंगभूत होना पाया जाता है। **उत्पादन-कार्य** के मूल में पायी जाने वाली समझदारी, उसमें नियोजित होने वाली संपूर्ण प्रकार की तकनीकी, विधि कार्य अर्थात् क्रियान्वयन के फलन में हर प्रकार के उत्पादनों को सफल बनाना मानव सहज कार्यों में से एक कार्य है। **उत्पादन-कार्य** विधि से ही सामान्यकांक्षा और महत्वाकांक्षा संबंधी संपूर्ण वस्तु या उपकरणों को मानव अपने स्वयं प्रेरित विधि से पा लेना ही **उत्पादन-कार्य** का लक्ष्य है। यही समृद्धि का आधार होना पाया जाता है और स्रोत होना भी पाया जाता है। इसमें कार्य और मानसिकता का संतुलन ही सफलता का ोत है। हर विधा में संतुलन अपने आप में समाधान रूप में गण्य होता है। व्यवस्था का तात्पर्य ही बहुआयामी समाधान, लोकव्यापीकरण, उसकी निरंतरता है। क्योंकि जागृति परंपरा पीढ़ी से पीढ़ी के लिये ही स्थापित और कार्यरत होना स्वाभाविक है और पीढ़ी के बाद पीढ़ी में भागीदारी के लिये अर्पित हर मानव संतान जागृति सहज अपेक्षा संपन्न रहता है अर्थात् जीवन जागृति के लिये ही मानव संतान मानव परंपरा में अर्पित होता है। इसे सफल बनाना ही मानव परंपरा का परम उद्देश्य है। फलत: संपूर्ण आयाम, कोण, दिशा, परिप्रेक्ष्य और देश-कालों में मौलिक अधिकार संपन्न होना सहज हो जाता है। फलस्वरूप मौलिक अधिकार का प्रयोग व्यवस्था के रूप में प्रमाणित हो जाता है अथवा व्यवस्था के अंगभूत रूप में प्रमाणित होना पाया जाता है। अस्तित्व में ही शरीर रचना-विरचना क्रम और परमाणु में विकास पूर्वक गठन पूर्णता सहज जीवन प्रतिष्ठा, जागृति क्रम और जागृति विधिवत होना देखने को मिलता है। फलस्वरूप, जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में मानव का वर्तमान पहचानने को मिलता है। मानव

परंपरा में जागृति प्रमाणित होना मौलिक अधिकार का मूलसूत्र है। जागृति का प्रमाण हर आयामों में मानव स्वयं स्फूर्त विधि से व्यवस्था और व्यवस्था में भागीदारी के रूप में प्रमाणित होना ही है। यही अस्तित्व सहज विधि मानव सहज अपेक्षा का संतुलन है। हर संतुलन आवर्तनशीलता के स्वरूप में प्रमाणित होना पाया जाता है। अतएव उत्पादन के लिए मानसिकता और कार्य का संतुलन आवश्यक है। इसकी आवर्तनशीलता में ही **उत्पादन कार्य** में सफलता, गुणवत्ता और शीघ्रता का संयोग होना पाया जाता है; यही सफलता के अनन्तर पुन: सफलता की ओर गति है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 240- 242)**

- ऐसी प्रतिष्ठा सर्वमानव की अपेक्षा है इसका भी सर्वेक्षण होना सहज है। निपुणता का तात्पर्य प्राकृतिक ऐश्वर्य पर उपयोगिता मूल्य को स्थापित करने का सामर्थ्य और उसका क्रियान्वयन और मूल्यांकन से है। कुशलता का तात्पर्य प्राकृतिक ऐश्वर्य पर उपयोगिता मूल्य और कला मूल्य को स्थापित करने और उसका मूल्यांकन करने के प्रमाणों से है। इस विधि से सर्वाधिक सामान्यकांक्षा संबंधी विशेषकर संपूर्ण उत्पादन का कार्य स्वरूप स्पष्ट हो जाता है। मूल्यांकन कार्य में ये देखा गया है कि -

1. स्वायत्त मानव बनाम निपुणता, कुशलता, पांडित्य संपन्न मानव + प्राकृतिक ऐश्वर्य बनाम नैसर्गिकता + हस्तलाघव + मानसिकता का संयुक्त रूप में संपूर्ण उत्पादन मानव में, से, के लिये होना देखा गया है। हस्त लाघव का तात्पर्य सभी (पाँचो) ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय से निपुणता, कुशलता, पांडित्य रूपी कार्य करने से है। ज्ञानेन्द्रिय का तात्पर्य शब्दों को सार्थक निरर्थक रूप में विभाजित करने की क्रिया, सुनने; स्पर्श से कठोरता और मृदुलता को स्वीकारने की क्रिया, घ्राणेन्द्रियों से सुगन्ध और दुर्गन्ध को विभाजित करने की क्रिया, रूपेन्द्रियों से सुरूप, कुरूप की विभाजन क्रिया; रसनेन्द्रियों से खट्टा-मीठा, चरचरा, खारा, कसैला और तीखा इन रूचियों को विभाजित करने की क्रिया। कर्मेन्द्रियों का तात्पर्य हाथ, पैर, मल-मूत्र द्वार और मुँह ये सब कर्मेन्द्रियों में गण्य होना पाया जाता है। हस्तलाघव क्रिया में निपुणता, कुशलता पूर्ण पांडित्य से संचालित पूरे शरीर के संपूर्ण अंग-अवयव सहित हाथ-पैर सटीक काम करने से बाकी सभी ज्ञानेन्द्रियों का संयोग कर्मेन्द्रियों के साथ संयोजित रहता ही है। इस विधि से हर व्यक्ति से श्रम प्राकृतिक ऐश्वर्य पर स्थापित होना देखा जाता है। इसमें यह भी देखा गया है - उत्पादन में भागीदारी, व्यवहार में मूल्यों का निर्वाह पूर्वक सामाजिक होने के लिए उपयोगिता-पूरकता प्रमाण है। दूसरी भाषा में - उत्पादन में भागीदारी, व्यवहार में सामाजिक होने का संतुलन तत्व और व्यवहार में सामाजिकता, व्यवसाय में स्वावलंबी होने का संतुलन तत्व इस प्रकार समाजिकता-स्वावलंबन पूरक होने का स्वरूप प्रमाणित होता है। ऐसे संतुलन कार्य में प्रवृत, रत, निष्ठान्वित रहना ही कायिक वाचिक, मानसिक, कृत-कारित अनुमोदित, जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति में क्रियारत रहने का सार्थकता है। यही अखंड समाज - सार्वभौम व्यवस्था का आधार सूत्र और बीज रूप है। व्यवहार क्रम में उत्पादन का सार्थकता अर्थात् प्रयोजन प्रमाणित होता है। इस विधि से व्यवहार में सामाजिक, व्यवसाय में स्वावलंबन और इनमें परस्पर पूरकता अग्रिम उन्नति और विकास के लिये सीढ़ी दर सीढ़ी प्रमाणित होना मानव के लिए एक आवश्यकता, समीचीनता और सहजता है। सूत्र का तात्पर्य जागृति सहज नियम-नियंत्रण विधि से अधिकारिक रूप में दिखने वाला न्याय और नियम का संयोजन और उसकी निरंतरता से है। बीज रूप का तात्पर्य समाधानकारी सूत्र सम्मत कार्य प्रणाली और व्यवहार प्रणाली से है। यही सार्वभौम व्यवस्था और अखण्ड समाज को गति प्रदायी तत्व होना देखा गया है। इस प्रकार अखण्ड समाज और सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी हर मानव का मौलिक अधिकार होना पाया जाता है। मौलिक अधिकार का तात्पर्य जागृत मानव स्वयं स्फूर्त विधि से अपने कार्य-व्यवहार प्रणालियों को व्यवस्था सम्मत, समाधान सम्मत और प्रामाणिकता पूर्ण पद्धति से प्रस्तुत होने से है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 245-247)**

- सम्पूर्ण प्रमाण वर्तमान में ही वैभवित होना देखा गया। संचेतना सहज विधि से जीवन शक्ति और बल को पूरक विधि से देने योग्य स्वरूप स्वयं में दायित्व है। व्यवहार और उत्पादन कार्यों में जीवन शक्तियों और बलों को अर्पित करना ही देने का तात्पर्य है। ऐसा दायित्व, कर्तव्यों के साथ ही अर्थात् व्यवहार, उत्पादन, व्यवस्था, समग्र व्यवस्था में भागीदारी के साथ ही प्रमाणित होता है। यही कर्तव्य का स्वरूप और महिमा है। ऐसे कर्तव्य और दायित्व हर व्यक्ति में चेतना विकास पूर्वक स्वीकृत हैं। इसलिये जागृति के उपरान्त प्रमाणित होना सहज है। जागृत मानव में दायित्व और कर्तव्य पूरक विधि से सम्पन्न होता ही रहता है। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 261)**

- जागृति सहज कार्यक्रम दायित्व और कर्तव्य के आधार पर ही सुयोजित हो पाता है। ऐसे सुयोजन परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था के रूप में सर्वसुलभ होता है। जागृति पूर्वक जीने की कला ही सुयोजना का साक्ष्य है। परिवार मूलक स्वराज्य-व्यवस्था में व्यवस्थापूर्वक ही अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी सम्पन्न होना पाया जाता है। इसी सत्यवश, यही सत्यता मानव परंपरा में सर्वतोमुखी समाधान, समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व के रूप में प्रमाणित होता है; जिसका अक्षुण्णता सहज होना पाया जाता है। मानव का अभीष्ट सदा-सदा से ही और सदा-सदा के लिये शुभ ही शुभ होना देखा गया है। ऐसा सार्वभौम शुभ अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था रूपी कार्यक्रम ही है। ऐसा कार्यक्रम स्वाभाविक रूप में ही जागृति सहज शिक्षा-संस्कार विधि से स्पष्ट हो जाती है। मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार अपने-आप में अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिन्तन, मध्यस्थ दर्शन (सह-अस्तित्ववाद) के रूप में स्पष्ट हो जाता है। यही सह-अस्तित्व दर्शन ज्ञान, जीवन ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान सम्पन्नता सहित होने वाले अध्ययन, अवधारणा, अनुभव है। सह-अस्तित्व में अनुभव के आधार पर ही अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था का प्रमाण मानव परंपरा में ही प्रमाणित होना समीचीन है। यही जागृति का द्योतक है। मानवीयतापूर्ण परंपरा का प्रमाण मानवीय शिक्षा-संस्कार सुलभता, न्याय-सुरक्षा सुलभता, विनिमय-कोष सुलभता, **उत्पादन-कार्य** सुलभता और स्वास्थ्य-संयम सुलभता ही है। इन्हीं पाँच आयामों के योगफल में संस्कृति, सभ्यता, विधि, व्यवस्था अपने-आप प्रमाणित होता है और अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था का स्वरूप और उसकी निरंतरता बना ही रहता है। ऐसे भागीदारी में दायित्व, कर्तव्य का प्रमाण हर मानव में, से, के लिए सहज सुलभ होता है। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 263 -264)**
- ग्राम-मुहल्ला सभा से मनोनीत-अनुशासित पाँच समितियों का कार्यरत रहना स्वराज्य व्यवस्था का वैभव है। इन वैभव के सफलताओं को देखने सुनने के लिये पूरे ग्राम मुहल्लावासी को उत्सुक रहना आवश्यक है। ग्राम सभा से निश्चित नियंत्रित विधि से एक-एक समिति का मूल्यांकन कार्यक्रम का तौर-तरीका जो अपनाये गये थे उसके आधार पर सफलता का समारोह सम्पन्न करना आवश्यक रहता ही है। इसका समयावधि ग्राम सभा के समयानुसार सम्पन्न होना व्यवहारिक है। इसी के अनुसार न्याय-सुरक्षा समिति के सफलताओं को समीक्षा कर पूरा ग्रामवासियों को अवगाहन कराने का कार्य सम्पन्न किये जाने के रूप में देखने को मिलता है। इससे सम्पूर्ण ग्रामवासी न्याय-सुरक्षा सुलभ होने में विश्वस्त एवं आश्वस्त होने का अवसर समारोह समय में स्वाभाविक रूप में देखने को मिलता है। इसी उमंग के साथ भविष्य के प्रति भरोसा करना स्वाभाविक होता है। वर्तमान तक की सफलता भविष्य के प्रति आश्वस्तता का हर संगम स्थिति, गति, उत्साह और प्रसन्नता के स्वरूप में ही प्रमाणित होना देखा गया है। इसी प्रकार **उत्पादन-कार्य** समिति, विनिमय-कोष समिति, स्वास्थ्य-संयम कार्य समिति, मानवीयतापूर्ण शिक्षा-संस्कार समितियों का वर्तमान तक के सफलता, भविष्य में आश्वस्त होने का सफल योजना के अवगाहन तक का समारोह प्रसन्नता में अभिभूत होना, स्वाभाविक है। ऐसी अभिभूति के साथ ही हर्ष ध्वनि सफलता का कीर्ति गायन, भविष्य में सफलता का आकांक्षा, सम्भावना सहित कर्तव्यों और दायित्वों की स्वीकृति और उसका उद्गार सहित हर्ष ध्वनि गीत-संगीत का वातावरण बनाया जाना समारोह-वैभव का प्रतिष्ठा रहेगा। अस्तु, ग्राम सभा बनाम पाँचों समितियों सहित सफलता का आंकलन अग्रिम योजनाओं का प्रकाशन समारोह का सारतत्व रहेगा। यही व्यवस्था मूलक समारोहों की महिमा है। इसी प्रकार हर स्तरीय समितियों में समारोह कार्य सम्पन्न होना स्वाभाविक रहेगा। यह विश्व परिवार पर्यन्त व्यवहारान्वयन होना देखने को मिलता है। सम्पूर्ण मानव इस धरती मे समारोह और उत्साहपूर्वक संतुष्ट होते हैं। इसकी नित्य समीचीनता जागृति परंपरा पर्यन्त बनी ही रहेगी। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 292-293)**
- **उत्पादन-कार्य का मूल्यांकन** :- पहले इन तथ्यों को स्पष्ट किया जा चुका है कि हर स्तरीय परिवार में आवश्यकता से अधिक उत्पादन एक अनिवार्य स्थिति है, सहज स्थिति है, आवश्यकीय स्थिति है। क्योंकि आवश्यकता से अधिक उत्पादन विधि से ही शरीर पोषण, संरक्षण समाज गति सम्पन्न हो पाता है। और इसके मूल में जीवन जागृति पूर्वक ही समाज गति सार्थक होता है। सार्थकता का स्वरूप सह-अस्तित्व और तृप्ति है। सह-अस्तित्व में सदा-सदा उभयतृप्ति होना देखा गया है। यह भी विश्लेषण पूर्वक स्पष्ट किया जा चुका है। इस आधार पर शरीर पोषण, संरक्षण और समाज गति में तन, मन, धन रूपी अर्थ का सदुपयोग-सुरक्षा विधि से ही सम्भावित होना

देखा गया। उत्पादित वस्तु ही धन है। मन का तात्पर्य जीवन शक्तियों से व निपुणता, कुशलता, पांडित्यपूर्ण मानसिकता से है। मन और तन समेत ही मानव हर कार्य-व्यवहार करता है। जागृतिपूर्वक किये जाने वाले हर कार्य का फलन उत्पादित वस्तुओं के रूप में प्रधान रूप में मिलता है। यही वस्तुएँ धन के रूप में गण्य होना पाया जाता है। इस प्रकार तन, मन, धन के संयुक्त रूप में ही उपयोग, सदुपयोग व प्रयोजनों को पहचाना जाता है। उपयोगिता के आधार पर उत्पादित वस्तु का मूल्यांकन होता है। सदुपयोगिता विधि से ही सह-अस्तित्व और उभय तृप्ति रूपी प्रयोजन सिद्ध हो जाता है। इससे यह भी स्पष्ट है कि जागृति सहज सम्पूर्ण तृप्ति बिन्दुएँ संतुलन सहज है न कि सापेक्ष।

संतुलन का सहज रूप व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी ही है। इसके मूल में परस्पर पहचान और निर्वाह स्वाभाविक प्रक्रिया है। यह अस्तित्व सहज सह-अस्तित्व की ही महिमा है। यही परस्परता, पहचान और निर्वाह का सूत्र है। इसकी व्याख्या हर अवस्था में हर इकाई करती ही रहती है। इसका नित्य प्रमाण सत्ता में संपृक्त प्रकृति सहज पहचान-निर्वाह, परमाणु अंशों के परस्परता में पहचान-निर्वाह, परस्पर परमाणुओं में पहचान-निर्वाह, परस्पर अणुओं में पहचान और निर्वाह, परस्पर रचनाओं में पहचान-निर्वाह, प्राणावस्था में बीजानुषंगीय विधि से पहचान-निर्वाह, जीव संसार में वंशानुषंगीय पहचान-निर्वाह करना स्पष्ट है। ज्ञानावस्था में मानव संस्कारानुषंगीय (जानने, मानने के आधार पर) सह-अस्तित्व रूप में परिवार व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी के रूप में पहचान-निर्वाह दृष्टव्य है। यह जागृति सहज रूप में स्पष्ट है। इसी क्रम में मानव संस्कारानुषंगीय व्यवस्था, बहुमुखी अभिव्यक्ति और संप्रेषणशील होने के आधार पर प्रधानत: पाँचों आयामों में मानव में, से, के लिये मूल्यांकन एक आवश्यकता के रूप में समीचीन रहता है। इसी क्रम में एक आयाम **उत्पादन-कार्य** है।

हर उत्पादन मानव में निहित, मानव सहज निपुणता, कुशलता, पांडित्य सहित सहज मानसिकता पूर्वक शरीर के द्वारा प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन करने के फलस्वरूप वस्तुओं में उपयोगिता और कला मूल्य स्थापित होता है। यही उत्पादन का अथ-इति है। ऐसे उत्पादित वस्तुओं का विनिमय इसलिये आवश्यक हुई कि हर परिवार में निश्चित कुछ वस्तुओं का उत्पादन करना समीचीन, संभव और क्रियान्वित रहता है। जबकि हर परिवार को जो उत्पादन सहज सम्पन्न रहते हैं उन वस्तुओं से भिन्न अन्य वस्तुओं की आवश्यकता बनी रहती है। इसलिये विनिमय प्रणाली है।

हर वस्तु उपयोगिता के आधार पर मूल्यांकित होता है। सभी उपयोगिताएँ महत्वाकांक्षा-सामान्याकांक्षा के रूप में परिगणित होते हैं। इन सभी मूल्यांकन की सफलता समृद्धि के अर्थ में होना ही लक्ष्य है। यह हर परिवार मानव का स्वीकृत लक्ष्य है। समाधानपूर्वक ही समृद्धि का प्रमाण होना पाया जाता है। समाधान सदा-सदा तन, मन, धन रूपी अर्थ का सदुपयोग इसके फलन में सुरक्षा ही है। इस प्रकार सदुपयोग सुरक्षा के बिन्दुओं के आधार पर ही तृप्ति बिन्दु और उभय तृप्ति नित्य प्रमाण होना पाया जाता है। इसी आधार पर हर स्तरीय परिवारों में उत्पादन और समृद्धि का मूल्यांकन होना सहज है। सदुपयोग धर्म सूत्र से सुरक्षा राज्य सूत्र से संबंध रहता है।

उत्पादन-कार्य समिति का मूल्यांकन भी उक्त आधारों पर सफलता मूल्यांकित हो पाता है। **उत्पादन-कार्य** समिति में भागीदारी करते हुए सदस्यों का मूल्यांकन समीचीन समय में परिवार और ग्राम में किये जाने वाले उत्पादन के प्रति जागृति ही है। यही पूरे ग्राम परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन को प्रमाणित करता है। यही मूल्यांकन छोटे से छोटे परिवार केवल परिवार सभा के नाम से इंगित कराया गया है। जिसमें कम से कम 10 व्यक्तियों का भागीदारी को स्पष्ट किया गया है। ऐसे छोटे परिवार में ही उत्पादन आवश्यकता के आधार पर उपलब्धि के रूप में प्रमाणित होना ही **उत्पादन-कार्य**, **उत्पादन-कार्य** समितियों के सफलता का मूल्यांकन है। यह परिवार सभा से विश्व परिवार सभा पर्यन्त हर स्तरीय परिवार सभाओं में **उत्पादन-कार्य** एक निश्चित आयाम, उसके लिये सटीक व्यवस्था वांछनीय रहता ही है। इसी क्रम में विश्व परिवार सभा में भी आवश्यकता से अधिक

उत्पादन का प्रमाण होना जिसमें सभी प्रधान राज्य सभा का भागीदारी निर्वाचन पूर्वक सम्पन्न हुआ रहता है। वह अपने में अर्थात् सम्पूर्ण प्रधान राज्य सभा में और विश्व राज्य सभा में आवश्यकता से अधिक उत्पादन का प्रमाण उत्पादित वस्तुओं का राशि (समूह, ढेर) के रूप में होना विश्व समृद्धि का द्योतक होना स्वाभाविक है। इसी प्रकार प्रधान राज्य परिवार सभा, मुख्य राज्य परिवार सभा, मण्डल समूह परिवार सभा, मण्डल परिवार सभा, क्षेत्र परिवार सभा, ग्राम समूह परिवार सभा, ग्राम परिवार सभा, परिवार समूह सभा और परिवार सभा इनमें सभी स्तरों में समृद्धि का अनुभव होना ही अर्थात् सामान्य आकांक्षा, महत्वाकांक्षा सम्बन्धी वस्तुओं का समृद्ध रहना ही **उत्पादन-कार्य** और **उत्पादन-कार्य** समितियों के सफलता का प्रमाण है। इसका मूल्यांकन समितियों में भागीदारी करने वाले मिलकर करेंगे और समितियों के हर व्यक्ति अपने-अपने विधि से मूल्यांकन करेंगे और सभा में भागीदारी करता हुआ सभी सदस्यों के ग्राम परिवार सभा से विश्व परिवार सभा तक हर सभा का मूल्यांकन करेंगे। इसमें भी उभयतृप्ति बनी ही रहती है। इस प्रकार **उत्पादन-कार्य** और समितियों के मूल्यांकन में उभय तृप्ति का स्वरूप सह-अस्तित्व सहज विधि से प्रमाणित होता है। **(अध्याय:10, पृष्ठ नंबर: 301- 306)**

आवर्तनशील अर्थशास्त्र

(संस्करण: 2009)

- परिवार का तात्पर्य सीमित संख्यात्मक स्वायत्त नर-नारियों का न्याय पूर्वक सहवास रूप है। यह अपने आप में स्वयं स्फूर्त विधि से परस्पर संबंधों को पहचानना मूल्यों को निर्वाह् करना, मूल्यांकन करना और उभय तृप्ति पाना होता है। इसी के साथ-साथ समझदार परिवारगत **उत्पादन कार्य** में परस्पर पूरक होना, परिवार की आवश्कता से अधिक उत्पादन करना अथवा होना होता है। यही परिवार का कार्यकलाप का प्रारंभिक स्वरूप है। संबंध, मूल्य, मूल्यांकन विधि से समाज रचना और अखंड समाज होना पाया जाता है अथवा संभावनाएं है ही। समाज रचना विधि ही व्यवस्था का आधार है। व्यवस्था का स्वरूप पांचों आयामों में यथा

  1. न्याय सुरक्षा,
  2. **उत्पादन कार्य**
  3. विनिमय कोष
  4. स्वास्थ्य संयम, और
  5. शिक्षा संस्कार

  कार्यकलापों के रूप में प्रमाणित हो पाता है और उसकी निरंतरता संभावित है। सभी आयामों में भागीदारी को निर्वाह् करना ही समग्र व्यवस्था में भागीदारी का तात्पर्य है। ऐसी व्यवस्था सार्वभौम होने की संभावना समीचीन है जिसकी अक्षुण्णता मानव परंपरा में भावी है। ऐसी व्यवस्था को कम से कमएक गाँव से आरंभ करना और सभी आयामों में भागीदारी को निर्वाह करने योग्य अर्हता सें समूचे ग्राम वासियों को सम्पन्न करना एक आवश्यकता है। ऐसे अर्हता से सम्पन्न परिवार मानव और परिवार कम से कम 100 परिवार के सह-अस्तित्व में परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था समझदारी पूर्वक प्रमाणित हो पाता है। ऐसी परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था में ही आवर्तनशील अर्थशास्त्र चरितार्थ होना सहज संभव है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 30 -31)**

- जीवन में बोध और ऋतम्भरा क्रियाएं हर जागृत मानव में होना पाया जाता है। ये क्रियाएं जागृति की दूसरी सीढ़ी है। जागृति का पहला सीढ़ी चिन्तन ही है, जिससे मूल्यों का पहचान हो पाता है फलत: मूल्यांकन सम्पन्न हो पाता है। इसलिए न्याय सुलभ होना भी सहज हो जाता है। पाँचवें क्रियाकलाप में मूल्य, धर्म और सत्य बोध होना पाया जाता है अर्थात् सह-अस्तित्व रूपी परम सत्य बोध व प्रमाण, मानवीयता पूर्ण स्वभाव धर्म रूपी मूल्यों का बोध होना ही बोध का तात्पर्य है। ऐसे अनुभव व प्रमाण बोध के उपरान्त व्यवस्था में जीने, समग्र व्यवस्था में भागीदारी को निर्वाह करने का संकल्प होता है। बोध और संकल्प की महिमा ही है अस्तित्व सहज, वस्तु सहज, स्थिति सहज, गति सहज, विकास सहज, जागृति सहज सत्यता बोध और निर्वाह करने की निष्ठा, संकल्प के रूप में होता ही है। इस प्रकार जागृत जीवन मूल्यों का साक्षात्कार बोध और संकल्प पूर्वक निष्ठापूर्ण कार्यप्रणाली मानव कुल में प्रमाणित होना ही परिवार व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी का प्रमाण है। कम से कम परिवार में व्यवस्था का स्वरूप, कार्य, प्रयोजन स्पष्ट होता है। व्यवस्था का स्वरूप संबंधों को पहचानने के रूप में, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन, **उत्पादन कार्य** में भागीदारी के रूप में स्पष्ट हो जाता है। प्रयोजन अपने आप में कार्य व्यवहार से ही स्पष्ट होना पाया जाता है वह समाधान और समृद्धि है। इस प्रकार बोध पूर्वक प्रवर्तन अर्थात् अभिव्यक्ति, संप्रेषणा और प्रकाशन ही अनुभव बोध सहित होने रहने के आधार पर संकल्पों की दृढ़ता निष्ठा के रूप में प्रमाणित होती है। इस तथ्य को हर व्यक्ति में अध्ययन किया जा सकता है और वैभव की आवश्यकता पूरकता प्रत्येक नर-नारी में देखने को मिलता ही है, इसलिए अध्ययनपूर्वक न्याय, धर्म, सत्य बोध करना एक व्यवहारिक सत्य के रूप में अनुभव किया गया और आंकलित किया गया। इससे सर्वमानव पारंगत को समृद्ध संपन्न होने के लिए मानव परंपरा ही जागृत होने की आवश्यकता है। परंपरा का स्वरूप मानवीयतापूर्ण शिक्षा, मानवीयतापूर्ण संस्कार, मानवीयतापूर्ण संविधान और मानवीयतापूर्ण व्यवस्था के रूप में ही नित्य वैभव और गति होना ही सार्थकता है। ऐसी सार्थक स्थिति को परंपरा में प्रमाणित करने के लिए सह-अस्तित्व दर्शन ज्ञान, जीवन ज्ञान, मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान को अध्ययनगम्य करना ही होगा। इस विधि से मानव परंपरा जागृत होने और वैभवित होने की संभावनाएं स्पष्ट है। इसी क्रम में आवर्तनशीलता का साक्षात्कार

भी एक अनिवार्य बिन्दु है। यह स्वयं अर्थात् जीवन ज्ञान, अस्तित्व दर्शन ज्ञान, मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान पूरकता विधि से आवर्तनशील है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 39-41)**

- अर्थशास्त्र का तात्पर्य तन, मन, धन रूपी अर्थ का सदुपयोग, सुरक्षा और समृद्धि के रूप में दृष्टव्य है। जागृत मानव में स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन, व्यवसाय में स्वावलंबी, व्यवहार में सामाजिक रूप से पाया जाता है। यही परिवार मानव का स्वरूप है। जागृत मानव परिवार अपने में परस्पर संबंधों को निश्चित रूप में पहचानने, मूल्यों को निर्वाह करने, मूल्यांकन पूर्वक परस्पर उभयतृप्ति पाने के रूप में देखा जाता है। ऐसे परिवार में अपनाए गए **उत्पादन कार्य** में स्वयं स्फूर्त विधि से परिवार का हर व्यक्ति पूरक होना पाया जाता है। फलत: परिवार की आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का उत्पादन हर परिवार में समीचीन रहता ही है। परिवार में उभयतृप्ति और उसकी निरंतरता और आवश्यकता से अधिक उत्पादन उसका सदुपयोग और सुरक्षा यह स्वयं में आवर्तनशील है।इससे स्पष्टतया समझ में आता है कि मानवीयतापूर्ण परिवार में आवश्यकताएं सीमित हो जाती है क्योंकि उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजनशीलता निश्चित होता है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 52)**
- आवर्तनशीलता वर्तुलाकार में होना समझ में आता है। आवर्तनशील अर्थशास्त्र का तात्पर्य तन, मन, धन रूपी अर्थ का सदुपयोग, सुरक्षा और समृद्धि के रूप में दृष्टव्य है। यह आवर्तनशील होना पाया जाता है। मन मूलत: जीवन में अविभाज्य कार्य कलाप है। जीवन शक्ति रूपी आशा, विचार, इच्छाएं, संकल्प अनुभवपूत होकर अर्थात् अनुभवमूलक विधि से शरीर के माध्यम से प्राकृतिक ऐश्वर्य पर निपुणता कुशलतापूर्वक श्रम नियोजन कार्य को करता है। श्रम नियोजन के फलस्वरूप उपयोगिता और कलामूल्य सम्पन्न वस्तुए उत्पादित होती है। यही धन है। अनुभवपूत मन अथवा अनुभव से अनुप्राणित मन निपुणता, कुशलता, पांडित्य को शरीर के द्वारा संप्रेषित अभिव्यक्त करता है। मानव परंपरा में जीवन प्रमाणित होने के लिए मानव शरीर की अनिवार्यता समझ में आती है। इस प्रकार अर्थोपार्जन के लिए तन एक महत्वपूर्ण वस्तु है। शरीर का उपयोग करने वाला वस्तु जीवन ही है। जीवन में से मन अधिकांश शरीर को उपयोग करता है। क्रम से अनुभव, बोध, चिंतन, तुलन सम्मत विधि से मन शरीर का उपयोग करता है तभी शरीर का सदुपयोग होना प्रमाणित होता है। शरीर की सुरक्षा के लिए जीवन सदा ही शरीर को जीवंत बनाए रखता है। मानव शरीर को जीवंत बनाए रखने में मन ही प्रयोजित रहता है। प्रयोजित रहने का तात्पर्य प्रयोजनों के अर्थ में योजित रहने से है। योजित रहने का तात्पर्य पूरकता सहवास के रूप में होने से है। शरीर जीवंत रहना शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंधेन्द्रियों का कार्य जीवन स्वीकृत अथवा जीवन के द्वारा दृश्यमान होने के रूप में स्पष्ट होता है। शब्द के द्वारा व्यंजित होना कर्ण यंत्र से पहचाना जाता है फलस्वरूप शब्द का अर्थ अस्तित्व में कोई न कोई वस्तु, मूल्य, स्थिति-गति पद के अर्थों में से कोई न कोई अर्थ स्वीकृत होता है, साक्षात्कार होता है। इसी प्रकार अन्य सभी इन्द्रियों में व्यंजना के साथ उसका अर्थ साक्षात्कार होना पाया जाता है। साक्षात्कार विधि जानने-मानने-पहचानने-निर्वाह के रूप में अध्ययन स्पष्ट होता है। इसे हर व्यक्ति अपने में परीक्षण कर सकता है निर्वाह करने में भी परस्पर व्यंजनापूर्वक अर्थ साक्षात्कार स्वीकृतियाँ हो पाता है। इस विधि से धन, तन द्वारा मन के लिए अर्थात् जीवन के लिए, उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजनों के रूप में साक्षात्कार होता है। यही अर्थ सार्थकता है। जीवन शक्तियाँ श्रम नियोजनपूर्वक उपयोगिता मूल्य, कला मूल्य रूपी अर्थ को स्थापित करती हैं। यही वस्तु मूल्य का यथार्थ स्वरूप होने के रूप में मूल्यांकित हो जाता है। इसी आधार पर सदुपयोगिता, प्रयोजनीयता के निश्चित आधारों पर जीवन में संतुष्टियाँ शरीर पुष्टि उत्पादन में वस्तुओं का नियोजन रूपी उपयोगिता विधि से उपयोगिता का मूल्यांकन और उससे होने वाली तृप्ति समग्र व्यवस्था में जीने की कला समेत वस्तुओं का नियोजन वस्तु का परम प्रयोजन के रूप में मूल्यांकित होता है। इस प्रकार जीवन शक्तियों का परावर्तन विधि से प्राकृतिक वस्तुओं में उपयोगिता व कला मूल्यों की स्थापना और उसकी उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनीयता से तृप्ति और उसकी नित्य संभावना एक आवर्तनशील साक्ष्य है। इसे प्रत्येक मानव जीवन, शरीर और प्रकृति सहज नैसर्गिकता सहित प्रयोग कर सकता है। निरीक्षण-परीक्षण पूर्वक निष्कर्षों को सत्यापित और प्रमाणित कर सकता है। प्रत्येक मानव में तन-मन-धन रूपी अर्थ होता ही है। होना वर्तमान में, से, के लिए ही है। इनमें परस्पर पूरकता स्वयं आवर्तनशीलता का साक्ष्य है। मन से संचालित शरीर,

मन और तन के संयुक्त प्रयोग से वस्तु मूल्यों का प्रकटन, पुन: वस्तु मूल्यों का शरीर के लिए उपयोगी, जीवन के लिए तृप्तिदायी होना एक आवर्तनशीलता है। यह प्रत्येक स्वायत्त मानव में प्रमाणित होना पाया जाता है। स्वायत्त मानव को स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन, व्यवसाय में स्वावलंबी, व्यवहार में सामाजिक रूप में होना पाया जाता है। स्वायत्त मानव ही परिवार मानव का स्वरूप है। ऐसे समझदार मानव एक से अधिक मानव लक्ष्य के अर्थ में सहवास विधि से जीना ही व्यवस्था का स्वरूप है। परिवार अपने में परस्पर संबंधों को निश्चित रूप में पहचानने मूल्यों को निर्वाह करने, मूल्यांकन पूर्वक परस्पर तृप्ति उभय तृप्ति पाने के रूप में देखा जाता है। ऐसे परिवार में अपनायी गई **उत्पादन कार्य** में स्वयं स्फूर्त विधि से परिवार का हर व्यक्ति पूरक होना पाया जाता है। फलत: परिवार की आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का उत्पादन हर परिवार में समीचीन रहता ही है। यह भी अर्थात् परिवार में उभयतृप्ति, उसकी निरंतरता और आवश्यकता से अधिक उत्पादन, उसका सदुपयोग और सुरक्षा, यह स्वयं में आवर्तनशील है। इससे स्पष्टतया समझ में आता है कि मानवीयतापूर्ण परिवार में आवश्यकताएं सीमित हो जाती है क्योंकि उपयोग, सुदपयोग, प्रयोजनशीलता निश्चित होता है। फलस्वरूप आवश्यकता से अधिक उत्पादन हर परिवार में संभव है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 53-56)**

- मानवीयतापूर्ण अनेक परिवार परस्पर उपकार सहयोग विधि से व्यक्ति स्वायत्तता और परिवार स्वायत्तता सहित ग्राम मुहल्ला स्वायत्तता के रूप में प्रमाणित होना मानवीयता पूर्ण परिवार विधि से सहज है। एक ग्राम में 100 परिवार की कल्पना के रूप में एक इकाई के रूप में पहचाना जा सकता है। हरेक परिवार में 10-10 व्यक्तियों के रूप में जनसंख्या स्पष्ट होती है। धरती-वायु-जल-वन-खनिज ही श्रम नियोजन स्थली है। प्रत्येक गाँव के आहार-आवास-अलंकार रूपी वस्तुओं का तादात गुणवत्ता निश्चित हो जाता है। इसी के साथ-साथ औषधि संबंधी आवश्यकता और उसका आंकलन भी निश्चित होती है। इसी के आधार पर 100 परिवार में **उत्पादन कार्यों** का परस्पर वितरण भी संभव है। सर्वाधिक आहार उसके बाद अलंकार और औषधि; इसके बाद आवास और आवास रचना के लिए आवश्यक वस्तुओं के निर्माण कार्यों को कुटीर उद्योग, ग्रामोद्योग पूर्वक संपन्न कर लेने की स्थिति को और कृषि, गोपालन विधियों से पूरे गाँव की आवश्यकता से अधिक उत्पादन होना सहज है। जिस गाँव में कोई विशेष उत्पादन नहीं हो पाता है उसको अन्य स्रोतों से उत्पादन जो अधिक है उसे देकर वांछित वस्तुओं को पा लेना भी बहुत सहज है ऐसी स्थिति में आवर्तनशीलता पुन: सहवास और सम्बन्ध विधि से स्पष्ट हो जाता है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 56-57)**
- पूरे गाँव में आवर्तनशीलता को इस प्रकार पहचानना आवश्यक और सहज है कि प्रत्येक परिवार समूचे ग्राम परिवारों के साथ एक दूसरे को किसी संबंध से पहचानते हैं, मूल्यों का निर्वाह करते हैं मूल्यांकन करते हैं। सदा तृप्ति मिलती ही रहती है। दूसरा श्रम मूल्यों के आधार पर वस्तु मूल्यों का मूल्य निर्धारित करते हैं और परस्पर विनिमय करते हैं। हर परिवार में आवश्कता से अधिक **उत्पादन कार्य** स्पष्ट रहता ही है। इस प्रकार वस्तुओं का उत्पादन, विनिमय और न्याय-सुरक्षा कार्यकलाप एक दूसरे से पूरक विधि से आवर्तनशील होते हैं। क्योंकि श्रम नियोजन, श्रम मूल्य में सामरस्यता, संबंध और मानव मूल्य, स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य में सामरस्यता और उसका नित्य गति के रूप में व्यवहार और विनिमय एक-दूसरे के लिए पूरक होते हैं और नित्य गतिशील रहते हैं इस प्रकार इसकी आवर्तनशीलता समझ में आती है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर:57)**
- समूचे व्यवस्था का अर्थात् एक परिवार से विश्व परिवार, मानव व्यवस्था को पहचानने-निर्वाह करने के क्रम में दस सीढ़ियों में पहचानना सहज है। यथा
    1. परिवार सभा व्यवस्था
    2. परिवार समूह सभा व्यवस्था
    3. ग्राम परिवार सभा व्यवस्था
    4. ग्राम समूह परिवार सभा व्यवस्था
    5. ग्राम क्षेत्र परिवार सभा व्यवस्था
    6. मंडल परिवार सभा व्यवस्था
    7. मंडल समूह परिवार सभा व्यवस्था

8. मुख्य राज्य परिवार सभा व्यवस्था
9. प्रधान राज्य परिवार सभा व्यवस्था और
10. विश्व राज्य परिवार सभा व्यवस्था।

इन दसों सीढ़ियों का अन्तर संबंध हर एक व्यक्ति 10 व्यक्ति को अथवा हर 10 व्यक्ति एक-दूसरे को मानव सहज संबंधों के रूप में पहचानने, उसमें निहित मूल्यों को निर्वाह करने के रूप में समझा गया है। इस क्रम में एक परिवार सभा से कम से कम 10 व्यक्ति होना मानते हुए इसे चित्रित किया गया है। 10 व्यक्ति में से एक व्यक्ति को किसी निश्चित काल तक परिवार समूह सभा व्यवस्था में भागीदारी को निर्वाह करने के लिए निर्वाचित करेंगे। ऐसे 10 परिवारों में से निर्वाचित एक-एक व्यक्ति मिलकर एक परिवार समूह सभा के रूप में कार्य करना होगा। ऐसे 10 परिवार समूह सभाएं अपने में से एक-एक व्यक्ति निर्वाचित करेंगे। ऐसे 10 व्यक्ति मिलकर एक ग्राम मोहल्ला स्वराज्य परिवार सभा व्यवस्था गठित करेंगे। यही निर्वाचित 10 व्यक्ति मिलकर, ग्राम के कम से कम 1000 व्यक्ति में से ही 5 समितियों को मनोनीत करेंगे। ये 5 समितियाँ क्रम से 1.न्याय-सुरक्षा, 2**.उत्पादन-कार्य,** 3.विनिमय-कोष, 4.शिक्षा-संस्कार और 5.स्वास्थ्य-संयम समितियाँ रहेंगी। इसमें मूलत: महत्वपूर्ण मुद्दा यही है परिवार के सभी सदस्यों को स्वयं पर विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन, व्यवसाय में स्वावलंबी, व्यवहार में सामाजिक योग्य क्षमता-योग्यता-पात्रता को स्थापित करने के उपरांत ही परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था सभा का गठन करना सहज है। ऐसे 10-10 व्यक्तियों का 10 ग्राम स्वराज्य परिवार सभाओं में से 1-1 व्यक्ति को निर्वाचित करेंगे। ऐसे 10 व्यक्ति मिलकर एकग्राम समूह परिवार सभा का गठन करेंगे। और इसमें भी पांच आयाम रूपी समितियों को मनोनीत व्यक्तियों से गठित करेंगे। इसी प्रकार क्रम से प्रधान राज्य परिवार सभा का गठन, पाँचों आयाम रूपी समितियों का मनोनयन सम्पन्न होगा। इस धरती पर जितने भी प्रधान राज्य परिवार सभाएं होंगी वे सब अपने-अपने निर्वाचित सदस्यों को पहचानने, इस प्रकार विश्व परिवार सभा व्यवस्था भी मनोनयन पूर्वक 5 व्यवस्था समितियों को गठित करेगा। ये सभी समितियाँ ग्राम से विश्व तक अंतर सम्बन्धित रहना होगा। सभी स्तरीय सभाएं इन पाँचों समितियों का मूल्यांकन करते हुए श्रेष्ठता की ओर कार्य और प्रयोजन पर बल देते रहना बनता है। इस विधि से भविष्य का हर क्षण उत्सव मय होना समझ में आता है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 58-60)**

- सम्पूर्ण उत्पादनों को कृषि, पशुपालन और उद्योग के रूप में समझा गया है। कृषि व पशुपालन संबंधी **उत्पादन कार्य** भी लाभाकांक्षा में आना सहज रहा। बाकी सभी व्यापार कार्य में प्रसक्त हुए। फलत: कृषि भी लाभाकांक्षा से पीड़ित होता रहा। चाहे कृषि उपज हो अथवा प्रोद्योगिकी उपज हो, लाभाकांक्षा बनी ही है। इतना ही नहीं शिक्षा और ज्ञान संबंधी आदान-प्रदान भी व्यापारोन्मुखी लाभाकांक्षी संग्रहवादी होने के कारण से भोगोन्मादी समाजशास्त्र का प्रचलन हुआ। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 97)**
- जागृति मूलत:, आमूलत: अथवा सम्पूर्णतया सहज होना, प्रमाणित होना तब संभव हुआ जब अथवा जिस क्षण में जीवन ज्ञान, अस्तित्व-दर्शन ज्ञान, मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञान में पारंगत और प्रमाणित हुए। सम्पूर्ण अस्तित्व ही सह-अस्तित्व के रूप में प्रमाणित होना तभी संभव हो पाया जब जीवन में जागृति संभव हुई। जीवन का स्वरूप रचना, शक्ति, बल, लक्ष्य के संबंध में विभिन्न स्थली में स्पष्ट किया जा चुका है। जीवन रचना, गठनपूर्ण परमाणु (चैतन्य इकाई) सभी मानव में समान है, इसी प्रकार जीवन शक्ति और बल अक्षय होने के कारण समान और जीवन का लक्ष्य केवल जागृति होने के कारण सभी नस्ल, रंग, जाति, वर्ग, मत, संप्रदाय, भाषा, देश में रहने वाले सभी मानव में समान होना पाया जाता है। यही जीवन ज्ञान पर आधारित विचार है और शास्त्रों को प्रणयन और अवलोकन करने का आधार है। जीवन ज्ञान हर व्यक्ति में, से, के लिए; हर देश काल में संभव है। इसी आधार पर आवर्तशील अर्थशास्त्र का प्रणयन भी संभव हुआ। अस्तु, जीवन ज्ञान और अस्तित्व दर्शन का सहज प्रमाण में ही आवर्तनशीलता को अर्थशास्त्र विधा में पहचानना सहज है। इस तारतम्य में यह भी ध्यान में रहना आवश्यक है कि आवर्तनशील अर्थशास्त्र और व्यवस्था को साक्षात्कार करने के लिए, दूसरे भाषा में देखने के लिए जीवन ज्ञान अथवा जीवन विद्या, अस्तित्व दर्शन में पारंगत होना, मानवीयता पूर्ण आचरण में प्रमाणित रहना आवश्यक है।

इसी आधार पर जागृति प्रमाणित हो पाती है और जागृतिपूर्वक मानव आवर्तनशील अर्थशास्त्र में जीना हो पाता है। इसके लिए यह भी बल मिलता है इस प्रकार आवश्यकता भी समीचीन हो गया कि अभी तक किये गये ईंधन स्रोत, **उत्पादन कार्य** विधि और विपुल उत्पादन और लाभ और संग्रह का लक्ष्य आधार अब पुनर्विचार के योग्य हो चुके हैं। इसके मूल में लक्ष्य विहीन संग्रह ही राष्ट्रीय अथवा अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा के आधार पर आधारित मूल्यांकन विधियों को पुनर्परिशीलन करने का कार्य इस अर्थशास्त्र के इस अध्याय में एक प्रधान बिन्दु है। इसके परिशीलन क्रम में स्वाभाविक ही सह-अस्तितव विधिपूर्वक ईंधन योजना स्रोत, संप्राप्ति विधाओं में भी परिशीलन और विकल्पों को पहचानने की आवश्यकता बलवती होगी। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 98-99)**

- इस धरती के मानव जहाँ तक **उत्पादन कार्यों** में पारंगत हो पाये हैं इसके लिए जो यंत्र संपादन विधि हस्तगत किये हैं यह कोई अर्थशास्त्र में व्यतिरेक पद्धति नहीं हैं। सह-अस्तित्ववादी अर्थव्यवस्था विरोधी उत्पादन केवल युद्ध सामग्री का निर्माण है। युद्ध मानसिकता सह-अस्तित्व विरोधी, मानवीयतापूर्ण मानसिकता के विरोधी होने के कारण, युद्ध सामग्री संबंधी सभी प्रकार के साधन अमानवीय होना स्पष्ट है। दूसरे विधि से युद्ध मानसिकता-युद्धाभ्यास किसी संस्कृति-सभ्यता का आधार नहीं हो पाया। जबकि भक्ति और विरक्ति सम्बन्धी मानसिकता से श्रेष्ठ संस्कृति की कल्पना करते हुये भी संभव नहीं हो पाया। संग्रह विधि से श्रेष्ठ संस्कृति की संभावना बनती हीं नहीं है। मानव जाति अभी तक इतना ही कर पाया है। अर्थशास्त्र का सूझ-बूझ संग्रह और युद्ध को बरकरार रखने के आधार पर ही विकसित हुई है। इन तथ्यों के आधार पर भी विचार करने पर पता लगता है लाभोन्मादी अर्थव्यवस्था के स्थान पर विकल्प की आवश्यकता है। अस्तु आवर्तनशील अर्थव्यवस्था को समझना एक स्वाभाविक एवं आवश्यकीय अध्ययन है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 99- 100)**
- पहला विचारणीय पक्ष सदा-सदा मानव तृप्त हो सकता है ? इसका उत्तर हाँ हो सकता है। इसके बाद इससे लगा पुन: प्रश्न होता है कैसे हो सकता है ? इसके उत्तर में साफ-साफ मानव ही विश्लेषण की वस्तु के रूप में दिखाई पड़ती है। हर मानव में संतुष्टि स्वीकृत है, असंतुष्टि स्वीकृत नहीं हैं। संतुष्टि पाने के लिए ही मानव परंपरा में अर्पित रहता है भले ही वह छोटा सा समुदाय क्यों न हो ? अभी तक मानव कुल विविध समुदाय में ही गण्य हो पाया है। इसीलिए हर मानव जन्म से मानव कुल में ही अर्थात् समुदाय में अर्पित होना दृष्टव्य है। मानव शरीर ही जीवन जागृति को व्यक्त करने योग्य रचना है। ऐसी शरीर रचना की परंपरा स्थापित है। हर समुदाय में भी ऐसे ही शरीर रचना होने के व्यवस्था बन चुकी है। मानव शरीर रचना में मुख्य अंग मेधस रचना ही है। मेधस रचना के साथ ही कार्यतंत्रणा और ज्ञान तंत्रणा विधि निहित है, जीवन ही इन तंत्रणा विधियों से ज्ञान तंत्रणा पूर्वक कर्म तंत्रणा सम्पन्न करता है। ज्ञान तंत्रणा को हम ज्ञानेन्द्रियों में पहचान सकते हैं। ज्ञानेन्द्रियाँ शब्द स्पर्श, रूप, रस, गंधात्मक साक्ष्यों सहित प्रमाणित है। इन्हीं क्रियाओं के साथ ही मानव को जीवंत रहना प्रमाणित होता है। इन क्रियाओं के लुप्त होने के उपरान्त ही मरणासन्न या मृत हो जाता है। इसमें मुख्य तथ्य यही है मेधस से जीवन में जुड़ी हुई ज्ञान तंत्रणा जब तक बनी रहती है अथवा सम्पादित हो पाती है तब तक शरीर यात्रा की सार्थकता मूल्यांकित होती है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवन शक्तियाँ ज्ञान तंत्रणा पूर्वक परावर्तित होते हैं। यही परावर्तन व्यवहार, उत्पादन और उपयोग क्रियाकलापों में साक्षित होता है। जीवन शक्तियों का परावर्तन क्रियाकलापों में से **उत्पादन कार्य** भी एक आयाम होना पाया जाता है। **उत्पादन कार्य** में मानसिकतापूर्वक श्रम नियोजन होना स्पष्ट है। श्रम नियोजन का आधारभूत वस्तुएं प्राकृतिक ऐश्वर्य ही है। इस प्रकार प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन का स्वरूप ही उत्पादन का स्वरूप प्रदान करता है। सभी उत्पादन में उपयोगिता मूल्य और कला मूल्य मूल्यांकित हो पाता है। ऐसी श्रम का मूल स्रोत जीवन शक्ति ही होना स्पष्ट हो चुकी है। ऐसे जीवन शक्तियां प्रत्यावर्तन में समृद्धि का अनुभव करना ही उद्देश्य है। हर मानव समृद्ध होना चाहता है। इसकी संभावना सहज है। इसका स्वरूप स्वायत्त मानव और परिवार मानव के रूप में क्रियान्वयन होता है। फलस्वरूप परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना सहज हो जाता है और परिवार के सभी सदस्य समाधान के साथ समृद्धि का अनुभव करते हैं। समाधान समृद्धि संतुष्टि का स्रोत है और इसकी निरंतरता होती है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 101- 103)**

- मानव में किंवा स्वयं में इन तथ्यों को देखा गया है कि समृद्धि का स्वरूप आवश्यकता से अधिक उपयोगितावादी वस्तुओं का संप्राप्ति और उसका उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजनशीलता से स्पष्ट होता है। यह भी स्पष्ट है कि संपूर्ण मूल्यांकन आशा, विचार, इच्छा सहित ही न्याय रूप में हो जाता है। श्रम मूलक वस्तु, वस्तुमूलक उपयोगिता, उपयोगितामूलक मूल्यांकन यह वस्तुओं का मूल्य निर्धारण करने की विधि है और आशा, विचार, इच्छा के अनुसार शरीर संचालन फलत: **उत्पादन कार्य** में श्रम नियोजन होना स्पष्ट है। यद्यपि जीवन शक्तियों को आशा, विचार, इच्छा, ऋतम्भरा और प्रमाण के रूप में आकलित होना पाया जाता है। ज्ञानेन्द्रियों के सह सान्निध्य में ही कर्मेन्द्रियों का क्रियाकलाप सार्थक रूप में कार्य करता हुआ देखने को मिलता है। इससे यह भी पता लगता है कि ज्ञानेन्द्रियाँ ही कर्मेन्द्रियों को नियंत्रित करता है। यही हस्तलाघव का तात्पर्य है। हस्तलाघव का फलन कार्य व्यवहार, विन्यासों में चित्रित हो पाती है जैसे एक लेखक लिखता हुआ, एक शिल्पकार शिल्पिभित्ति को निर्मित करता हुआ, चित्रकार चित्र भित्ति को स्पष्ट करता हुआ, एक उत्पादक अपने **उत्पादन कार्य** को संपादित करता हुए, एक कृषक कृषि कार्य को सम्पादित करता हुआ देखने को मिलता है। इसी क्रम में मानव को गृह कार्य, अतिथि, आगन्तुक आदि स्थितियों में देखने को मिलता है। यह कार्य हर स्थिति मानव परंपरा में से यही प्रमाणित होता है कि ज्ञानेन्द्रियों द्वारा ही कर्मेन्द्रियों को जीवन नियंत्रित करता हुआ कार्यकुशलता निपुणता और पाण्डित्य सभ्यता को प्रमाणित कर देता है अथवा प्रमाणित करने के लिए प्रयत्नशील रहता है। जागृतिपूर्वक प्रमाणित होना सहज है। जागृति पर्यन्त प्रयत्नशील रहना स्वाभाविक है। इस प्रकार श्रम नियोजन शिष्टता, सभ्यता संबंधी संपूर्ण विन्यास ज्ञानेन्द्रियों-कर्मेन्द्रियों का संयुक्त कार्यकलापों में देखा जाता है। ज्ञानेन्द्रियों का नियंत्रण आशा, विचार, इच्छा, ऋतम्भरा और प्रमाण जैसी अक्षय शक्तियों से सम्पन्न होता हुआ देखने को मिलता है। आशा, विचार, इच्छा, ऋतम्भरा व प्रमाण शक्तियाँ क्रम से चयन, विश्लेषण, चित्रण, संकल्प और प्रामाणिकताएं सम्प्रेषित हो पाता है यही परावर्तन में क्रम से और आस्वादन, तुलन, चिन्तन, बोध और अनुभव प्रत्यावर्तन के रूप में कार्य करता हुआ स्पष्ट होता है। यह क्रियाकलाप को आत्मा अनुभव के रूप में, बुद्धि बोध के रूप में, चित्त चिन्तन के रूप में, वृत्ति तुलन के रूप में और मन आस्वादन के रूप में जीवन सहज अक्षयबल को प्रमाणित करते हैं। यही मानव में होने वाला मौलिक क्रियाकलाप है। इसी के आधार पर आवश्यकता और संभावना, संपूर्ण शास्त्र को प्रमाणित करने के लिए हर व्यक्ति समीचीन है। इसके लिए नित्य स्रोत सह-अस्तित्व रूपी अस्तित्व अनुभूत प्रमाण ही है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 103-105)**

- अस्तित्व में ही यह धरती अविभाज्य है। इस धरती में ही मानव अविभाज्य है। संपूर्ण मानव का **उत्पादन कार्य** स्रोत इस धरती में ही विद्यमान पदार्थ, प्राण, जीवावस्था सहज वस्तुएं इन्हीं में कहीं श्रम नियोजन करने का अवसर हर व्यक्ति में, से, के लिए रहता ही है। यह धरती अपने वातावरण सहित सम्पूर्ण होना पाया जाता है क्योंकि यह धरती सभी ओर से विभिन्न प्रकार के विरल वस्तुओं से घिरा रहना पाया जाता है। जहाँ तक ऐसे विरल वस्तुएं इस धरती के सभी ओर घिरे हुए है वहाँ तक इस धरती का वातावरण होना पाया जाता है। यही इस धरती का वातावरण रेखा भी है। प्रमुख रूप से श्रम कार्य का क्षेत्र इस धरती पर ही होना पाया जाता है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 105)**
- अर्थशास्त्र विधा में आवर्तनशीलता स्वयं में श्रम नियोजन और श्रम विनिमय प्रणाली, पद्धति, नीति है। श्रम नियोजन और श्रम विनिमय साधारणतया समझ में आने वाल तथ्य यह है कि श्रम का अपना स्वरूप जीवन शक्ति रूपी मन और तन का संयुक्त रूप में स्थिति में पाई जाती है। यह स्वाभाविक रूप में जीवन शक्ति रूपी तकनीकी अर्थात् निपुणता-कुशलता-पाण्डित्य का नियोजन कार्य प्रणाली है। सम्पूर्ण निपुणता-कुशलता आशा, विचार इच्छा रूपी जीवन क्रियाकलापों का वैभव अथवा महिमा के रूप में विद्यमान रहना पाया जाता है। चित्त में से आवश्यकता के आधार पर चित्रण कार्यकलाप सहित विश्लेषण सम्मत विधि से कुशलता निपुणताएँ मन में विद्यमान रहते हैं। प्रत्येक क्रिया में उपयोगिता को स्थापित करने के लिए और सुन्दरता को स्थापित करने के लिए मूलत: चित्रण हर मानव के चित्त में उभर आना सहज है। यह तो पहले से ही हमें विदित है जागृत जीवन सहज पाँचों बल और पाँचों शक्तियाँ अक्षय रूप में कार्यरत रहते हैं। इनके नित्य कार्यरत रहने में अस्तित्व में कोई बाधक

तत्व नहीं है। अपितु अस्तित्व में हर वस्तु जीवन शक्तियों के अक्षय-कार्यकलाप के लिए अनुकूल रूप में ही विद्यमान रहते हैं। जैसे जागृत जीवन सहज कल्पना का अवरोधक तत्व कुछ भी नहीं है और अनुकूल तत्व सब जगह में है। अनुकूलता इस प्रकार से प्रमाणित होता है कि सभी शुभ कल्पनाएँ जागृतिपूर्वक सफल होना पाया जाता है। अजागृति पर्यन्त प्रमाणित होना संभव नहीं होता है। जैसे समृद्धि की कल्पना हर व्यक्ति में, हर परिवार में, हर समुदाय में निहित रहना पाया जाता है। यह आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** से ही सफल होने की सत्यता में जागृत होने के उपरांत ही, समृद्धि सफल होता है। किसी मुद्दे में जागृति का दूसरा बिन्दु हर मानव समृद्धि का इच्छुक है। अनुभव करना चाहता है। जबकि समृद्धि जागृत मानव परिवार में ही हो पाता है। एक परिवार समृद्ध होने के लिए एक से अधिक परिवार का समृद्ध रहना अनिवार्य है। इस क्रम में अकेले में समृद्ध होने की कल्पना और संग्रह विधि से अथवा संग्रह कार्यवाही से समृद्धि कल्पना दोनों भ्रम सिद्ध हुआ। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 129-130)**

- स्वायत्त मानव परिवार मानव के रूप में प्रमाणित होना सहज है। स्वायत्त मानव का स्वरूप-स्वयं के प्रति विश्वास-श्रेष्ठता के प्रति सम्मान,-प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन और व्यवहार में सामाजिक और व्यवसाय में स्वावलंबन। यह सब आवश्यकता के रूप में समीचीन रहता ही है। इसकी आपूर्ति अस्तित्वदर्शन, जीवनज्ञान पूर्वक सम्पन्न होना पाया जाता है। फलस्वरूप परिवार मानव पद आवश्यंभावी होती है। ऐसा स्वायत्त मानव कम से कम दस संख्या में मिलकर साथ-साथ जीने की कला को जीने देकर जीने के रूप में प्रमाणित करता है। दूसरे विधि से हर परिवार जागृत मानव सम्बन्धों को पहचानते हैं, मूल्यों का निर्वाह करते हैं, मूल्यांकन करते हैं और उभय तृप्ति पाते हैं। साथ ही परिवारगत **उत्पादन-कार्य** में एक दूसरे के लिए पूरक होते हैं, फलस्वरूप आवश्यकता से अधिक उत्पादन प्रमाणित होता जाता है। यही समृद्धि का आधार-सूत्र है। इस प्रकार जो दस व्यक्ति रहेंगे साथ में सभी उम्र के होंगे ही, ये सब स्वायत्ततापूर्ण, स्वयात्तशीलता के रूप में देखने को मिलता है। स्वायत्त मानव का परिवार मानव होना स्वाभाविक है। क्योंकि सह-अस्तित्व में ही स्वायत्तता का प्रमाण होना स्वीकार्य रहता है। इसी क्रम और विधि से परिवार समूह, ग्राम, ग्राम समूह, क्षेत्र, मंडल, मंडल समूह, मुख्य राज्य, प्रधान राज्य और विश्व राज्य परिवार और व्यवस्था के रूप में स्वरूपित होना सहज है। इसकी आवश्यकता समीचीन है। परिवार को ही दूसरे भाषा में समाज कहा जाता है। मानव सम्बन्ध-बोध विधि से ही मूल्य निर्वाह और मूल्यांकन, चरित्र और नैतिकतापूर्वक सम्पन्न होना मानव में ही देखा जाता है। इसी सत्यतावश आवर्तनशील अर्थव्यवस्था स्वाभाविक रूप में सार्थक होता है। मूल्य, चरित्र और नैतिकता क्रम में सर्वमानव वैभवित होना चाहता ही है। सफल होने में अभी तक जो अड़चन थी वह केवल व्यक्तिवादी एवं समुदाय चेतना, सामुदायिक श्रेष्ठता का भ्रम। फलस्वरूप, समुदाय-वर्ग संघर्ष, प्राकृतिक देन-ईश्वरीय देन मान लेना ही रहा। अभी यह सौभाग्य समीचीन हो गया है कि मानव मानवीयता को सार्वभौम आचरण के रूप में पहचानना-निर्वाह करना, जानना और मानना सहज हो गया है। अतएव आवर्तनशील स्वरूप-कार्य और प्रयोजन को समझना और उसे प्रमाणित करना आवश्यक है ही। आवर्तनशीलता का स्वरूप मूलत: विभिन्न आयामों में, विभिन्न मूल्यों के आधार पर ही प्रयोजित होना पाया जाता है। जैसे सह-अस्तित्व में जीवन मूल्य, मानव मूल्य आवर्तित होता है। प्रामाणिकता सहज विधि से जीवन मूल्य सफल होता हुआ देखा गया है। सार्वभाम व्यवस्था क्रम में मानव मूल्य सहज सार्थक होना स्पष्ट है और अखण्ड समाज में भागीदारी स्वयं समाज मूल्य यथा स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य, उपयोगिता मूल्य, कला मूल्य आवर्तनशील होना पाया जाता है। इसमें से उत्पादनपूर्वक यथा निपुणता, कुशलतापूर्ण जीवन शक्तियों को हस्त लाघव सहित (शरीर के द्वारा) प्राकृतिक ऐश्वर्य पर स्थापित करने की क्रियाकलाप को **उत्पादन कार्य** नाम है। यह प्रसिद्ध है। सबको विदित है। ऐसे उत्पादित वस्तुओं को दूसरे से उत्पादित किया गया वस्तु को पाने के क्रम में हस्तांतरित कर लेना अर्थात् लेन-देन कर लेना मानव कुल में एक आवश्यकता है। यही मूलत: विनिमय के नाम से जाना जाता है। ऐसे विनिमय कार्य उत्पादन के लिए जो कुछ भी शक्तियों का नियोजन कर पाए वही वस्तुओं में उपयोगिता और कला मूल्य के रूप में पहचानने में आती है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 135-137)**
- परिवार मूलक ग्राम स्वराज्य सभा अपने ही ग्राम के व्यक्तियों में से 5 समितियों को गठित करेगा। यह प्रधानत:- (1) न्याय-सुरक्षा करेगा अथवा न्याय सुरक्षा को संतुलित बनाए रखेगा, (2) **उत्पादन-कार्यकलाप** को संतुलित

बनाए रखेगा, (3) विनिमय कोष कार्यों को संतुलित बनाए रखेगा, (4) शिक्षा-संस्कार कार्य को संतुलित बनाए रखेगा और (5) स्वास्थ्य-संयम कार्यों को संतुलित बनाए रखेगा। इन्हीं कार्यकलापों के आधार पर क्रमश: (1) न्याय-सुरक्षा समिति (2) **उत्पादन-कार्य** समिति (3) विनिमय-कोष समिति (4) शिक्षा-संस्कार समिति और (5) स्वास्थ्य-संयम समिति नामकरण होगा। कार्य और नाम से यह सुस्पष्ट है कि इस स्वरूप के साथ मानव प्रयोजन, आवश्यकता और अनिवार्यता को अनुभव कर सकता है। इसी क्रम में विश्व परिवार सभा तक 5-5 समितियों का गठन होना सहज है। और हर समिति हर स्तरीय समिति एक दूसरे के साथ संचार और अनुप्राणन संबंध को बनाए रखेंगे। इसमें से विनिमय कोष समिति के द्वारा विनिमय कार्यों को गाँव में और एक-दूसरे गाँव के साथ सार्थक होगी। हर गाँव में ग्राम सभा ही वस्तु मूल्यों का मूल्यांकन, उसका ध्रुवीकरण क्रियाकलापों की विधि पर निर्णय लेगा। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 139-140)**

- उत्पादन और मूल्य
    - प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन पूर्वक उपयोगिता मूल्य की स्थापना ही उत्पादन है जो समृद्धि के अर्थ में है।
    - मानव परंपरा में केवल वस्तु मूल्यों के साथ ही जीना संभव नहीं है।
    - सह-अस्तित्व सहज आवर्तनशीलता क्रम में सर्वमानव में निपुणता, कुशलता पाण्डित्य पूर्ण मानसिकता और इसे पूर्णतया परावर्तित करने योग्य स्वस्थ शरीर के संयोग से ही सम्पूर्ण उत्पादन सम्पन्न होना पाया जाता है।
    - जो **उत्पादन कार्य** में भागीदारी नहीं है उनका मानवीयतापूर्ण मनुष्य के रूप में प्रमाणित होना संभव नहीं। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 142)**
- मानव अपने शोध-अनुसंधान और प्रयोगक्रम में पुष्टि संरक्षण और विपुलीकरण कार्यों को पहचानने के लिए मूल आधार बीज-वृक्ष विधि को पहचानता है और इसका अंतर्संबन्धों को पहचानने के क्रम में इस क्रियाकलाप अर्थात् एक बीज-वृक्ष में होने की क्रियाकलाप के क्रम में धरती, जल, वायु, ऊष्मा के संयोग को पहचानना सहज है। ऐसे संयोग के साथ-साथ धरती में उर्वरक शक्ति की आवश्यकता, अनुपात और उसकी आपूर्ति विधि स्वाभाविक रूप में हमें पता लगता है। इस मुद्दे पर मानव को पूरकता को उर्वरक संग्रहण विनियोजन कार्य के रूप में देखा जाता है। मानव के द्वारा उर्वरक संपादन क्रम में वनस्पति संसार के अवशेषों द्वारा, संग्रहण करने का कार्य और विनियोजन करने का कार्य सदा-सदा काल से ही देखने को मिलता रहा। इस कार्य में जब मानव अपना परिश्रम, पुरुषार्थ को छुपाने लगा, इसके विपरीत आलस्य, प्रमाद और सुविधा, लिप्सा के साथ जुड़ गया या परिकल्पना किया तब रासायनिक (खनिज जन्य) उर्वरक, अर्थात् वनस्पतियों के लिए पुष्टिकारी द्रव्य का उपयोग शुरू किया। यह तो उपयोग करने वालो की विडम्बना रही। दूसरे भाग में जो इसका **उत्पादन कार्य** कर रहे हैं, उनकी प्रवृत्ति लाभ से ग्रसित रहना स्पष्ट दिखाई पड़ता है। लाभ मानसिकता पहले से ही परिभाषित है, कम देकर अधिक लेना। दूसरी ओर यांत्रिक विधि से जोतने-काटने-गहाने का कार्य संपन्न होने के कारणवश हल बैल की आवश्कताएं गौण होती गई। कम हो गई। यही मुख्य रूप में फल है अस्तित्व में पूरकता सहज उर्वरक कार्य और विधान के साथ भ्रम होना। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 146-147)**

- ऊपर कहे गये अत्याधुनिक प्रणालियों से किये जाने वाले सभी कृषि कार्य पराधीनता के साथ जुड़ चुकी है। यथा बीज, खाद, जोत, गहाई, मिसाई, बोआई, इन सभी विधाओं में स्वायत्तता के स्थान पर पराधीनता ही स्थापित हुई। जबकि कृषि, गोपालन, कुटीर उद्योग, ग्राम शिल्प, ग्रामोद्योग में स्वायत्तता प्रधान तत्व है। जागृत मानव प्रकृति सहज स्वतंत्रता और स्वराज्य स्वायत्तता विधि से ही प्रमाणित हुए है, यहाँ तक यहीं देखने में मिलता है, जीवन ज्ञान रूपी विद्या, सह-अस्तित्व दर्शन ज्ञान एवं मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान से मानव स्वायत्त हो जाता है। फलत: परिवार मानव होना सहज है, तभी वैर विहीन परिवार मानव विधा से विश्व परिवार मानव विधाओं तक स्वयं एक व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी को निर्वाह करने योग्य होता है। यह सभी वैभव स्वायत्त मानव होने का ही संप्रभुता और उसकी अक्षुण्णता है। **स्वायत्त मानव की पहली सीढ़ी स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता के**

प्रति सम्मान, दूसरे सीढ़ी में प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन, तीसरी सीढ़ी में व्यवहार में सामाजिक व्यवसाय में स्वावलंबी होने योग्य अपने में समृद्धि को पा लेना ही स्वायत्त मानव का स्थिति रूप है। जो स्वयं में ज्ञान, विज्ञान दर्शन और तर्क संगत विधि से सम्पन्न होना और मानवीयतापूर्ण आचरण में दृढ़ रहना ही स्वायत्त मानव का स्थिति रूप है। ऐसे प्रत्येक मानव ही परिवार मानव के रूप में परिवार की परिभाषा को चरितार्थ रूप दे पाता है। मानव परिवार की परिभाषा और व्याख्या इस प्रकार होना देखा गया है कि कम से कम 10 व्यक्ति परस्परता में सम्बन्धों को पहचानते हैं, स्थापित और शिष्ट मूल्यों को निर्वाह करते हैं, मूल्यांकन करते हैं और उभयतृप्ति पाते हैं। इसी के साथ परिवारगत **उत्पादन कार्य** में एक दूसरे के पूरक हो पाते हैं। फलत: परिवार की आवश्यकता से अधिक उत्पादन कर लेते हैं। इस प्रकार समाधान और समृद्धि का स्रोत परिवार से प्रचलित होना संभव हो जाता है। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 150- 151)**

- आवश्यकता के आधार पर हर जागृत मानव परिवार में **उत्पादन कार्य** सहज है। ऐसे उत्पादन का हर परिवार मानव सदुपयोग सुरक्षा चाहता ही है। हर परिवार मानव समृद्धिपूर्ण विधि से व्यक्त होना चाहता है अथवा समृद्धि सहित व्यक्त होना चाहता है। यही दो आधार हर जागृत मानव में प्रमाणित होता है और अन्य जागृत होने के क्रम में दोनों आधारों को स्वीकारे रहते हैं। इस प्रकार सर्वमानव अर्थ का सदुपयोग, सुरक्षा स्वीकारे ही है। ऐसी ज्वलंत सत्य सामने रहते हुए भी पूर्वावर्ती अर्थशास्त्र विद इस ओर ध्यान नहीं दे पाए। इसका दो ही कारण स्पष्ट हैं। पहला मानव और मानव परंपरा की मौलिकता, उसकी अखंडता, सार्वभौमता और उसके अक्षुण्णता को पहचानना संभव नहीं हुआ था। उसका मूल कारण जीवन का रचना, स्वरूप, कार्य, लक्ष्य और उसका प्रमाणीकरण की विधियों में अनजान रहे। दूसरा यह भी प्रलोभन व्यापार संग्रह और भोगवाद से जुड़ी हुई मानसिकता से ही पूर्वावर्ती अर्थशास्त्रों का प्रणयण हुई। यही वर्गवाद, समुदायवाद का भी कारक रहा। इस प्रकार पूर्वावर्ती आर्थिक विचार, शास्त्र और तंत्रणाएँ समीक्षित हैं, जबकि आवर्तनशील अर्थ-विचार, शास्त्र, तंत्र पूर्णतया परिवार मूलक स्वराज्य स्वरूपत: अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था में अंगभूत विधि से होना स्पष्ट है। आज भी, आदिकाल से भी और भविष्य में भी सम्पूर्ण उत्पादित वस्तुएं मानव श्रम के फलन में ही होना देखा गया और संभाव्य भी है। यह तथ्य भी सहज रूप में पहचानने-योग्य रहते हुए अर्थशास्त्र के मूल पूँजी के रूप में पूर्वावर्ती सभी विचार मुद्रा को ही पूँजी मानते हुए सभी ओर विचारों को फैलाया। सह-अस्तित्व सहज आवर्तनशीलता क्रम में सर्वमानव में निपुणता, कुशलता, पांडित्यपूर्ण मानसिकता और इसे पूर्णतया परावर्तित करने योग्य स्वस्थ शरीर के संयोग से ही सम्पूर्ण उत्पादन सम्पन्न होना पाया जाता है। सम्पूर्ण प्रकार से नियोजित करने वाले श्रम का प्रयोजन प्राकृतिक ऐश्वर्य पर ही सार्थक होना पाया जाता है। जैसे आहार, आवास, अलंकार सम्बन्धी वस्तुओं के लिए जितने भी श्रम नियोजन होती है, वह सब धरती, जलवायु, जंगल, वनस्पतियों के साथ ही अनुशीलन क्रम में सार्थक होना देखा गया। आहार के संदर्भ में धरती ही सम्पूर्ण आधार है। आहार वस्तुओं को इस धरती से ही पाया जाना देखा गया। चाहे किसी प्रकार से भी आहार द्रव्य को प्राप्त करें। (चाहे शाकाहार हो, चाहे मांसाहार।) आवास द्रव्य भी इस धरती से ही श्रम नियोजनपूर्वक उपलब्ध किया जाना देखा गया है और इसी प्रकार अलंकार द्रव्य भी इसी धरती के मूल वस्तु के रूप में देखना बनता है। विविध उपयोगिताएँ मानव द्वारा स्थापित किया गया श्रम नियोजन का ही यह महिमा होना त्रिकालाबाध रूप में स्पष्ट है। महत्वाकांक्षा सम्बन्धी - दूरश्रवण, दूरदर्शन और दूरगमन कार्यों में आने वाली सम्पूर्ण यंत्र भी मानव का श्रम नियोजन पूर्वक प्राप्त द्रव्य और यंत्र हैं। यह भी सर्वमानव में, से, के लिए सुस्पष्ट है। यह सब अवलोकन इसीलिए आवश्यक समझा जब कि वास्तविक रूप में मूल धन श्रम शक्ति के रूप में मानव में ही निहित है। ऐसे मूल पूँजी सदा-सदा ही केवल मानव का ही स्वत्व है। इस बात पर भी ध्यान देना आवश्यक है। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 153-155)**
- सम्पूर्ण उत्पादन के साथ श्रम नियोजन अनिवार्यत: निहित रहता ही है। उत्पादन की सार्थकता भी सुनिश्चित है। यह निश्चयन महत्वाकांक्षा, सामान्याकांक्षा के रूप में सूत्रित है। उत्पादन, उपयोग, सदुपयोग और प्रयोजनों के रूप में मूल्यांकित हो पाता है, तभी हर वस्तुओं का उपयोगिता मूल्य स्पष्ट होती है। उत्पादित सम्पूर्ण वस्तुओं की उपयोगिता पोषण, संरक्षण और समाज गति के रूप में गण्य है। इन्हीं कार्यों में सामान्य आकांक्षा, महत्वाकांक्षा सम्बन्धी वस्तु, द्रव्य, यंत्र और उपकरण, उपयोगी होना भी सुस्पष्ट है। इसी क्रम में हम दोनों विधा से सम्बन्धित

उत्पादनों का मूल्यांकन और उसके उपयोग, सदुपयोग का मूल्यांकन कर पाना सहज है। **सम्पूर्ण आहार आदि वस्तुएँ व्यवस्था क्रम में समृद्धि के रूप में ही संभाव्य है। क्योंकि उत्पादन के अनंतर ही उपयोग की आवश्यकता समीचीन होता है 'जो उत्पादन में भागीदार नहीं है उन्हें उपयोग, सदुपयोग सम्बन्धी जागृति होता ही नहीं।' उत्पादन कार्य में भागीदार नहीं है मानवीयतापूर्ण मानव के रूप में प्रमाणित होना संभव नहीं। जो उत्पादन कार्य में लगे रहते हैं वे संग्रह नहीं कर पाते हैं एवं जो संग्रह करते हैं वे सब उत्पादन कार्य में शिथिल होने की ओर है। इससे यह स्पष्ट हो गई मानवीयतापूर्ण आचरण ज्ञानदर्शन सम्पन्न होने के पहले अभी तक मानव व्यवस्था में जीने और समग्र व्यवस्था में भागीदारी को प्रमाणित नहीं कर पाए। जबकि इसकी मानव मानस में नितांत आवश्यकता है। (अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 157- 158)**

- परिवार मानव का परिवार व्यवस्था में निष्णात और प्रवृत्त रहना स्वाभाविक है। परिवार व्यवस्था में परिवार गत **उत्पादन कार्य** एक दूसरे का पूरक होता ही है। फलस्वरूप ही आवश्यकता से अधिक उत्पादन हो पाता है। परिवार का हर सदस्य उत्पादन में भागीदार होने का फल ही है। उत्पादित सभी प्रकार की वस्तुओं को उपयोग, सदुपयोग करना सहज है।

  आज भी यह सर्वेक्षित तथ्य है स्वायत्त विधि से जो-जो उत्पादन करते हैं वे सब अपने से उत्पादित वस्तु का सर्वाधिक सुरक्षा करते हैं, सदुपयोग करना चाहते हैं। सदुपयोग का ख्याति, यश न होने के फलस्वरूप कुंठित रहते हैं। आज की स्थिति में सदुपयोग का ख्याति न होने का एक ही कारण है व्यवस्था के स्थान पर शासन मानसिकता पूर्वक जीना। शासन मानसिकता सुविधावादी मानसिकता को कहा जाता है। हर परिवार में सर्वेक्षण से यह पता लगता है 'उत्पादन में जो सर्वाधिक पारंगत है परिवार में अपने को सुविधावादी, सुविधासेवी के रूप में प्रस्तुत करते हैं।' क्योंकि भ्रमित परंपरा में इनके सम्मुख आदर्श शासन और सुविधा ही देखने को मिला रहता है। इसी क्रम में परिवार प्रधान **उत्पादन कार्य** में सक्रिय रहने की स्थिति में सुविधा और शासक के रूप में अपने को पाकर प्रसन्न होने का रास्ता मान लेता है। इसको दोनों विधियों से देखा गया है। महिलाएँ जिन परिवारों में **उत्पादन कार्य** में ज्यादा से ज्यादा प्रसक्त रहते हैं, सुविधा और शासन कार्य में उनका वर्चस्व रहता है। कोई-कोई इसको अनुशासन भी कहते हैं। जहाँ परिवार में पुरुष अधिकाधिक **उत्पादन कार्य** में सक्रिय रहता है, वहाँ का शासन, सुविधा में पुरूषों का वर्चस्व बना रहता है। तीसरी स्थिति यह भी देखी गई कि जिस परिवार में **उत्पादन कार्य** से भागीदारी का संबंध नहीं रह जाती है ऐसे परिवार में शासन और सुविधा का समानाधिकार की प्रवृत्ति उभरी हुई मिलती है। यह भी देखा गया है अधिकाधिक परिवार जो केवल संग्रह और भोगलिप्सा में रत रहते हैं इन्हीं मुद्दों (शासन और सुविधा) को लेकर कटुता, वितंडावाद, विरोध, विद्रोह बना रहता है। इस प्रकार दोनों स्थितियों में कुण्ठाएँ दिखाई पड़ती हैं। चौथे स्थिति में प्रौद्योगिकीय क्षेत्र में वेतन भोगी अथवा मजदूरी विधि से जो कार्यरत रहते हैं वे सब नौकरी लगते तक, मजदूरी में लगते तक कार्य करने में स्वीकृति बनी रहती है। परन्तु जब कार्यरत होते हैं, अर्थात् मजदूर, वेतनभोगी जब नियमित होते हैं उसके उपरांत अधिकांश लोगों में कार्य में शिथिलता होना देखा गया है। जो वेतनमान और मजदूरी पाते हैं उनमें विपुलता की चाह बढ़ जाती है। उद्योग का नियंत्रण, लाभाकांक्षा से पीड़ित रहना, जिसको हम मैनेजमेंट कहते हैं, दूसरे भाषा से उद्योगपति भी कहते हैं, सफल उद्योग का तात्पर्य ही है अधिकाधिक लाभ प्राप्त होते रहें। लाभ का और संग्रह का कहीं तृप्ति बिन्दु ही न होना सबको विदित है। इस विधि से उद्योग में भागीदारी करने वाले निरंतर व्यथित रहना, असंतुष्ट रहना ही हाथ लग पाता है। इस बीच भय और प्रलोभन के आधार पर ही उद्योग व्यवस्था को सफल बनाने का प्रयत्न प्रौद्योगिकी के आरंभ काल से ही जुड़ा हुआ देखा गया। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 158- 160)**

- अस्तित्व में कहीं लाभ-हानि का स्थान है या नहीं, इस तथ्य का परिशीलन किया गया। इस परिशीलन से विदित है अस्तित्व में, सह-अस्तित्व में, विकास और संक्रमण में, जीवन और जीवन जागृति में, रासायनिक भौतिक रचना और विरचनाओं में लाभ-हानि का संकेत या प्रमाण न होकर अस्तित्व सहज रूप में ही सह-अस्तित्व, समृद्धि सुस्पष्ट रूप में दिखाई पड़ती है। क्योंकि परमाणु समृद्ध होकर ही गठनपूर्ण होता है और संक्रमित होता है। फलस्वरूप चैतन्य इकाई के रूप में जीवन अणुबंधन-भारबंधन से मुक्त होकर आशा-विचार-इच्छा, ऋतम्भरा

और प्रामाणिकता को व्यक्त, अभिव्यक्त, सम्प्रेषित, प्रकाशित करने योग्य हो पाता है। यह भी जीवन समृद्धि का ही द्योतक है। अर्थात् जीवन जागृति, जीवन समृद्धि का ही द्योतक है। यह भी सह-अस्तित्व में ही सम्पन्न होना देखा जाता है। विकास क्रम में कार्यरत सभी रासायनिक, भौतिक वस्तु और द्रव्य सह-अस्तित्व में ही अणु समृद्धि फलत: रासायनिक उर्मि के रूप में उदात्तीकरण और रचना-विरचनाएँ सम्पन्न होता हुआ देखने को मिलती है। यह भी समृद्धि, पूरकता और सह-अस्तित्व के रूप में ही स्पष्ट है और अपने को व्याख्यायित करता है। इस प्रकार अस्तित्व सहज रूप में सह-अस्तित्व और समृद्धि स्थापित है ही। मानव ही एक इकाई ज्ञानावस्था में वैभवित है। यह सह-अस्तित्व सहज प्रतिष्ठा है। इस प्रतिष्ठा तक अस्तित्व में मानव के पुरुषार्थ-परमार्थ का, तकनीकी ज्ञान-विज्ञान के प्रयुक्ति के बिना ही यह प्रतिष्ठा स्थापित है ही। मानव का जो कुछ भी नियोजन-प्रयोजन, कार्य-व्यवहार है यह सब उक्त कहे पाँचों प्रकार से ही सम्पन्न होना देखा गया है। **पुरुषार्थ का तात्पर्य उत्पादन-कार्य से है। परमार्थ का तात्पर्य जागृतिपूर्णता से है। तकनीकी का तात्पर्य मानव सहज सामान्य आकांक्षा, महत्वाकांक्षा संबंधी वस्तुओं को उत्पादन करने की विधि विहित चित्रण, विश्लेषण सहित मानसिकता से है। ज्ञान का तात्पर्य जानने-मानने-पहचानने-निर्वाह करने से है। विज्ञान का तात्पर्य तर्कसंगत विधि से ज्ञान को प्रवाहित करने का विचार है। तात्विक विधि से-कालवादी, क्रियावादी, निर्णयवादी (प्रमाणित और परिमाणित करने वाला) विचार विधि ही विज्ञान है।** इससे सुस्पष्ट है मानव कृतियों का जो कुछ भी अक्षय बल है, शक्ति है वह जागृतिपूर्वक व्यक्त होने की स्थिति में इन्हीं पाँचों रूपों में कर्ता-भोक्ता के रूप में प्रमाणित हो पाता है। उक्त पाँचों प्रकारों से प्रमाणित होने वाली क्षमता ही स्वयं में दृष्टा पद का प्रमाण है। यह भी समृद्धि का ही द्योतक होना पाया जाता है और सह-अस्तित्व में ही जागृति सम्पन्न होता है। इस विधि से मानव ही जागृत होने के उपरांत जो स्वरूप स्पष्ट हो पाती है, उसमें भी कहीं लाभ का स्थान न होकर सह-अस्तित्व और समृद्धि ही दिखाई पड़ती है। **(अध्याय:5, पृष्ठ नंबर: 161-163)**

- प्रत्येक व्यक्ति जीवन्ततापूर्वक ही अपने को प्रमाणित करना चाहता है। प्रमाणित करने का संपूर्ण स्वरूप समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, और भागीदारी (कारीगिरी) ही है। कारीगिरी का स्वरूप व्यवहार-व्यवसाय (**उत्पादन कार्य**) और विनिमय के रूप में दृष्टव्य है। इसमें से व्यवहार कार्य 'मानव जाति एक- कर्म अनेक; मानव धर्म एक मत अनेक; धरती एक-मानव कृत सीमाएं अनेक; ईश्वर (सत्ता-व्यापक) एक देवताएं (जागृतिपूर्ण जीवन) अनेक; होने, नित्य वर्तमान होने के आधारों और स्वीकृतियों के साथ मानव में, से, के लिए किये जाने वाले सम्पूर्ण (कायिक, वाचिक, मानसिक व कृत, कारित, अनुमोदित) व्यवहार मानवीयतापूर्ण होना पाया जाता है। यहाँ उल्लेखनीय बात यही है हर स्वायत्त मानव परिवार मानव होने, हर परिवार मानव समाधान, समृद्धि का धारक वाहक होता है। दूसरे विधि से हर परिवार मानव व्यवस्था में भागीदार होने के प्रमाण (समाधान-समृद्धि) को प्रमाणित करता है। फलस्वरूप तन, मन, धन रूपी अर्थ के सदुपयोग और सुरक्षा का सूत्र अपने आप मानवीयता पूर्ण परिवार में प्रमाणित होता है। मानवीयता पूर्ण परिवार में भागीदारी को निर्वाह करना ही परिवार मानव का वैभव और प्रमाण है। यहाँ यह भी स्मरणीय तथ्य है कि प्रत्येक परंपराएं अपने स्वरूप में "मौलिक" हैं। अवस्थाओं के आधार पर ही परंपरा को पहचाना जाता है। जैसे - पदार्थावस्था में तात्विक रूप से रचना तक की सम्पूर्ण प्रजातियाँ अपने-अपने स्वरूप में मौलिक है। यथा दो अंश से या अनेक अंशों से गठित परमाणुएँ और ऐसे परमाणुओं से रचित अणु, अणु रचित रचनाएं, मृत पाषाण, मणि, धातुओं के रूप में दिखती हैं। यही मौलिकता है। इसमें प्रत्येक प्रजाति का भी वर्गीकरण अपने स्वरूप में वैभवित रहते हुए विकास क्रम में एक-दूसरे की प्रवृत्ति सह-अस्तित्व सहज विधि से पाये जाने वाले सहवास स्वाभाविक है। सहवास विधि से ही अणु बन्धन विधि दृष्टव्य है। परमाणु में नाभिकीय रूप में एक से अधिक अंशों का होना ही भार-बंधन का सूत्र है। इसको और स्पष्ट रूप में देखना इस प्रकार बनता है कि प्रत्येक परमाणु में एक से अधिक अंश निश्चित दूरी पर एक दूसरे के साथ तालमेल से हैं और वह तालमेल स्वयं एक गति पथ सहित होना पाया जाता है। गति पथ स्वाभाविक रूप में वर्तुलाकार में अथवा अपरिपूर्ण वर्तुलाकार अथवा अण्डाकार होना पाया जाता है। किसी भी दो अंश एकत्रित होने के उपरान्त निश्चित दूरी का स्वरूप स्वयं मर्यादा के रूप में दिखाई पड़ती है। यही मर्यादा रेखा ही स्वयं गति पथ के रूप में स्थापित रहता है। यह स्थापना कम से कम दो अंश एक निश्चित दूरी के साथ-साथ मिला हुआ का प्रकाशन है। यह

अनुस्युत क्रिया के रूप में अर्थात् एक अंश मध्य में, दूसरा एक अंश उसके सभी ओर चक्कर लगाता हुआ रहता है। अंश जैसे-जैसे बढ़ती जाती है वैसे-वैसे नाभिकीय क्षेत्र में अंशों का जमाव बढ़ता जाता है। फलस्वरूप परमाणु में भार प्रदर्शन क्षमता घटा-बढ़ा हुआ होना पाया जाता है। यही भार प्रदर्शन क्षमता अस्तित्व सहज, सह-अस्तित्व प्रभाव समेत परमाणुएं एक दूसरे के साथ जुड़ पाते हैं। इसे अणु के रूप में देखा जा सकता है। ऐसे अणुएं अपने भार सहित विभिन्न रचनाओं में भागीदारी को निर्वाह करता हुआ देखा जाता है। ऐसे ही विभिन्न अणुएं विभिन्न अनुपात में पूरकता नियमपूर्वक रासायनिक क्रियाकलापों में भागीदारी करते हैं। फलस्वरूप प्राणकोषा, प्राणसूत्र रचनासूत्र, उदात्तीकरण सिद्धांत पूर्वक श्रेष्ठ और श्रेष्ठतम रचनाएं इसी धरती पर प्रमाणित होना वर्तमान है। दूसरे ओर परमाणु में विकास गठनपूर्णता संक्रमणपूर्वक चैतन्य इकाई जीवन पद में वैभवित होना-ऐसा जीवन ज्ञानावस्था में स्वयं को, स्वयं से, स्वयं के लिए अध्ययन करना सहज संभव होना पाया गया। जीवन ज्ञान के आधार पर ही जीवन ही दृष्टा होना इसका प्रवेश सूत्र अर्थात्् जीवन-जीवन को समझने का सूत्र मानव परंपरा संस्कारानुषंगीय विधि से कार्यरत रहना देखा गया, अतएव यही सूत्र क्रम से मानव स्वयं का अध्ययन क्रम को जोड़ने का प्रमाण को प्रस्तुत कर दिया। अध्ययन विधि से ही मानव स्वीकृतियों को अभिव्यक्ति, संप्रेषणा और प्रकाशन किया जाना प्रमाणित हो चुका है। अध्ययन पूर्वक स्वीकृतियों के साथ तृप्ति, सुरक्षा, सदुपयोग, न्याय, समाधान, धर्म, सत्य जैसे नामों के साथ-साथ अर्थ बोध विधि से अध्ययन कार्य को सम्पन्न करने की ओर कल्पनाएं दौड़ता ही रहे आया। इसी क्रम में भ्रम अर्थात् अतिव्याप्ति कार्यक्रमों का अभिव्यक्ति-संप्रेषणा-प्रकाशन के आधार पर चेष्टाएं भ्रमित मानव को बारंबार स्व-निरीक्षण के लिए बाध्य करता ही रहा जैसा शोषण के अनन्तर, युद्ध के अनन्तर, द्रोह-विद्रोह के अनन्तर, सुविधा संग्रह भोग-विलास के अनंतर, परिवार बैर के अंनतर, समुदायों में अंतर्विरोध के अनन्तर, परस्पर समुदाय सीमाओं, धरती की सीमाओं के अनन्तर मूल्यांकन करने का प्रयास बारंबार ध्यानाकर्षण का बिन्दुएं रही। मुख्यत: इस क्रियाकलाप में निष्कर्ष और स्थिरता, फलस्वरूप सार्वभौमता और उसकी अक्षुण्णता में प्रश्न चिन्ह बनने की बिन्दुओं में (1) सह-अस्तित्व नित्य वर्तमान होने में स्वीकृति स्पष्ट नहीं हो पाना- फलस्वरूप भ्रमित रहना। (2) जीवन और जीवन ज्ञान संबंधी शोध कार्य सम्पन्न नहीं हो पाना फलस्वरूप जीवन (स्वयं) के सम्बन्ध में भ्रमित रहना। फलस्वरूप स्थिर और निश्चयता से वंचित रहना पाया गया। जबकि अस्तित्व स्थिर, विकास और जागृति अस्तित्व में ही निश्चित है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 202- 205)**

- श्रम नियोजन का प्रतिफल ही विनिमय के लिए वस्तु है। इन्हीं विनिमय विधि में श्रम मूल्य के आधार पर विनिमय कार्य को सम्पन्न करना आवर्तनशीलता की एक कड़ी है। आशा, विचार, इच्छाएँ निपुणता, कुशलता के रूप में कार्य करना सर्व विदित है। दूसरे विधि से आशा, विचार, इच्छा ही अनुभव मूलक विधि से जीवन ही निपुणता-कुशलता पाण्डित्य का धारक-वाहक हैं। यह सर्वविदित है। यह भी विदित है आशा, विचार, इच्छा के अनुसार ही मानव शरीर संचालन कर पाता है। ऐसी संचालन क्रियाकलाप में ही निश्चित विधि से निश्चित उत्पादन भी होना देखा जाता है। सामान्य आकाँक्षा एवं महत्वाकाँक्षा संबंधी वस्तुओं का **उत्पादन कार्य** में तत्पर व्यक्ति को देखने से यही दिखाई पड़ता है। जिस वस्तु का उत्पादन होना है उसका आकार, प्रकार उसके मानसिकता में होता ही है। फलस्वरूप **उत्पादन कार्य** सम्पन्न होता है। इस विधि से निपुणता-कुशलता **उत्पादन-कार्य** के मूल में होना और उसका उपयोगिता, सदुपयोगिता और प्रयोजनशीलता स्पष्ट होता है। आवश्यकता के आधार पर तकनीकी निपुणता, कुशलता और सम्भावनाओं सहित कार्यकलाप सम्पन्न होना देखा गया है। इस क्रम में पीढ़ी से पीढ़ी समृद्धि होता ही आया है। मूलत: विरोधाभास जो कुछ भी निर्मित हुई ईंधन नियोजन, रासायनिक द्रव्यों का नियोजन, उसके उत्पादनों में होने वाली विसर्जन प्रणालियों से विसंगतियाँ निर्मित हुआ, जिसको प्रदूषण के नाम से इंगित करते हैं। दूसरा विसंगति विनिमय प्रणाली में उत्पादक और उपभोक्ता के बीच में दूरी लाभ के रूप में बढ़ता जाना रहा है। इन्हीं दो विसंगतियों के चलते इनसे संबंधित सभी उथल-पुथल होना अर्थात् अवांछित घटनाएँ होना रहा हैं।

उत्पादन-कार्य में मानसिकता, स्वस्थ शरीर और हस्तलाघव सहित श्रम नियोजित होता ही है। जहाँ तक साधन की बात है, अर्थात् इसके पहले से जो वस्तुएँ निर्मित हो चुकी हैं, पुन: **उत्पादन कार्य** के लिए उपयोगी है। यह

पीढ़ी से पीढ़ी प्रदत्त होते हुए आया है। इस प्रकार हर पीढ़ी के बाद साधन सम्पन्न होने के क्रम से पीढ़ी से पीढ़ी समृद्ध होना स्वाभाविक है। यह परिवारमूलक विधि से ही सर्वसुलभ हो पाता है। हर परिवार में आवश्यकता व उत्पादन, उपयोग, सदुपयोग, विनिमय ये सभी अवयव कार्य-व्यवहार के रूप में होना स्वाभाविक है। इन्हीं कार्य-व्यवहारों में समृद्धि का अनुभव एक लक्ष्य है। इसी लक्ष्य को प्रत्येक परिवार पाने के क्रम में निश्चित उत्पादन का योजना, स्वरूप स्थापित होता ही है। यही व्यवस्था का मूल तत्परता है। परिवारगत आवश्यकता से अधिक उत्पादन से ही समृद्धि का अनुभव होना स्वाभाविक है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 221-223)**

- उत्पादन कार्यों के गति में जो ईंधनों को संयोजित किया जाता है इसमें आवर्तनशीलता को पहचानना अनिवार्य है। इन्हीं में जो कुछ भी अभी समीचीन प्रदूषण का संकट है इसमें मुख्य तत्व कोयला और खनिज तेल से मुक्त ईंधन विधि और प्रकाश विधियों को संजो लेना ही ईंधन सम्बन्धी आवर्तनशीलता का तात्पर्य है। इसके मुख्य स्रोत का अधिकांश भाग मानव मानस में आ ही चुका है जैसा सूर्य ऊर्जा, प्रपात बल, हवा का दबाव, प्रवाह शक्ति पर, गोबर कचरा से उत्पन्न ईंधन। इन सभी ओर ध्यान जा ही रहा है कि खनिज कोयला और तेल के बाद क्या करेंगे? इसके उत्तर में सोचा गया है। खनिज कोयला और तेल से ही सर्वाधिक प्रदूषण है। इस आधार पर इसकी आवश्यकता धरती को है, इसी आधार पर विकल्प को पहचानने की आवश्यकता है। तब विकल्पात्मक स्रोतों के प्रति निष्ठा स्थापित होना सहज है। खनिज तेल और कोयला के अतिरिक्त और खतरनाक रूप में जो प्रदूषण आक्रमण कर रहा है वह विकिरणात्मक ईंधन प्रणाली है। ये तीनों धरती पर स्थित अन्न, वनस्पति, जीव और मानव प्रकृति के लिए सर्वाधिक हानिप्रद होना हम समझ चुके हैं। इसके बाद भी इन्हीं तीनों प्रकार के ईंधन की ओर सभी देशों का ध्यान आकर्षित रहना अभी तक देखा जा रहा है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है विकल्प की ओर हमारी निष्ठा पूरा स्थापित नहीं हो पा रही है। इसके मूल कारण दो स्वरूप में दिखाई पड़ती है (1) हर उत्पादन को स्वचालित बनाने का चक्कर और (2) उद्योगों का केन्द्रीयकरण प्रणाली का प्रयास। ये दोनों कारण पूँजी निवेश पर आधारित हैं। इसका आधार विशेषज्ञता है। इसी के साथ-साथ जनशक्ति को अर्थात् श्रम शक्ति को खरीदने के क्रम में आ चुकी है। इन्हीं दो उपक्रमों ईंधन विकल्प के प्रति निष्ठा स्थापित करने में, होने में अड़चन बन बैठी है। स्वचालित **उत्पादन कार्य** तंत्र विधि से जितना मानव **उत्पादन कार्य** में लग रहा था वह कम होता गया। कुछ लोगों को जिन्हें नौकरी मिल जाती है, वे अपने को धन्य मान लेते हैं। बड़े उद्योगों के चलते यह संकट गहराता जाता है। जैसा एक ही प्रकार से शिक्षा ग्रहण किया हुआ एक आदमी को नौकरी मिल जाता है और एक आदमी को नौकरी नहीं मिलता है। नौकरी मिला हुआ अपने को धन्य मानता है, नहीं मिला हुआ अपने को बेकार मानता है, निरर्थक मानता है। ये सभी बातें सभी विद्वानों को पता है। यहाँ उल्लेख करने का यही तात्पर्य है कि इसकी विकल्प विधि को पहचानने की आवश्यकता पर बल देना ही रहा। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 223-225)**
- इस चित्र में ग्राम में उत्पादनों का सामान्य ध्यानाकर्षण किया है। सामान्य का तात्पर्य हर गाँव में एक ही परिवार में सभी प्रकार के उत्पादन सीमाओं को बांधना संभव नहीं है। विभिन्न प्रकार के उत्पादन होना वांछनीय है। अतएव जिन-जिन ग्रामों की सीमा में जो-जो **उत्पादन कार्य** सम्पन्न होता है, उसका विनिमय कार्य को श्रम विनिमय विधि से सम्पन्न करना ही विनिमय कोष का प्रधान कार्य है। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 234-235)**
- मूल्यांकन सम्बन्धी निश्चयन हर ग्राम से आरंभ होकर विश्व परिवार विनिमय-कोष तक सम्बद्ध रहना आवश्यक है। शिक्षा पूर्वक हर व्यक्ति में निपुणता, कुशलता, पाण्डित्य सुलभ होता है। फलस्वरूप **उत्पादन कार्य** में दक्ष होना पाया जाता है। इसी आधार पर प्रत्येक व्यक्ति में स्वायत्तता पूर्ण लक्ष्य अध्ययन काल से ही समाहित रहता है। सम्पूर्ण उत्पादन की कोटि और स्वरूप स्पष्ट हो चुका है। समृद्धि का सर्वाधिक आपूर्ति आहार, आवास, अलंकार सम्बन्धी वस्तुओं, उपकरणों और सामग्रियों सहित प्रत्येक ग्राम सीमा में जो कुछ भी प्राकृतिक ऐश्वर्य, जलवायु, वन, खनिज, नैसर्गिकता के रूप में रहते ही हैं। इन्हीं आधारों पर या इन्हीं के पृष्ठभूमि में मानव अपना श्रम नियोजन करने का कार्यक्रम बनाता है। हर परिवार अपने प्रतिष्ठा के अनुरूप आवश्यकताओं का निर्धारण करने में मानवीयता पूर्ण शिक्षा संस्कार के बाद ही समर्थ होना पाया जाता है। ऐसे परिवार मानवों से सम्बद्ध परिवार अपने आवश्यकता की तादात, गुणवत्ता सहित आवश्यकताओं को अनुभव करेंगे और **उत्पादन-कार्य** को अपनायेंगे।

हर गाँव में साधारणतया कृषि, पशुपालन, ग्राम शिल्प, कुटीर उद्योग, हस्तकला, ग्रामोद्योगों को अपनाना सहज है। इसी आधार पर हर परिवार के लिए आवश्यकतानुरूप **उत्पादन कार्य** का अवसर समीचीन होना स्पष्ट है। इसी के साथ यह भी स्पष्ट है कि सम्पूर्ण आवश्यकताएँ शरीर पोषण, संरक्षण और समाज गति में ही उपयोगी, सदुपयोगी, प्रयोजनशील है। इसी स्पष्ट नजरिये से जीवन ज्ञान सम्पन्न हर मानव को आवश्यकताएँ सीमित दिखाई पड़ती हैं और आवश्यकता के अनुरूप उत्पादन श्रम शक्ति मूलत: जीवन शक्ति की ही अक्षय महिमा होने के आधार पर आवश्यकता से अधिक उत्पादन में विश्वास स्वाभाविक है। यह स्वायत्त मानव में अभिव्यक्त होने वाले आयामों में से **उत्पादन-कार्य** भी एक आयाम है। इस विधि से आवश्यकताएँ सीमित संयत होना पाया जाता है। इसी सूत्र के आधार पर अपने उत्पादन कार्यों को विभिन्न वस्तुओं के रूप में परिणित करने में निष्ठान्वित होते हैं। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर:237-238)**

- एक ग्राम में कम से कम 100 परिवार की परिकल्पना की जाती है। पाँचों आयाम सम्बन्धी व्यवस्था सफल होने के लिए कम से कम 100 परिवार का होना एक आवश्यकता है। 100 परिवार के बीच सामान्य आकाँक्षा सम्बन्धित सभी अथवा सर्वाधिक वस्तुएँ ग्राम में ही उत्पादित होना सहज है। उत्पादन कार्यों में परिवार मानव जब संलग्न होता है, उसे निरीक्षण-परीक्षण करने पर पता लगता है कि प्रत्येक **उत्पादन कार्य** निपुणता-कुशलता, पांडित्य सम्पन्न मानसिकता, विचार, इच्छा, समय खंड, हस्तलाघव और निश्चत साधन के योगफल में होना पाया जाता है। जहाँ तक साधनों की गणना है यह परंपरा के रूप में पीढ़ी से पीढ़ी अधिक साधन सम्पन्न होने की व्यवस्था है। यहाँ यह भी ध्यान रखना आवश्यक है मानव, जलवायु, धरती, वन, खनिज जैसी नैसर्गिकता में और अनंत और व्यापक ब्रह्मांडीय किरणों के वातावरण में होता हुआ देखने का मिलता है। इसी के साथ-साथ मानवकृत उप-वातावरण सहज ही गण्य होता है। अभी यहाँ मानवकृत वातावरण में परिवर्तन, परिवर्धन पर ध्यान देने की आवश्यकता है। नैसर्गिकता पर किए जाने वाले हस्तक्षेपों, श्रम नियोजनों, प्रतिफलों, उसकी उपयोगिता, सदुपयोगिता और प्रयोजनशीलताओं पर ध्यान देने की आवश्यकता है। यह मानवकृत वातावरण में से एक पक्ष है। इसी के साथ-साथ मानवकृत वातावरणिक सूत्र जुड़ा ही रहता है। अन्य वातावरण का तात्पर्य नैसर्गिक और ब्रह्मांडीय वातावरण अविभाज्य वर्तमानित रहने से है। इस प्रकार समग्रता के साथ ही यह धरती, धरती की समग्रता के साथ ही मानव, मानव के समग्रता के साथ ही व्यवस्था और समाज परिकल्पना अध्ययन, योजना और क्रियान्वयन क्रम में मानवीयतापूर्ण मानव के वैभव की पहचान होती है। इसी विधि से मानव समाज और व्यवस्था का अविभाज्य स्वरूप को परिवार और परिवारमूलक व्यवस्था के रूप में देखा गया है। जो स्वयं स्वराज्य और धर्म अविभाज्य रूप और उसका प्रमाण होना पाया गया है। अस्तु समग्र मानव को ध्यान में रखते हुए पाँच आयाम सम्पन्न व्यवस्था को परिपूर्णता के रूप में अध्ययन किया गया है। इसी के अंगभूत उत्पादन, विनिमय-कोष के आधार पर अथवा कार्यप्रणाली के आधार पर ग्राम से आरंभित स्वराज्य वैभव सूत्रों के अंगभूत होने के कारण ग्राम सभा से विश्व सभा तक इसकी लम्बाई पहुँचना स्वाभाविक है। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 238-240)**
- ग्राम सभा से मनोनयनपूर्वक व्यवस्थित विनिमय कोष व्यवस्था सूत्र और **उत्पादन कार्य** सूत्र यह दोनों अविच्छिन्न रूप में विशाल और विशालता की ओर सम्बद्ध होना समीचीन है। जैसा ग्राम सभा क्षेत्र में कार्यरत उद्यमों के अतिरिक्त कुटीर और लघु उद्योगों को ग्राम समूह समिति में स्थित **उत्पादन कार्य** समिति सम्पन्न करेगा और विनिमय कोष समिति विनिमय कार्यों को सम्पन्न करेगा। क्षेत्र सभा-समिति लघु उद्योगों और मध्यम उद्योगों के बारे में, से सम्बन्धित उत्पादनों को सम्पन्न करेगा और ग्राम क्षेत्र समिति से मनोनीत विनिमय कोष समिति इसका विनिमय कार्य सम्पन्न करेगी। क्षेत्र विनिमय कोष समिति ग्राम समूह समितियों के, से अक्षुण्ण सम्बन्ध बनाए रखने के आधार पर विनिमय कोष समिति से आदान-प्रदान विधि से गतिशील रहना सहज है। इसी प्रकार मण्डल और मण्डल समूह सभाओं से मनोनीत **उत्पादन कार्य** समिति और विनिमय-कोष समितियों के परामर्श से मध्यम कोटि के उद्योगों और वृहद उद्योगों को गतिशील बनाएगा, विनिमय-कोष पूर्वक ग्राम सभा तक विनिमय विधान (आदान-प्रदान) को बनाये रखेगा। इसी प्रकार मुख्य राज्य और प्रधान राज्य सभाओं से मनोनीत **उत्पादन कार्य** समिति द्वारा वृहद् उद्योगों को और उत्पादनों को समृद्ध बनाने का कार्य करेगा। इनसे मनोनीत विनिमय-

कोष समिति द्वारा आदान-प्रदान विधि सम्पन्न होगी। विश्व राज्य परिवार सभा से मनोनीत **उत्पादन कार्य** और विनिमय कोष समितियों के द्वारा सम्पूर्ण राज्य में संतुलन को बनाए रखने का कार्य करेगा और आवश्यकतानुसार विश्व राज्य सभा द्वारा मनोनीत **उत्पादन कार्य** समिति विश्व समृद्धि के अर्थ में वृहद उद्योगों को स्थापित कर **उत्पादन कार्य** को सम्पन्न करेगा। ...**(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 240-241)**

- **कार्य मूल्य (श्रम मूल्य) की पहचान और मूल्यांकन**

मानव में, से, के लिए जो कुछ भी कार्य वर्तमान में प्रकाशित संप्रेषित और अभिव्यक्त होता दिखाई पड़ता है यही जागृति के अनंतर उपयोगिता व कला के संयुक्त रूप में, सदुपयोगतापूर्वक पूर्णता को इंगित कराने के प्रमाणों में सार्थक होने के स्वरूप और पूर्ण जागृति (प्रामाणिकता) को वर्तमान में प्रमाणित करने के स्वरूपों में देखना समीचीन है। उपयोगिता, कला का प्रकाशन जीवन सहज आशा, विचार, इच्छा एवं उपयोगिता में अनुकूलता के अनुरूप, स्वरूप प्रदान करने के क्रम में इन अक्षय शक्तियों का नियोजन प्राकृतिक ऐश्वर्य पर स्थापित और सफल हो जाता है। इसी का नाम उत्पादन है। उत्पादन का परिभाषा यही है कि-

1. प्राकृतिक ऐश्वर्य पर कार्य (श्रम) नियोजनपूर्वक उपयोगिता व कला मूल्यों की स्थापना सहित सामान्य आकाँक्षा और महत्वाकाँक्षा के रूप में वस्तुओं को रूप प्रदान करने की क्रिया।
2. मानव द्वारा मानवेत्तर प्रकृति पर उपयोगिता एवं सुन्दरता की स्थापना किया जाना।
3. उपयोगिता मूल्य एवं उत्थान की दिशा में तन, मन और प्राकृतिक ऐश्वर्य में किया गया गुणात्मक परिवर्तन।

उत्पादन-कार्य सम्बन्धी परिभाषा से यह स्पष्ट हो जाता है मानव अपने कर्ता पद को प्रयोग करने में समर्थ है। सम्पूर्ण कार्य कर्ता पद प्रतिष्ठा सहज वैभव है। प्राकृतिक ऐश्वर्य पर ही श्रम नियोजन पूर्वक उत्पादन का अर्थ सार्थक होना पाया जाता है। इसके साथ मानव के कर्ता पद की महिमा और उसका संयोग ही है कि प्रत्येक मानव में कर्तव्य (करने का प्रमाण) नित्य प्रभावी है अर्थात् नित्य प्रकाशमान है और वर्तमान है। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 242-243)**

- मूल्यांकन के मूल में मानव ही प्रधान वस्तु है। प्रत्येक समझदार मानव अपने स्वायत्तता सहित सम्पूर्ण है। परिवार मानव के रूप में प्रमाण है। 'परिवार मानव' स्वायत्त मानवों का सीमित संख्या है जो परस्पर सम्बन्धों को पहचानते हैं, मूल्यों का निर्वाह करते हैं, मूल्यांकन करते हैं उभयतृप्ति पाते हैं और परिवार सहज आवश्यकता के अनुसार **उत्पादन कार्य** को अपनाए रहते हैं, ऐसे **उत्पादन कार्य** को सफल, सार्थक बनाने के लिए आवश्यकता से अधिक पाने के लिए सभी पूरक रहते हैं। यही परिवार व्यवहार और परिवार कार्य को स्पष्टतया प्रमाणित करते हैं। परिवार में दस समझदार का होना आवश्यक है। यही वैभव अखंड समाज अथवा विश्व परिवार के स्वरूप में भी इतना ही व्यवहार और इतने ही कार्य रूप में होना पाया जाता है। इसीलिए परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था का नाम दिया है। इसी परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था का अंगभूत आवर्तनशील अर्थशास्त्र को समझा गया है। इस आवर्तनशीलता क्रम में मूल्यों का मूल्यांकन करने के संबंध में स्पष्ट विश्लेषण, कार्यरूप, उसका सम्बन्ध सूत्र, उपयोगिता, सदुपयोगिता की ओर गति को पहचानने की आवश्यकता है। जिससे अखण्डता-सार्वभौमता अक्षुण्ण हो सके। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 244- 245)**
- सदुपयोगिता क्रम और विधि से ही सम्पूर्ण मानव में आवश्यकताएँ संयत होते हैं, समृद्ध होने की संभावना बढ़ती है। फलत: **उत्पादन कार्य** करने के साधनों की वृद्धि एवं समय, घटने की संभावना भी जुड़ी रहती है। क्योंकि आवश्यकता से अधिक साधन (समान्याकाँक्षा, महत्वाकाँक्षा के) एक पीढ़ी दूसरे पीढ़ी के लिए अर्पित करता रहेगा। यह मानव सहज कीर्ति है। इसी क्रम में सदुपयोगिता विधि से साधन अधिक होने के आधार पर ही समृद्धि सर्वसुलभ होना सहज है। समृद्धि के आधार पर ही उत्पादन मात्रा नियंत्रित होना भी सहज है। गुणवत्ता की ओर मानव का स्वाभाविक रुप से ध्यान होना पाया जाता है। क्योंकि हर मानव समृद्धि कल्पना के साथ ही गुणवत्ता की ओर परिकल्पना तो कर रहा है। जबकि अभी परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था इस धरती पर प्रचलित नहीं

हुआ। इसके बावजूद मानव परोपकारी नेतृत्वशील व्यक्तियों को अधिकाधिक साधनों के साथ (भले ही राक्षसीयता से क्यों न हो एकत्रित किया हुआ) प्रयुक्त होता आंकलित हुआ। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 247)**

- जितने समय में जो वस्तु जिस तकनीकी मानसिकता पूर्वक हस्तलाघव सहित परिमापित रूप में स्पष्ट हो गई, उसे एक उत्पादन अथवा एक श्रम के रूप में पहचानना सहज है। उसी के समान कार्य (श्रम) के साथ विनिमय होना स्वाभाविक है। ऐसी हर वस्तु का मात्रा और गुण के साथ श्रम परिमापन मानव सहज उपलब्धि है और सुगम है। इसके साथ एक परिशीलन वस्तु अवश्य ही मानव के मन में आता है क्या प्रत्येक मानव का हस्तलाघव, निपुणता, कुशलता, पाण्डित्य एक सा हो पाता है? इसका उत्तर यही मिलता है कि परिवार में जितने भी समझदार व्यक्ति रहते हैं उनसे वह लक्षित कार्य पूरा होता ही रहता है। परिवार में एक दिन एक आदमी उत्पादन में कम पूरक हुआ, दूसरे दिन ज्यादा पूरक हुआ, इसकी नापतौल की आवश्यकता नहीं बन पाती। वस्तु **उत्पादन कार्य** को सीखने-करने में ज्यादा कम रहता है यही प्रधान मुद्दा है। किसी वस्तु के उत्पादन में अकेले से कुछ होता ही नहीं है। एक से अधिक लोगों के बीच में ही किसी वस्तु का उत्पादन संभव है। मूल्यांकन के लिए एक से अधिक व्यक्तियों का होना ही है। विनिमय के लिए और व्यक्ति परिवार की आवश्यकता ही है। व्यक्ति के सीमा में कोई उत्पादन का निर्णय नहीं होता। इस बात को पहले से ही स्पष्ट किया है हर मानव किसी न किसी मानवीयतापूर्ण परिवार में प्रमाणित होगा। हर मानव बहुआयामी अभिव्यक्ति है इसलिए **उत्पादन-कार्य** एक आयाम है। परिवार में लक्ष्य उत्पाद है न कि श्रम ज्यादा कम। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 249-250)**
- विनिमय कार्य विधि की यह सही बेला है। मानव ने पहले भी एक बार विनिमय का प्रयास किया। उस प्रयास में **उत्पादन कार्य** के मूल्यांकन का आधार श्रम मूल्य नहीं रहा। उसके विपरीत लाभ मानसिकता उस समय में भी व्यापारी में बना रहा। लाभ मानसिकताएँ शोषण मूलक होते ही हैं। इसमें संग्रह-सुविधा का पुट रहता ही है। यह आज भी स्पष्टतया दिखाई पड़ता है। इस आधार पर मानव अपने व्यवस्था का अंगभूत अथवा समग्र व्यवस्था के अंगभूत रूप में अर्थ और आर्थिक गति को पहचानने की स्थिति में यह पता लगता है कि अस्तित्व में सम्पूर्ण विकास सहज सीढ़ियाँ आवर्तनशीलता और पूरकता विधि सम्पन्न है। सह-अस्तित्व में निरंतर पूरकता और विकास ही समाधान के रूप में स्पष्ट है। इसी क्रम में मानव अपने दृष्टा पद प्रतिष्ठा को पहचानने के उपरांत ही स्वयं में व्यवस्था और समग्र व्यवस्था में भागीदारी होने की आवश्यकता को अनुभव किया और जागृतिमूलक विधि से ही परिवार मूलक स्वराज्य मानव सहज पद होना मानव का अभिलाषित, आकांक्षित और आवश्यकता के रूप में पहचाना गया। सर्वशुभ सर्वसुलभ होने के लिए आवर्तनशील अर्थव्यवस्था की समग्र व्यवस्था के अंगभूत कार्यक्रम होना देखा गया है। इसी विधि से पहला आर्थिक असमानताएँ समाप्त होते हैं और समृद्धि के आधार पर हर समझदार परिवार में प्रमाण सुलभ होना सहज है। दूसरा, प्रतीक मूल्य से छूटकर प्राप्त मूल्यों से तृप्त होने का सूत्र सहज रूप में रहा है उसमें जागृति प्रमाणित होती है। तीसरा, संग्रह का भूत संघर्ष के साथ शोषण के साथ जुड़ा ही रहता है, यह सर्वथा दूर होकर परिवार मानव के रूप में हर व्यक्ति अपने दायित्व, कर्तव्यों का निर्वाह करने का उत्सव सम्पन्न होने का अवसर सर्वदा समीचीन रहता ही है। चौथा, परिवार मानव विधि से ही स्वराज्य व्यवस्था उसके अंगभूत आवर्तनशील अर्थव्यवस्था गतिशील होने के क्रम में ही विश्व परिवार और व्यवस्था के साथ सूत्रित होने का कार्यक्रम मानव जागृति सहज वैभव के रूप में होना समझा गया। और यह इस तथ्य का द्योतक है समुदायों के सीमाओं में स्वीकृत प्रत्येक मानव दिशाविहीनता, लक्ष्यविहीनता फलत: सार्वभौम कर्तव्य विमूढ़ता से ग्रसित हो गया है। इस पीड़ा से छूटने का सर्वसुलभ कार्यक्रम और मार्ग प्रशस्त होना समीचीन है। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 250-251)**
- ग्राम शिल्प सम्बन्धी उत्पादन जैसे धातु कला, रेशम, काष्ठ कला, मिट्टी और चर्म कला आदि में कितने लोग प्रशिक्षित व व्यस्त हैं। इनमें उपलब्ध तकनीक व विशेषज्ञता का आंकलन। कुटीर उद्योग द्वारा **उत्पादन कार्यों** में कितने लोग व्यस्त हैं ? वे क्या व कितना बना रहे हैं? इसी तरह ग्रामोद्योग के बारे में आंकलन। सेवा कार्यों में लगे व्यक्तियों का सर्वेक्षण। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 257)**
- कार्य शैली :-

  प्रत्येक ग्राम सभा, “ग्राम स्वराज्य व्यवस्था” को स्थापित करने के लिए निम्न 5 समितियों का गठन करेगी :-

1. मानवीय शिक्षा-संस्कार समिति
2. **उत्पादन-कार्य** व सलाहकार समिति
3. लाभ-हानि मुक्त सहकारी विनिमय-कोष समिति
4. स्वास्थ्य-संयम समिति
5. मानवीय न्याय-सुरक्षा समिति

उपर्युक्त समितियाँ ग्राम सभा के मार्गदर्शन के आधार पर कार्य करेंगी। उपरोक्त समितियाँ क्रम से ग्राम में शिक्षा-संस्कार व्यवस्था, **उत्पादन-कार्य** व्यवस्था, विनिमय-कोष व्यवस्था, स्वास्थ्य-संयम व्यवस्था व न्याय सुरक्षा व्यवस्था को स्थापित करेंगी। उपरोक्त समिति के सदस्यों का मनोनयन ग्राम सभा करेगी। प्रत्येक मनोनीत सदस्य इन समितियों का अंशकालिक सदस्य होगा व वह अपनी समिति का कर्तव्य एवं दायित्यों का निर्वाह अपने निजी व्यवसाय के अलावा करेगा। वयोवृद्ध स्त्री व पुरूष, जो जीवन विद्या व वस्तु विद्या में पारंगत है उनको समितियों के अंशकालिक व पूर्णकालिक सदस्य होने का अवसर रहेगा। प्रत्येक समिति का विस्तृत कार्यक्रम अगले खंडों में विस्तार से दिया गया है। ग्राम स्वराज्य व्यवस्था के लक्ष्य निम्न होंगे :-

1. गाँव के प्रत्येक मानव को मानवीय शिक्षा संस्कार से सम्पन्न करना।
2. प्रत्येक व्यक्ति को व्यवसाय में निपुणता-कुशलता को सहज सुलभ करना।
3. प्रत्येक व्यक्ति को व्यवहार में सामाजिक बनाना।
4. प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी **उत्पादन कार्य** में प्रवृत्त करना।
5. उत्पादित वस्तुओं को विनिमय कोष द्वारा, लाभ हानि मुक्त पद्धति से क्रय-विक्रय करने की व्यवस्था प्रदान करना और ग्रामवासियों के लिए आवश्यकीय वस्तुओं को उपलब्ध कराना।
6. प्रत्येक व्यक्ति को न्याय व सुरक्षा सहज सुलभ कराना। साथ ही सुधारवादी प्रक्रिया से, गलती व अपराधों का निराकरण करना।
7. प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वास्थ्य के प्रति अवधारणा पूर्वक संकल्पबद्ध करना, व्यायाम व खेलों के लिए प्रोत्साहित करना, संक्रामक रोग-विरोधी टीकों की उपयोगिता से अवगत कराना। साथ ही सहज व सस्ती चिकित्सा की व्यवस्था करना।
8. प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, परिवार व्यवस्था के प्रति विश्वास व निष्ठा उत्पन्न करना।
9. प्रत्येक व्यक्ति/परिवार अपनी आवश्यकता से अधिक उत्पादन करे, ऐसा सुनिश्चित उपाय करना।
10. ग्राम के लिए सामान्य सुविधाओं की व्यवस्था करना।
11. व्यक्तित्व व प्रतिभा का संतुलन उदय हो, ऐसा सुनिश्चित उपाय करना।
12. प्रत्येक परिवार में भौतिक समृद्धि व बौद्धिक समाधान साक्षित करना, समस्त ग्रामवासियों की परस्परता में अभयता व सह-अस्तित्व चरितार्थ करना। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 262- 264)**

- परिवार समूह व परिवार प्रतिनिधि के कर्तव्य एवं दायित्व :-
  1. परिवार प्रतिनिधि, सदस्यों के साथ व्यवहार, आचरण, स्वास्थ्य, उत्पादन व उत्पादन संबंधी साधनों के संदर्भ में स्वयं प्रमाणिक रहते हुए, उनके अनुरूप सभी सदस्यों को होने के लिए प्रेरणा स्त्रोत बने रहेंगे।
  2. परिवार प्रतिनिधि, परिवार के अन्य सदस्यों का मूल्यांकन करेंगे। परिवार प्रतिनिधि का मूल्यांकन, परिवार समूह सभा करेगा। आचरण के लिए मूल्यांकन का आधार स्वधन, स्वनारी/स्वपुरूष व दया पूर्ण कार्य रहेगा।

     व्यवहार के मूल्यांकन का आधार मानव व नैसर्गिक संबंधों व उनमें निहित मूल्यों की पहचान व निर्वाह से है। साथ ही तन,मन, धन रूपी अर्थ के सदुपयोग, सुरक्षा के आधार पर नैतिकता का मूल्यांकन किया जायेगा।

3. परिवार में किसी से गलती होने की स्थिति में सुधारने का कर्तव्य, परिवार के सभी सदस्यों का होगा। इसमें परिवार प्रतिनिधि उभय पक्षीय प्रेरक का कार्य करेगा।
4. परिवार सम्बन्धी समस्त जानकारी, जिसके आधार पर परिवार के सदस्यों को शिक्षा-संस्कार, **उत्पादन कार्य** आदि में लगाना है, के लिए सभी तथ्यों को एकत्रित कर, ग्राम सभा को उपलब्ध कराने का कर्तव्य, परिवार प्रतिनिधि का होगा। परिवार में यदि कोई व्यक्ति, किसी विशेष योग्यता, हस्तकला, हस्त-शिल्प, कृषि व अन्य तकनीकी या साहित्य कला में माहिर है तो यह जानकारी भी, ग्राम की सम्बन्धित समिति को उपलब्ध कराएगा।
5. परस्पर परिवारों के विवादों व उत्पन्न कठिनाइयों के निवारण का दायित्व उन परिवार के प्रतिनिधि व परिवार समूह सभा का होगा। परिवार समूह सभा द्वारा विवाद हल न होने की स्थिति में ही विवाद "न्याय सुरक्षा-समिति" के पास जायेगा। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 267-268)**

- **4. उत्पादन कार्य व्यवस्था**

ग्राम में हर तरह का उत्पादन व सेवा कार्य "ग्राम **उत्पादन-कार्य** सलाह समिति" द्वारा संचालित किया जायेगा। यह समिति अन्य समितियों के साथ मिलकर कार्य करेगी। यह समिति गाँव के प्रत्येक स्त्री पुरूष को, किसी न किसी **उत्पादन कार्य** में लगावेगी। स्थानीय सर्वेक्षण के आधार पर जिसका विस्तृत विवरण सर्वेक्षण प्रक्रिया के अंतर्गत दिया जा चुका है, उत्पादन समिति प्रत्येक व्यक्ति को, उसकी वर्तमान अर्हता के आधार पर कोई **उत्पादन कार्य** करने की सलाह देगी व उनके लिए उस व्यक्ति को आवश्यक प्रशिक्षण व अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराएगी। जो भी **उत्पादन कार्य** होना है वह मानव की सामान्य आकांक्षा (आवास, आहार, अलंकार) व महत्वाकांक्षा (दूरगमन, दूरदर्शन, दूरश्रवण) सम्बन्धी आवश्यकताओं पर आधारित होगा।

"**उत्पादन कार्य** सलाहकार समिति" ग्राम सभा के सहयोग से गाँव की सामान्य सुविधाओं को स्थापित करने में सहयोग देगी व आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराएगी। पर्यावरण सुरक्षा व पर्यावरण के साथ एक सूत्रता को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाएगी। प्रदूषण फैलाने सम्बन्धी कोई भी **उत्पादन कार्य** नहीं किया जायेगा।

ग्राम के कुछ आयाम निम्नानुसार होंगे।

1. कृषि
2. पशु-पालन
3. वन व वनोपज
4. खनिज
5. हस्त शिल्प
6. ग्राम शिल्प
7. कुटीर उद्योग
8. ग्रामोद्योग
9. सेवा

कृषि :-

वर्तमान स्थिति में ग्राम की कृषि उपज, फसलों की किस्में प्रकार, तादाद, कृषि में व्यस्त धन-बल, कृषि भूमि, पड़ती भूमि, कृषि संभावित भूमि, सिंचाई, उर्वरक, व्यवस्था, पशुपालन व्यवस्था आदि के आधार पर "**उत्पादन-कार्य** सलाहकार समिति" ग्राम सभा व विनिमय समिति के साथ मिलकर, एक ग्रामव्यापी कृषि योजना तैयार करेगी। जिसमें पशुपालन व ग्राम सीमावर्ती वन प्रबंध का समावेश होगा। योजना में पूरे ग्राम की स्थानीय

आवश्यकताओं के आधार पर धान, गेहूँ, दलहन, तिलहन, मसाला, सुगन्धित वनस्पतियों, औषधियों, रेशा, कन्द जाति की उपजों, साग सब्जियों, फलों आदि की आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने का कार्यक्रम होगा।

योजना में निम्न कार्यों की व्याख्या करने का कार्यक्रम होगा।

1. स्थानीय रूप से जो कृषि में पारंगत है उनमें ग्राम के अन्य लोगों (जो कृषि कार्य कर रहे हैं या जिनको भविष्य में कृषि कार्य लगना है) को कृषि में पारंगत बनाने की व्यवस्था।
2. स्थानीय भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार सिंचाई साधनों को एकत्रित करने की व्यवस्था। कृषि संभावित भूमि को, कृषि योग्य बनाकर उनका आबंटन (ऐसे व्यक्तियों को जिनके पास कृषि भूमि नहीं है।) की व्यवस्था।
3. बंजर भूमि में उपयोगी फलदार वृक्ष, जड़ी बूटियों को लगाने की व्यवस्था।
4. कृषि के साथ उपयोगी वृक्ष, चारा, साग सब्जियों, व सुगंधित वनस्पतियों की उन्नत प्रणाली को सुलभ (प्रशिक्षण व क्रियान्वयन) करने की व्यवस्था।
5. उन्नत बीज उपलब्ध कराने व तैयार कराने की व्यवस्था। गाँव व्यापी गोबर गैस व कम्पोस्ट खाद बनाने के लिए व्यवस्था।
6. कृषि, फल, साग, सब्जियों में होने वाले रोगों के निवारण में, स्थानीय अनुभवों को सर्वाधिक उपयोग करने की व्यवस्था। रोगों के निवारण न होने की स्थिति में अन्य वाह्य प्राप्त स्रोतों के सहयोग से निवारण की व्यवस्था।
7. कृषि को उत्पादन बढ़ाने के लिए समस्त आवश्यकीय उपायों को सुलभ करने की व्यवस्था। कृषि सम्बन्धी समस्त समस्याओं को निराकरण उत्पादन सलाहकार समिति करेगी।

पशुपालन :-

कृषि के साथ पशुपालन अनिवार्य होगा। पशुपालन के साथ गोबर गैस प्लांट अनिवार्य होगा। गोबर गैस प्लांट स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार कुछ परिवार मिलकर, सामूहिक रुप से या प्रत्येक परिवार के लिए लगाया जायेगा। पशुपालन का मुख्य उद्देश्य खेत जोतने के अलावा गाँव में आवश्यकता से अधिक दूध, घी आदि का उत्पादन, गोबर गैस द्वारा गाँव में ईंधन व प्रकाश तथा खाद की पूर्ति करना होगा। पशुपालन इस अनुपात में करना होगा। जिससे गाँव की आवश्यकतानुसार खाद की पूर्ति, गोबर व कम्पोस्ट खाद पर्याप्त हो सके। साथ ही मिट्टी का लवणी करण, अम्लीय करण कठोरपन, व उर्वरक क्षमता में हो रहे ह्रास को पूरी तरह रोका जा सके।

प्रत्येक कृषक अपने खेत में इस प्रकार का फसल-चक्र अपनाएगा जिससे उसके पास जितने पशु हैं उसके लिए पर्याप्त मात्रा में चारा, घास, भूसी मिल सके। इस व्यवस्था में उन्हें पारंगत बनाने की व्यवस्था होगी।

पशुओं के रोग निवारण के लिए स्थानीय अनुभवों को सर्वाधिक उपयोग करने की व्यवस्था होगी। इन उपायों से रोग निवारण न होने की स्थिति में बाह्य विशेष चिकित्सा की व्यवस्था होगी।

उपरोक्त अर्हता को प्राप्त करने की व्यवस्था उत्पादन सलाहकार समिति करेगी। देश विदेश में शहद की बढ़ती हुई मांग को ध्यान में रखते हुए मधुमक्खी पालन पर विशेष ध्यान दिया जायेगा।

स्थानीय मानसिकता व आवश्यकताओं के आधार पर भेड़, रेशम के कीड़े, बकरी व अन्य पशुओं के पालन की व्यवस्था की जाएगी।

वन वनोपज व वनौषधि :-

गाँव सीमावर्ती वनों (यदि वे हैं तो) का प्रबंध, "**उत्पादन-कार्य** सलाहकार समिति" द्वारा किया जायेगा। वनों की सुरक्षा की जिम्मेदारी प्रत्येक गाँव वासी की होगी। वन से वनोपज व वनौषधियों के संग्रह की व्यवस्था उत्पादन सलाहकार समिति करेगी। कुछ ग्राम वासियों की आजीविका का साधन वनोपज व वनौषधियों का संग्रह करना ही होगा। उनके द्वारा संग्रह करने के आधार पर ही विनिमय कोष क्रय कर उनका मूल्य देगा।

गाँव के लिए वनों से लकड़ी की आवश्यकता की पूर्ति सदुपयोगिता अनुसार "**उत्पादन-कार्य** सलाहकार समिति" तय करेगी ताकि वनों के संरक्षण में कोई कमी न आये।

खनिज :-

स्थानीय विविध उत्पादनों, आवास निर्माण सड़क मार्ग आदि में लगने वाली खनिज वस्तुओं उचित स्थान से उपयोग करने की व्यवस्था "**उत्पादन-कार्य** सलाहकार समिति" द्वारा होगी। यदि खनिज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं, व उसकी गाँव से बाहर भी मांग है, उस स्थिति में कुछ व्यक्ति खनिज-उत्पादन के आधार पर मूल्य "विनिमय-कोष" द्वारा दिया जायेगा। उत्पादित खनिजों का विनिमय, विनिमय कोष द्वारा ही किया जाएगा। उत्पादित खनिजों के स्थल में उनमें व्यवसाय मूल्य को स्थापित करने की व्यवस्था रहेगी।

हस्त शिल्प, हस्त कला संबंधी **उत्पादन कार्य** :-

स्थानीय रुप से उपलब्ध, जानकारी व आवश्यकताओं के आधार पर गाँव के कुछ सदस्यों को निम्न कार्यों में लगाया जाएगा। इसके लिए प्रशिक्षण व अन्य सुविधाओं की व्यवस्था "**उत्पादन-कार्य** सलाह समिति" करेगी। सभी उत्पादित वस्तुओं को विनिमय-कोष समिति खरीदेगी व वह उसका उचित मूल्य देगी।

चित्र-कला, मूर्ति-कला, बुनाई, कढ़ाई, छपाई, सिलाई दस्तकारी, रंगाई, सूत कातना, सूखा पत्ता, कागजों से अलंकारिक स्वरुप देने का कार्य, ग्रिटिंग्स कार्ड बनाने का कार्य, एम्ब्राइडरी, इनग्रेव्हिंग का कार्य, स्थानीय अनुभवों के आधार पर तत्काल क्रियान्वयन करना व उनको और ज्यादा कुशल, उन्नत और प्रोत्साहित करने की व्यवस्था होगी।

ग्राम-शिल्प :-

हस्त शिल्प की तरह कुछ व्यक्तियों को ग्राम शिल्प संबंधी कार्यों में लगाया जावेगा। यह कार्य निम्न में से हो सकते हैं :-

धातु कला, काष्ठ कला, कृषि संबंधी औजार, चर्म कला, बांस कला, फर्नीचर, रेशम उद्योग, कुम्हार सम्बंधी उत्पादन, मिट्टी के बर्तनों पर नक्काशी व अन्य तरह के खिलौने आदि बनाने का कार्य। विशेष कपड़ा बुनाई (स्थानीय अनुभव के आधार पर)।

कुटीर उद्योग :-

कुटीर उद्योग से सम्बन्धित **उत्पादन कार्य** :- हस्त करघा, रेशम उद्योग, कालीन व चटाई बनाना, साबुन, तेल, सेन्ट, क्रीम, दन्त-मंजन, शैम्पू व अन्य सौन्दर्य प्रसाधनों का उत्पादन, पत्तों से दोना/कटोरी आदि बनाने का कार्य (जो कि रेलवे व ब्याह शादी व अन्य उत्सवों में उपयोग में लाए जा सकते हैं।) आटा चक्की, तेल घानी, धान

कुटाई, गुड़ शक्कर बनाना, अचार, जाम, मुरब्बा, फलों का रस पेय पदार्थों का निर्माण, अगरबत्ती, काजल, जड़ी बूटियों पर आधारित दवाइयां।

उपर्युक्त सभी कुटीर उद्योगों के लिए आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराना।

ग्रामोद्योग :-

मिट्टी पर आधारित व स्थानीय मदद से उपलब्ध, कच्चे माल से आवास बनाने का उद्योग, फलों सब्जियों का डिब्बा बंद करना/संरक्षण, ग्राम के लिए आवश्यकीय औजार। कल पुर्जो का निर्माण स्थानीय रुप से उपलब्ध, कच्चे माल पर आधारित उद्योग, कृषि व आस पास के उद्योगों के लिए कल पुर्जो का उत्पादन, कूप, तालाब जलाशय, नहर, सड़क, बनाने के लिए जानकारी व व्यवस्था।

सेवा :-

धोबी, नाई, साइकिल, रेडियो, टी.व्ही., कृषि यंत्रों व अन्य यंत्रों की मरम्मत, सुधारने के लिए कुछ व्यक्तियों को लगाया जायेगा। यहां प्रशिक्षण की आवश्यकता होगी, उन्हें उपलब्ध कराया जायेगा। इनके द्वारा लिया गया सेवा का प्रतिफल को, ग्राम सभा द्वारा तय किया जायेगा। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर:272- 279)**

- गाँव में हर तरह का विनिमय "सहकारी विनिमय-कोष समिति" द्वारा संचालित "स्वायत्त सहकारी विनिमय-कोष द्वारा किया जायेगा। स्वायत्त का तात्पर्य समझदारी सहित आवश्यकता से अधिक उत्पादन। विनिमय कोष, गाँव की मुख्य संस्था होगी। इसका अपना अलग से संविधान होगा। यह संस्था लाभ-हानि मुक्त व्यवस्था पर कार्य करेगी। इसका मुख्य उद्देश्य गाँव के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा उत्पादित वस्तुओं का क्रय करना व उनकी आवश्यकता अनुसार वस्तुओं का विक्रय करना होगा। साथ ही यह कोष "**उत्पादन-कार्य** विनिमय सलाहकार समिति" व "शिक्षा समिति" के साथ मिलकर कार्य करेगी व व्यापारी करण के स्थान पर उत्पादनीकरण पर ध्यान देगी। विनिमय कोष की कार्य पद्धति निम्न प्रकार से होगी।... **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 279-280)**
- उपयोगिता का स्वरूप निम्न है:-
  1. प्राकृतिक सम्पदा (खनिज, वनस्पति) का उसके उत्पादन के अनुपात में उपयोग संतुलन के अर्थ में।
  2. प्राकृतिक सम्पदा के उत्पादन में विघ्न न डालना एवं प्राकृतिक सम्पदा के उत्पादन में सहायक बनना। (नैसर्गिक पवित्रता को समृद्ध बनाए रखे बिना, मानव स्वयं समृद्ध नहीं हो सकता।)
  3. उत्पादन में न्याय
     1. प्रत्येक व्यक्ति द्वारा आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना।
     2. प्रत्येक व्यक्ति में आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने योग्य कुशलता व निपुणता को स्थापित करना, जिसका दायित्व शिक्षा-संस्कार समिति को होगा।
     3. उत्पादन के लिए व्यक्ति में निहित क्षमता योग्यता के अनुरूप उसे प्रवृत करना जिसका दायित्व "**उत्पादन कार्य** सलाहकार समिति" का होगा।
     4. उत्पादन के लिए आवश्यकीय साधनों को सुलभ करना इसका दायित्व " सहकारी विनिमय कोष समिति" का होगा।
     5. **उत्पादन कार्य** सामान्य आकांक्षी (आहार, आवास, अलंकार) महत्वाकांक्षी (दूर दर्शन, दूर गमन, दूर श्रवण) सम्बन्धी वस्तुओं के रुप में प्रमाणित होना।
     6. "**उत्पादन कार्य** सलाह समिति" व "विनिमय कोष समिति" संयुक्त रुप से सम्पूर्ण ग्राम की उत्पादन सम्बन्धी तादात, गुणवत्ता व श्रम मूल्यों का निर्धारण करेगी। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 289-290)**
- उत्पादन और विनिमय सुरक्षा :-

उत्पादन सुरक्षा :-

1. गाँव में जितने भी प्रकार का उत्पादन सम्बन्धी मौलिकताएँ प्रमाणित होंगी उन सबकी सुरक्षा का दायित्व न्याय सुरक्षा समिति का होगा। जैसे किसी **उत्पादन कार्य** में विशेष प्रकार की मौलिकता अथवा मौलिक प्रणाली अथवा मौलिक औजार मौलिक विधि जो परंपरा में नहीं रही है, ऐसी स्थिति में उन सबको सुरक्षित किया जाएगा। इन सबसे सम्बन्धित मूल वाङ्ग्मय, (डिजाइन) चित्रण, नक्शा प्रक्रिया, प्रणाली और विधियों को लिपि बद्ध, सूत्रबद्ध कर सुरक्षित करेगा। आवश्यकता पड़ने पर पुरस्कार की व्यवस्था करेगा।

2. औषधियों का अनुसंधान, वनस्पतियों की पहिचान, ज्योतिष सम्बन्धी अनुसंधान, हस्तरेखा व सामुद्रिक शास्त्रसम्बन्धी साहित्य का अनुसंधान जो परंपरा में नहीं रहा है, उसको उपयोगिता के अनुसार उसकी सुरक्षा का दायित्व "सुरक्षा समिति" का होगा।

3. साहित्य, कला, संगीत, शिल्प में परंपरा की श्रेष्ठता का अनुसंधान, जो परंपरा में नहीं थी, ऐसी प्रस्तुति होने की स्थिति में उसका यथावत् संरक्षण करेगा।

4. खेलकूद व्यायाम आदि में परंपरा से अधिक श्रेष्ठता और अनुसंधानों को संरक्षित करेगा।

उपरोक्त कार्य के लिए "न्याय सुरक्षा समिति" क्रम से "**उत्पादन कार्य** सलाहकार समिति" स्वास्थ्य संयम समिति" "शिक्षा संस्कार समिति" के सहयोग से मूल्यांकन प्रक्रिया सम्पादित करेगा।... **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 292-293)**

- 8. **मूल्यांकन, प्रोत्साहन, निष्ठावान प्रक्रिया :-**

ग्राम सभा द्वारा विभिन्न समितियों के कार्य का मूल्यांकन निम्न मार्गदर्शक सिद्धांतों द्वारा किया जायेगा :-

"**उत्पादन-कार्य** सलाहकार समिति" का मूल्यांकन निम्न आधारों पर किया जायेगा :-

1. कृषि, पशुपालन, वनोपज, हस्त शिल्प, ग्राम-शिल्प, कुटीर उद्योग, ग्रामोद्योग के कुल उत्पादन का मूल्यांकन।
2. उत्पादन में कार्य गति का मूल्यांकन।
3. उत्पादन में गुणवत्ता व उत्पादकता का मूल्यांकन।
4. **उत्पादन कार्य** में कुशलता व निपुणता का मूल्यांकन।
5. **उत्पादन कार्य** के लिए आवश्यकीय कच्चे माल/वस्तुओं की स्रोतों सहज सुलभता का मूल्यांकन।
6. प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए (प्रदूषण विहीन प्रणाली से) उत्पादन और **उत्पादन कार्य** में तकनीकी परिवर्धन का मूल्यांकन।
7. मानव परंपरा में आवश्यकीय व उपयोगी सामान्य आकाँक्षा (आहार, आवास, अलंकार) व महत्वकाँक्षा (दूर गमन, दूर दर्शन, दूर श्रवण) संबंधी वस्तुओं में **उत्पादन कार्य** का मूल्यांकन। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 296 - 297)**

मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान

(संस्करण: 2008)

- मूलत: मन से ही शरीर का संचालन होना देखा जाता है। तन और मन के वियोग की स्थिति में कोई, कार्य शरीर से सम्पन्न नहीं हो पाता है और मानव की संज्ञा, सार्थक नहीं हो पाती है। जीवन और शरीर के संयुक्त रूप में वर्तमान रहना, मानव व्यवहार का आधार है। ऐसे व्यवहार कार्य के क्रम में, **उत्पादन कार्य** भी एक आवश्यकीय कृत्य है। उत्पादन का तात्पर्य, तन-मन सहित प्राकृतिक ऐश्वर्य अर्थात पदार्थावस्था, प्राणावस्था, जीवावस्था पर श्रम नियोजन पूर्वक उपयोगिता मूल्य, कला मूल्य स्थापित करना है। इसी क्रम में सम्पूर्ण महत्वाकांक्षा और सामान्य आकांक्षा सम्बन्धी वस्तुओं का उत्पादन हुआ है। इसमें निपुणता, कुशलता प्राप्त करने के क्रियाकलापों को प्रशिक्षण नाम दिया जाता है। यह पूर्णतया चित्रण सहज, तकनीकी सम्पन्न मानसिकता है। इसमें शरीर के अंग अवयव के संयोजन पूर्वक, हस्त लाघव सहित, श्रम नियोजन संपन्न होता है। इस विधि से मनुष्य को हमने **उत्पादन कार्य** में सफल होते हुए देखा है। अभी तक के उत्पादन, क्रिया कलापों में विकृति का स्वरूप, लाभोन्मादिता ही है। यह भय और प्रलोभन पर आधारित है। इसके विकल्प के रूप में "मूल्य और मूल्यांकन" रूपी प्रौद्योगिकी एवं "समाज व्यवस्था सूत्र" को व्याख्यायित और स्थापित करना इस मानव संचेतनावादी मनोविज्ञान की अभीप्सा है। उक्त प्रकार से **उत्पादन कार्य** और उसकी मानसिकता स्पष्ट हो चुकी है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 28-29)**
- समृद्धि :- आवश्यकता से अधिक उत्पादन का अर्थ समृद्धि है।
  लाभ की परिकल्पना भ्रमवश, प्रलोभनवश लाभ प्रवृत्तियां, शोषणपूर्वक संग्रह सुविधा के रूप में होना स्पष्ट हो चुकी है। लाभाकांक्षा भ्रमित मनुष्य को अच्छी लगती है, इसका अच्छा होना, संग्रह सुविधा के आधार पर देखा गया। लाभ के साथ संग्रह की अनिवार्यता, दूसरे क्रम में भोग की पिपासा होना पाया जाता है। इन दोनों विधियों से मानव तो बर्बाद होता ही है। बर्बाद होने का तात्पर्य अतृप्ति की तादात का बढ़ना है, क्योंकि संग्रह का तृप्ति बिंदु नहीं है। इसी के साथ साथ संघर्ष और युद्ध एक अनिवार्य स्थिति बनती है। इसकी गवाहियां पूरी हो चुकी हैं। इसी के साथ नैसर्गिकता में तमाम प्रदूषण फैलाना भी साक्षित हो चुका है। इस प्रकार नैसर्गिकता की बर्बादी देखने को मिलती है। इस स्थिति में भी, सुखी व समाधानित होने की अपेक्षा बनी ही रहती है।
  अभी तक के आर्थिक इतिहास के आधार पर उल्लेखनीय यही रहा है कि संग्रहरत व्यक्ति, परिवार एवं देश को बड़ा या विकसित कहते आ रहे हैं। प्रलोभन का ही प्रभाव शोषण के रूप में होना पाया जाता है। इनके दुष्परिणामों को, सामाजिकता के सार्थक रूप में देखना नहीं बन पाया। यही सम्पूर्ण लाभोन्मादी सम्मोहन का

प्रभाव रहा है। यहां उल्लेखनीय तथ्य यही है कि संग्रह के साथ भी, संग्रह करते हुए भी भोग, युद्ध, व्यसन में रत रहते हुए भी समृद्धि की कामना बनी ही रहती है। यही जीवन सहज, नियति सहज प्रवर्तन का साक्ष्य है। समुदाय परंपरावश ही आदमी, जीवन सहज या नियति सहज तथ्यों को पहचानने में असमर्थ रहा है। शुभ निरंतर समीचीन रहा ही है।

उक्त क्रम में समृद्धि के साथ अभय तथा समाधानापेक्षा, प्रत्येक मनुष्य में देखने को मिलती है। प्रत्येक मनुष्य जीवन के रूप में अक्षय बल, अक्षय शक्ति सम्पन्न है। शरीर के रूप में सीमित बल व शक्ति के रूप में है। साथ ही मनुष्य शरीर व जीवन का संयुक्त साकार रूप है। इसी सत्यतावश भौतिक रासायनिक वस्तुएं शरीर की आवश्यकता हैं। उत्पादन क्रम में जीवन शक्तियां शरीर द्वारा नियोजित होती हैं, फलत: शरीर द्वारा आवश्यकता से अधिक उत्पादन होना मानव सहज है। यही उत्पादन सुलभता है। यह विनियम सुलभता व न्याय सुलभता पूर्वक उपयोगिता, सदुपयोगिता व प्रयोजनीयता सहित समृद्धि, समाधान, अभय, सह-अस्तित्व सहज स्वराज्य व्यवस्था व व्यवस्था में भागीदारी सम्पन्न होता है। प्रत्येक व्यक्ति का उत्पादक होना अथवा **उत्पादन कार्य** में भागीदार होना, मानव सहज आयाम है। निश्चित उत्पादन और लाभ-हानि मुक्त विनिमय प्रणाली ही उसके संतुलन को स्पष्ट करती है। **(अध्याय: 5(5.1), पृष्ठ नंबर: 63-64)**

- मानव परम्परा में स्वस्थ मनुष्य का प्रकाशन, मन:स्वस्थता अर्थात जीवन तृप्ति सर्वतोमुखी समाधान व व्यवस्था में प्रमाण पूर्वक, मनाकार को साकार करने के रूप में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। ऐसी कार्य संपन्नता के लिए अनुकूल माध्यम रूपी शरीर ही, स्वस्थ शरीर है। इस प्रकार स्वस्थ शरीर की अवधारणा स्पष्ट है। आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** में उपयोगी मानव सम्बन्धों एवं नैसर्गिक सम्बन्धों, उनमें निहित मूल्य निर्वाह करने योग्य शरीर, स्वस्थ शरीर है। अस्तित्व दर्शन, जीवन ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण सहज अभिव्यक्ति, संप्रेषणा, प्रकाशन के लिए सुगम माध्यम होना स्वस्थता का द्योतक है। ऐसी कसौटियों से खरी उतरने वाली स्थिति को उज्ज्वल बनाए रखना सहज रूप में हित दृष्टि व हित कार्य है। **(अध्याय: 5(5.1), पृष्ठ नंबर: 66-67)**
- सत्व :- सह-अस्तित्व पूर्वक अस्तित्व को सिद्ध करना।

विवाह सम्बन्ध को पति-पत्नी सम्बंध के नाम से जाना जाता है। मानव, मानव से पहचान, निर्वाह करता है, जहां सेवा ली जाती है। सभी सम्बन्ध परिवार के ध्रुव है। परिवार में एक से अधिक व्यक्तियों का विश्वास पूर्ण सम्मिलित **उत्पादन कार्य** करना तथा सम्बन्धों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह रूपी व्यवहार करना सुलभ होता है। प्रत्येक सम्बन्ध निश्चित ध्रुव है। जैसे माता-पिता, पुत्र-पुत्री, स्वामी-सेवक, गुरू-शिष्य, भाई-बहिन, मित्र, पति-पत्नी। सम्पूर्ण सम्बन्ध नियति सहज रूप में वर्तमान रहते हैं। इनके प्रति जागृत होना एक अनिवार्य स्थिति है। जागृत और जागृति-पूर्ण कार्य-व्यवहार, विन्यास होना सहज है।

मानव, परम्परा सहज रूप में बहु-आयामी पहचान प्रवृत्ति वर्तमान है। अस्तित्व ही, सह-अस्तित्व होने के फलस्वरूप पदार्थावस्था ने परिणामानुषंगीय विधि से, विविध तत्वों के रूप में, संतुलन को व्यक्त किया है। प्राणावस्था ने, बीजानुषंगीय विधि से, विविध वनस्पतियों के रूप में संतुलन को व्यक्त किया है। जीवावस्था में वंशानुषंगीय विधि से, अनेक प्रकार की जीव परम्परा ने, संतुलन को व्यक्त किया है। मानव के लिए संस्कारानुषंगीय विधि से, समाधान, समृद्धि, अभय और सह-अस्तित्व को प्रमाणित करना सार्थकता है। इसे स्वराज्य व स्वतंत्रता पूर्वक, मानवीय संस्कृति (सम्बंधों की पहचान, स्थापित शिष्ट मूल्य का निर्वाह), मानवीय सभ्यता (मानव मूल्य व जीवन मूल्यों का वर्तमान में प्रमाणीकरण), विधि (मानवीयता पूर्ण आचारण संहिता) की रक्षा, व्यवसाय आवश्यकता से अधिक उत्पादन सहित (स्वयं व्यवस्था होने में विश्वास और परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था जो - (१) शिक्षा संस्कार (२) न्याय-सुरक्षा (३) **उत्पादन कार्य** (४) विनियम कोष (५) स्वास्थ्य-संयम व्यवस्था में भागीदारी को प्रमाणित करना, मानव परम्परा की सार्थकता है। मानव, परम्परा के रूप में अखंड है। मानवीयता पूर्ण संस्कार परम्परा में, मानवीय शिक्षा संस्कार सार्वभौम है। मानव परम्परा में स्व-राज्य, स्वतंत्रता सार्वभौम है। मानव परम्परा में न्याय सुरक्षा, श्रम नियोजन व श्रम विनियम रूपी विनियम कार्य, सार्वभौम प्रमाणित होता है। साथ ही मानव जाति में अखंडता मानव धर्म, इसके अनुसंधान का उद्देश्य,

प्रामाणिकता और सर्वतोमुखी समाधान, सार्वभौम है। इसलिए मानव, अखंड समाज सार्वभौम व्यवस्था के रूप में सहज है। **(अध्याय: 5(5.1), पृष्ठ नंबर: 100-101)**

- व्यवस्था में न्याय सुरक्षा सुलभता, विनिमय कोष सुलभता, **उत्पादन कार्य** सुलभता, स्वास्थ्य संयम सुलभता और मानवीय शिक्षा संस्कार सुलभता का संयुक्त रूप है। इसी व्यवस्था में जीने की कला, सम्बन्धों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह, व्यवस्था में भागीदारी का, संयुक्त रूप में प्रकाशित होना पाया जाता है। यह मानव संस्कृति का मध्य बिंदु है। मानव अपनी संस्कृति को व्यक्त करता है। उस समय आवास, अलंकार, उत्सव, सम्मिलित उत्सव, मानवीयता का प्रकाशन, प्रदर्शन और प्रचार, ये सब प्रधान रूप में रहना स्वाभाविक है। **(अध्याय: 5(5.21), पृष्ठ नंबर: 140)**
- परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था का स्वरूप एक समझदार परिवार से सम्पूर्ण परिवार मिलकर विश्व परिवार का रूप है। प्रत्येक मनुष्य, सम्पूर्ण मनुष्यों से सम्बन्धित है। प्रत्येक एक, अनंत के साथ सम्मिलित है। अस्तित्व में सब, सबसे सम्बन्धित है। इन्हीं सम्बन्धों को पहचानना और मूल्यों का निर्वाह करना ही सामाजिकता है। विश्व परिवार व्यवस्था ही, अखंड समाज है। विश्व परिवार व्यवस्था ही सार्वभौम व्यवस्था है। मानव सुखधर्मी है, परिवार की परिभाषा यह है कि परिवार के सभी सदस्य परस्पर परिवार गत **उत्पादन कार्य** में, परस्पर पूरक हैं। सम्बन्धों को पहचानना, मूल्यों का निर्वाह करना, यही विश्व परिवार की भी परिभाषा है। परिवार में व्यवस्था का प्रमाण, वर्तमान होता है। **(अध्याय: 5(5.21), पृष्ठ नंबर: 158)**
- जब परिवार मूलक स्वराज्य होना ही निर्देशित हो गया तब परिवार को समझना अर्थात परिवार की परिभाषा व व्याख्या को समझना और उसके योग्य अहर्ता को प्रत्येक व्यक्ति जानना, मानना, पहचानना एक अनिवार्यता है। निश्चित संख्या में जागृत (नर-नारी) मनुष्य जो परस्पर सम्बन्धों को पहचानते व मूल्यों का निर्वाह करते हैं और परिवार गत **उत्पादन कार्य** में परस्पर पूरक होते हैं। ऐसे कम से कम १० व्यक्तियों का समूह परिवार की संज्ञा है। ऐसी परिभाषानुरूप ग्राम परिवार, ग्राम समूह परिवार, क्षेत्र परिवार, मंडल परिवार, मंडल समूह परिवार, मुख्य राज्य परिवार, प्रधान राज्य परिवार, "विश्व- स्वराज्य परिवार" के रूप में सहज ही गण्य होता है। इस क्रम में सम्बन्धों व मूल्यों का निश्चयन होता है। फलस्वरूप प्रत्येक अवधिगत परिवार व्यवस्था अपने आप में सभी स्तरीय परिवारों में सूत्रित हो जाता है। यही परिवार- मूलक का तात्पर्य है। **(अध्याय: 5(5.21), पृष्ठ नंबर: 179)**
- उत्पादन सुलभता, प्रत्येक परिवारगत आवश्यकता का निश्चय होने के आधार पर सपन्न होना पाया जाता है। मनुष्य को उत्पादन सुलभता में शरीर पोषण, संरक्षण और समाज गति की आवश्यकता है। इसी अर्थ में सार्थक होता है। सम्पूर्ण उत्पादन का सदुपयोग, सुरक्षा क्रम में सार्थक होता है। उल्लेखनीय यह है कि लाभोन्माद, कामोन्माद, भोगोन्माद क्रम में सर्वाधिक वस्तु का अपव्यय होता है। सम्पूर्ण मानवोपयोगी वस्तुओं का स्रोत चिन्हित रूप में, धरती में पाई जाने वाली सम्पदा में है। सदुपयोग क्रम में और आवर्तनशील प्रक्रिया सहित, उपयोग सहज (की) विधि से इस धरती की सम्पदा अपने में अक्षुण्ण है और पर्याप्त है। इसके साक्षी में हर जागृत मानव परिवार इस धरती पर जितने भी संख्या में है इनमें से प्रत्येक परिवार आवश्यकता से अधिक उत्पादन और समृद्धि का अनुभव कर सकता है। इसके विपरीत भ्रमपूर्वक छीना झपटी, संग्रह सुविधा लिप्सा और संघर्ष के वशीभूत होकर दरिद्रता की पीड़ा से पीड़ित होता है। सदुपयोग सुरक्षा विधि से ही उत्पादन सुलभता और लाभ-हानि मुक्त विनियम कोष सुलभता सहज ही प्रमाणित होती है। यह जागृत मानव का ही वैभव है।

परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था की अक्षुण्णता के लिए मानवीय शिक्षा संस्कार व स्वास्थ्य संयम की अनिवार्यता है। तभी न्याय सुरक्षा, **उत्पादन कार्य** और विनियम कोष कार्य सुचारू रूप में संचालित हो पाता है, यही पाँचों आयाम परिवार मूलक स्वराज व्यवस्था की नित्य गति है। यह समझदारी और जागृति पूर्वक ही सार्थक होना पाया जाता है। मानवीय शिक्षा संस्कार अस्तित्व मूलक, मानव केन्द्रित चिन्तन-ज्ञान सहज उद्यम है, जिससे पदार्थावस्था, प्राणावस्था, जीवावस्था व ज्ञानावस्था (मनुष्य) का अध्ययन, सह-अस्तित्ववादी विधि से सम्पन्न होता है। स्वास्थ्य संयम का तात्पर्य मानवीयता पूर्ण मानसिकता बनाम मानव संचेतना सहज रूप में, शरीर के द्वारा प्रकाशित, संप्रेषित, अभिव्यक्त होने योग्य शरीर व्यवस्था से है। आवश्यकता से अधिक उत्पादन समृद्धि के

रूप में प्रमाणित होता है। तन-मन-धन रूपी अर्थ का सदुपयोग सुरक्षा है न्याय के रूप में प्रमाणित होता है। ऐसी स्वराज्य व्यवस्था सहज ही कल्पनाशीलता की संतृप्ति और मानव परम्परा में उसकी पुष्टि सहज है। **(अध्याय:5.21, पृष्ठ नंबर: 180- 181)**

- परिवार में परस्पर प्रवृत्तियों को, कर्तव्य दायित्वों को आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** में एक दूसरे को पहचानते है। इसकी आवश्यकता बना ही रहता है। **(अध्याय: 5(5.4), पृष्ठ नंबर: 198)**
- न्याय, धर्म, सत्यपूर्ण दृष्टि व विधियों को जानना, मानना, अनुभव करना और पहचानना निर्वाह करना मानव व्यवहार सूत्र है। व्यवहार, व्यवसाय, विचार व अनुभव में सामरस्यता सूत्र-धीरता, वीरता, उदारता, दया, कृपा, करुणा पूर्ण व्यवहार व्यवस्था को जानना, मानना, अनुभव करना मानव जागृति परम्परा सहज व्यवहार सूत्र है। मन, वृत्ति, चित्त, बुद्धि और आत्मा की सामरस्यता को जानना-मानना, अनुभव करना - यह जीवन जागृति सूत्र है। आशा, विचार, इच्छा, संकल्प व अनुभव में सामरस्यता को जानना, मानना अनुभव करना, जागृति सूत्र है। सम्बंधों को पहचानना, मूल्यों का निर्वाह करना और मूल्यांकन करना, जानना, मानना, अनुभव करना व्यवहार सहज सूत्र है। विज्ञान और विवेक में सामरस्यता सहज वांड्गमय को प्रस्तुत करना प्रमाणित रहने की विधियों को, जानना, मानना और अनुभव करना जागृत परम्परा सूत्र है। प्रतिभा और व्यक्तित्व में सामरस्यता सूत्र को जानना, मानना, पहचानना और निर्वाह करना समझदारी सहज सूत्र का प्रमाण है। **परिवार सहज, आवश्यकता से अधिक उत्पादन सहित तन, मन, धन का सदुपयोग, सुरक्षात्मक तथ्यों को समाधान पूर्वक जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना यह एक समझदार सुखी परिवार सूत्र है। सम्बंधों को पहचानना, मूल्यों का निर्वाह करना, मूल्यांकन करना और परिवार सहज रूप में अपनाए गए उत्पादन कार्य में, परस्पर पूरक होने के तथ्य को जानना मानना, अनुभव करना और पहचानना, निर्वाह करना सुख सुन्दर समाधान पूर्ण परिवार व विश्व परिवार सूत्र है। (अध्याय: 5(5.5), पृष्ठ नंबर: 253- 254)**
- नित्य वर्तमान सहज अस्तित्व में सम्पूर्ण भावों को जानना, मानना, अनुभव करना जीवन जागृति सूत्र है। प्रत्येक "एक" में रूप, गुण, स्वभाव धर्म की सामरस्यता को जानना, मानना, सह-अस्तित्व सहज जागृति सूत्र है। प्रबुद्धता, संप्रभुता और प्रभुसत्ता सहज कार्यकलापों के मूल में अस्तित्व दर्शन, जीवन ज्ञान, मानवीयता पूर्ण आचरण सहज सत्य को जानना, मानना, अनुभव करना, पहचानना और निर्वाह करना ही समाधान मूलक व्यवस्था जीवन जागृति व अभ्युदय सूत्र है। न्याय मूलक व्यवहार आवर्तनशील **उत्पादन कार्यक्रम** सहज तथ्यों को जानना, मानना, अनुभव करना पहचानना, और निर्वाह करना जागृति मानव परम्परा सूत्र है। मानवीय आचार संहिता रूपी, संविधान सहज, व्यवहारवादी अखंड समाज व्यवस्था रूपी तथ्य को जानना, मानना, अनुभव करना और पहचानना, निर्वाह करना अखंड समाज, सार्वभौम व्यवस्था सूत्र है। **(अध्याय: 5(5.5), पृष्ठ नंबर: 254)**

मानवीय संविधान सूत्र व्याख्या

(संस्करण:प्रथम, मुद्रण:2007)

- **(परिभाषा खंड)**

  (31) स्वराज्य

  1. जागृत मानव परिवार मूलक समाधान-समृद्धि सहज वैभव।
  2. मानवीय शिक्षा-संस्कार, न्याय सुरक्षा, विनिमय-कोष, **उत्पादन-कार्य**, स्वास्थ्य संयम सुलभता का अविभाज्य वर्तमान और उसकी परम्परा।
  3. मानव चेतना सम्पन्न मानव परंपरा में मानवीय शिक्षा-संस्कार, स्वास्थ्य-संयम, न्याय-सुरक्षा, उत्पादन में दिशा और निपुणता, कुशलता, पांडित्य सहित व उत्पादित वस्तु, विनिमय कोष, व्यवस्थाओं का अविभाज्य वर्तमान और उसकी परंपरा वैभव है। **(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 19)**

- **(संविधान, विधान, विधि, न्याय, आचरण सूत्र व्यवस्था व स्वराज्य स्वतन्त्रता)**

  4.4 न्याय

  न्याय = मानव सम्बंधों में मूल्यों का निर्वाह मूल्यांकन परस्पर उभय तृप्ति संतुलन।

  तात्विक = समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व के अर्थ में अध्ययन, **उत्पादन-कार्य**-व्यवहार करना।

  बौद्धिक = सम्बन्धों की पहचान, मूल्यों का निर्वाह करने का संकल्प, मूल्यांकन स्वीकृति, उभय तृप्ति सहज स्वीकृति।

  व्यवहारिक = परिवार सम्बन्धों का निर्वाह, परिवार व्यवस्था का निर्वाह, समाधान-समृद्धि प्रमाण सहित परंपरा **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 34)**

- **(संविधान, विधान, विधि, न्याय, आचरण सूत्र व्यवस्था व स्वराज्य स्वतन्त्रता)**

  4.6 (1) राष्ट्र

  राष्ट्र अपनी सम्पूर्णता में चारों अवस्था व पदों में यथा स्थिति उपयोगिता-पूरकता विधि सहज वैभव है।

  तात्विक = अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था का संयुक्त स्थिति गति ही राष्ट्र है।

  बौद्धिक = जागृत मानव परम्परा, मानवीय आचार संहिता रूपी संविधान सर्वसुलभ होना, वर्तमान है।

  व्यवहारिक = अस्तित्व मूलक मानव केन्द्रित चिन्तन मध्यस्थ दर्शन सहअस्तित्व-वाद-शास्त्र एवं विगत से प्राप्त मानवोपयोगी **उत्पादन कार्यों** में प्रयुक्त होने का सम्पूर्ण तकनीकी समेत शिक्षा- संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य**, विनिमय-कोष और स्वास्थ्य-संयम सहित अखण्ड समाज सार्वभौम व्यवस्था रूप में परम्परा का होना। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 36-37)**

- **(संविधान, विधान, विधि, न्याय, आचरण सूत्र व्यवस्था व स्वराज्य स्वतन्त्रता)**

  4.6 (4) प्रभुसत्ता

  तात्विक = प्रबुद्धता पूर्ण सत्ता ज्ञान विवेक विज्ञान सहज परम्परा सूत्र व्याख्या।

  बौद्धिक = प्रबुद्धता सहज निरंतर प्रमाण सहज सत्ता में जानने, मानने, पहचानने, निर्वाह करने का क्रिया।

  व्यवहारिक = प्रबुद्धता पूर्ण मानव परम्परा ही पीढ़ी से पीढ़ी में शिक्षा-दीक्षा संस्कार रुप में सत्ता= अखण्डता सार्वभौमता रुपी वैभव परंपरा।

  प्रभुसत्ता सहज निरन्तरता ही जागृत मानव चेतना सहज परम्परा है। शिक्षा-संस्कार, **उत्पादन-कार्य**, न्याय-सुरक्षा, स्वास्थ्य-संयम, विनिमय -कोष कार्य ही जागृत मानव परम्परा है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर:38)**

- **(संविधान, विधान, विधि, न्याय, आचरण सूत्र व्यवस्था व स्वराज्य स्वतन्त्रता)**

  4.6 (6) राष्ट्रीय-चरित्र

  - मानवीय शिक्षा-संस्कार सुलभता प्रमाण परम्परा,

- न्याय-सुरक्षा सुलभता प्रमाण परम्परा,
- **उत्पादन-कार्य** सुलभता प्रमाण परम्परा,
- विनिमय-कोष सुलभता प्रमाण परम्परा,
- स्वास्थ्य संयम सुलभता प्रमाण परम्परा,
- मानवीयता पूर्व आचरण सुलभता प्रमाण परम्परा,
- परस्पर निश्चित संबंधों, निश्चित मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन सुलभता प्रमाण परंपरा,
- परस्पर तृप्ति समाधान-समृद्धि, वर्तमान में विश्वास (अभय), सहअस्तित्व में प्रमाण सहज परम्परा,
  नैसर्गिक और ऋतु संतुलन सुलभता में भागीदारी परम्परा ही राष्ट्रीय चरित्र है। जागृत मानव परम्परा ही सार्वभौम व्यवस्था सहज विधि से प्राकृतिक संतुलन सहित सूत्र व्याख्या का जिम्मेदार है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 39)**

- **(संविधान, विधान, विधि, न्याय, आचरण सूत्र व्यवस्था व स्वराज्य स्वतन्त्रता)**
  4.6 (9) स्वयं में विश्वास
  1. सह अस्तित्व रूपी अस्तित्व दर्शन-ज्ञान विवेक विज्ञान में विश्वास, सहअस्तित्व में विकास-क्रम विधि सहज ज्ञान में विश्वास, गठनपूर्ण परमाणु के रूप में जीवन व जीवन क्रिया में विश्वास, जीवों में जीवनीक्रम में वंशानुषंगीय होने में विश्वास, भ्रमित मानव जीवन जागृतिक्रम में होने में स्पष्ट, जीवन में-से-के लिए जागृति स्वत्व-स्वतंत्रता-अधिकार सहज वैभव होने में विश्वास, शरीर व जीवन संयुक्त रूप में मानव होने में विश्वास,

  2. स्वयं में विश्वास,
     फलस्वरूप श्रेष्ठता का सम्मान में विश्वास,
     प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन में विश्वास,
     व्यवहार में सामाजिक होने में विश्वास,
     उत्पादन कार्य रूपी व्यवसाय में स्वावलम्बन सहज विश्वास होना ही स्थिति, मौलिकता को प्रमाणित करना ही जागृति है, हर नर-नारी जागृति को स्वीकारता है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 41-42)**
- **(मौलिक अधिकार)**
  जागृत मानव प्रतिभा- (ज्ञान, विवेक, विज्ञान सम्पन्नता)
  1. स्वयं में विश्वास
  2. श्रेष्ठता सहज सम्मान में विश्वास
  3. ज्ञान-विवेक-विज्ञान रूपी प्रतिभा में विश्वास
  4. मानवीयता पूर्ण आहार-विहार-व्यवहार रूपी व्यक्तित्व में विश्वास
  5. व्यवहार में सामाजिक होने में विश्वास
  6. **उत्पादन कार्य** रूपी व्यवस्था, परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने में विश्वास

  उपरोक्त सभी का अभिव्यक्ति, संप्रेषणा, प्रकाशन हर नर-नारी में, से, के लिए मौलिक कर्तव्य व अधिकार है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 67)**

- **ग्राम मोहल्ला में हर मानव मौलिक अधिकारों का वैभव परिवार मूलक स्वराज्य कार्य व्यवस्था स्वरूप**
  परिवार मूलक स्वराज्य कार्य व्यवस्था स्वरूप
  स्वरूप
  मानवीय शिक्षा संस्कार सुलभता, न्याय सुरक्षा सुलभता, **उत्पादन कार्य** सुलभता, विनिमय कोष सुलभता, स्वास्थ्य संयम सुलभता, यही सार्वभौम व्यवस्था स्वरूप अखण्ड समाज के अर्थ में ही सार्थक होता है। **(अध्याय:6, पृष्ठ नंबर: 95)**

- **(उद्देश्य-दायित्व-कर्त्तव्य)**

  8. मानवीय शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन कार्य** सुलभता, विनिमय-कोष सुलभता, स्वास्थ्य-संयम सुलभता, यही प्रधानतः कार्य सहज उद्देश्य-दायित्व-कर्तव्य है। इनमें समानाधिकार है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 98)**

- **(परिवार सभा का स्वरूप)**

  शिक्षा संस्कार कार्य व्यवस्था, न्याय सुरक्षा कार्य व्यवस्था, परस्परता में **उत्पादन कार्य** व्यवस्था, आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** व्यवस्था, विनिमय कार्य व्यवस्था-श्रममूल्य के आधार पर लेन-देन रूप में विनिमय कार्य व्यवस्था, स्वास्थ्य संयम कार्य व्यवस्था सहज समान कर्तव्य दायित्व अधिकार रहेगा। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 101)**

- **(व्यवस्था)**

  व्यवस्था के कार्यक्रम (समितियाँ)

  1. शिक्षा-संस्कार कार्य-व्यवस्था समिति
  2. सार्वभौम न्याय-सुरक्षा कार्य-व्यवस्था समिति
  3. **उत्पादन-कार्य-व्यवस्था समिति**
  4. विनिमय-कोष कार्य-व्यवस्था समिति
  5. स्वास्थ्य-संयम कार्य-व्यवस्था समिति **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 101)**

- **(शिक्षा –संस्कार कार्य व्यवस्था समिति)**

  7.1 (2) मानसिकता :- अनुभव मूलक प्रामाणिकता सहज मानसिकता।

  1. वर्चस्व जागृति सहज मानसिकता पूर्वक मूल्यांकन = सम्बन्धों का निर्वाह करने पूर्वक समझदारी के अर्थ में।
  2. ज्ञान-विवेक-विज्ञान सहज विद्या ही समझदारी ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी व आचरण में श्रेष्ठता का सम्मान प्रतिष्ठा।
  3. प्रतिभा अनुभव मूलक प्रमाणों को प्रमाणित करने की गति।
  4. आहार-विहार-व्यवहार के आधार पर व्यक्तित्व।
  5. व्यवहार में सामाजिक, अखण्ड समाज सूत्र व्याख्या के रूप में आचरण।
  6. व्यवसाय (**उत्पादन कार्य**) में स्वावलम्बन सम्पूर्ण वर्चस्व है।

     इस तरह सदा हर नर-नारी मूल्यांकन करने में समर्थ रहेंगे ही। ऐसी अर्हता मानवीय शिक्षा परंपरा में, से, के लिए सम्पन्न व सार्थक होता है।

  हर नर-नारियों में-से-के लिए मूल्यांकन का आधार उपरोक्त बिन्दु है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 103-104)**

- **(सार्वभौम न्याय सुरक्षा व्यवस्था समिति)**

  7.2 (9) उत्पादन कार्य में न्याय

  हर परिवार में आवश्यकता से अधिक तादात में उत्पादन, उत्पादन का स्रोत मानव द्वारा मानवेत्तर प्रकृति में संतुलन जिसकी पूरकता, उपयोगिता, उदात्तीकरण प्रणाली वर्तमान रहे, इन तथ्यों पर जागृत रहते हुए **उत्पादन**

कार्य में हर परिवार का स्वावलम्बी रहना आवश्यक है। आवश्यकता से अधिक उत्पादन सहज प्रमाण भी न्याय है।

हर परिवार में सामान्य व महत्वाकाँक्षा सम्बन्धी वस्तुओं की आवश्यकता निर्धारित होती है। इसी क्रम में दस सोपानीय आवश्यकतायें व्यवस्था में आवश्यकतायें उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनशीलता स्पष्ट हो जाती है। यह न्याय है।

1. शरीर पोषण-संरक्षण व समाज-गति के लिये आवश्यकीय वस्तुओं का उत्पादन करना न्याय है।
2. हर परिवार द्वारा आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना न्याय है।
3. कृषि-पशुपालन रत परिवार में पानी उपचार का संरक्षण एवं फसल का उपचार (फसल संरक्षण), बीज खाद स्वायत्तता का होना न्याय है।
4. कृषि-पशुपालन कार्यरत हर परिवार अपने से उत्पादित वस्तुओं का श्रम नियोजन व उपयोगिता के आधार पर मूल्यांकन करना व विनिमय करना न्याय है।
5. जागृत मानव परिवार में ही स्वायत्तता, स्वतंत्रता, समाधान सहित आवश्यकता से अधिक उत्पादन रूप में स्वावलम्बन समृद्धि सहज रुप में प्रमाणित होना न्याय है।
6. कृषि-पशुपालन के साथ हस्त कला, ग्राम शिल्प, कुटीर उद्योग, ग्रामोद्योग ऊर्जा संतुलन मानवीयता पूर्ण कला साहित्य सर्जन-सम्प्रेषणा में अधिकार सम्पन्नता न्याय है।
7. समझदारी सहित कृषि-पशुपालन पूर्वक समाधान, समृद्धि का प्रमाण होना न्याय है।
8. कृषि-पशुपालन रत हर परिवार जन का निपुणता-कुशलता-पांडित्य सम्पन्न रहना न्याय है।
9. कृषि-पशुपालन रत हर परिवार परंपरा को बनाये रखना न्याय है।
10. सामान्य व महत्वाकाँक्षी उत्पादन सेवा रत हर नर-नारी अपने श्रम मूल्य का मूल्यांकन करना न्याय है।
11. मूल्यांकन परिवार से परिवार समूह, परिवार समूह से ग्राम मोहल्ला, ग्राम मोहल्ला से विश्व परिवार तक समन्वय, संतुलन प्रमाण न्याय है।

उत्पादन कार्य में न्याय

1. सभी ग्राम-परिवार में-से-के लिए आवश्यकता में से के लिए सामान्य आकाँक्षा संबंधी वस्तुओं को आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना और औषधि सम्बन्धी जड़ी बूटियों को उपजाना न्याय है।
2. उत्पादित वस्तुओं का मूल्यांकन ग्राम मोहल्ला-व्यापी समन्वित रूप में होना न्याय है।
3. परिवार में किया गया मूल्यांकन परिवार समूह में समन्वित होना न्याय है।
4. सभी समन्वित मूल्यांकन ग्राम-परिवार-सभा में समन्वित होना न्याय है।
5. समन्वित मूल्यांकन सम्पन्न हर ग्राम, ग्राम-समूह-सभा के साथ समन्वित होना न्याय है।
6. हर ग्राम-समूह-सभा मूल्यांकन विधा से समन्वित रहते हुए क्षेत्र-सभा में समन्वित रहना न्याय है।
7. हर क्षेत्र परिवार सभा में मूल्यांकन विधा से समन्वित रहते हुए मण्डल-परिवार-सभा में समन्वित रहना न्याय है।
8. समन्वित मूल्यांकन सम्पन्न हर मण्डल परिवार-सभा, मण्डल-समूह-सभा के साथ समन्वित रहना न्याय है।
9. मुख्य राज्य सभा मूल्यांकन सहित मंडल सभा परिवार सभा के साथ समन्वित रहना न्याय है।
10. समन्वित मूल्यांकन सम्पन्न मुख्य राज्य सभायें, प्रधान राज्य-परिवार-सभा के साथ समन्वित रहना न्याय है।
11. समन्वित मूल्यांकन सम्पन्न सभी प्रधान राज्य-सभायें विश्व राज्य -सभा के साथ समन्वित रहना न्याय है।
12. विश्व परिवार सभा सहज मूल्यांकन दसों सोपानों के साथ समन्वित रहना न्याय है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 120-121)**

- **(संस्कृति-संस्कार में न्याय)**

14. आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** का नियम-नियंत्रण-संतुलन सूत्र व्याख्या में जीना न्याय है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर:123)**

- **(स्वावलंबन आत्मनिर्भरता (समाधान) में न्याय)**
  शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य** विनिमय-कोष, स्वास्थ्य- संयम कार्यों को प्रमाणित करना न्याय है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 127)**
- **परिवार-समूह-सभा में न्याय**

  6. हर सदस्य दसों परिवार के लोगों का समस्त **उत्पादन-विनिमय-कार्य** में जागरूक-पूरक रहना न्याय है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 129)**

- **(ग्राम- मोहल्ला परिवार सभा में न्याय)**
  5. ग्राम सभा अपने स्व विवेक से पाँच समितियों के लिए स्थानीय प्रतिभा सम्पन्न व्यक्तियों को मनोनीत करेगी। वे सब आत्म निर्भर परिवार के सदस्य होंगे। ये समितियां शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य** , विनिमय-कोष, स्वास्थ्य-संयम के कार्य संपादित करेंगे, यह न्याय है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 130)**

- **(ग्राम- मोहल्ला परिवार सभा में न्याय)**
  5. हर सदस्य स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान, प्रतिभा अर्थात् ज्ञान-विवेक-विज्ञान संपन्नता और व्यक्तित्व में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, **उत्पादन कार्य** रूपी व्यवसाय में स्वावलम्बन संपन्न परिवार प्रतिनिधि होना न्याय है। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 130-131)**
- **उत्पादन कार्य व्यवस्था समिति (अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 135- 158)**
  उत्पादन :- उपाय (तकनीकी) सम्पन्नता सहित प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन पूर्वक उपयोगिता व कला मूल्य सम्पन्न सामान्य व महत्वाकाँक्षा संबंधी वस्तुयें मनाकार को साकार करने के लिए निपुणता, कुशलता, पांडित्य सहित उत्पादन है।
  श्रम नियोजन कार्य उपाय (तकनीकी) सहित पदार्थ-प्राण, जीवावस्था पर श्रम नियोजन पूर्वक सामान्य आकाँक्षा व महत्वाकाँक्षा संबंधी वस्तुओं को पाना उत्पादन संबंध, परिवार सहज विधि से है।
  व्यवस्था :- जागृति सहज विधि से अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में भागीदारी है।
  ऐश्वर्य :- पदार्थावस्था, प्राणावस्था, जीवावस्था प्राकृतिक ऐश्वर्य वस्तु के रूप में वैभव है।
  सामान्य आकाँक्षा :- आहार, आवास, अलंकार सम्बन्धी वस्तुएं है।
  महत्वाकाँक्षा :- दूर श्रवण, दूर दर्शन, दूर गमन सम्बन्धी यंत्र-उपकरण के रुप में है।
  उत्पादन का प्रयोजन :- शरीर पोषण-संरक्षण, समाज-गति में-से-के लिए वस्तुओं का उपयोग-सदुपयोग-प्रयोजन स्पष्ट है।
  (प्रतीकमुद्रा - स्वयं में वस्तु का प्रतीक होता है सिद्ध है कि प्रतीक प्राप्ति नहीं है)
  आवश्यकता का निश्चयन:- समझदार मानव परिवार में ही स्पष्ट होता है।

7.3 (1) उत्पादन-कार्य व्यवस्था

1. **उत्पादन कार्य** सहज क्रिया-कलाप, जागृत मानव-परंपरा में-से-के लिए निपुणता-कुशलता-पांडित्य पूर्वक प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन सहज सामान्य व महत्वाकाँक्षा सम्बन्धी वस्तुओं, उपकरणों उपयोगिता व कला मूल्य को प्रमाणित करने के रूप में पहचान होता है।
   सामान्य आकाँक्षा सम्बन्धी वस्तुओं की आहार-आवास-अलंकार सम्बन्धी वस्तुओं के रूप में पहचान है। कृषि व पशु पालन के लिये आवश्यकीय उपकरणों को अधिकतर कृषक अपने हाथों पड़ोसियों की सहायता से सम्पन्न कर लेते हैं। यह क्रिया-कलाप बैल से हल जोतने के समय तक सम्पन्न होता हुआ स्पष्ट है।

जब से ट्रैक्टर से जोत शुरु हुआ है तब से कृषि औजार प्रौद्योगिकीय विधि से तैयार होने लगा, तब उपकरणों के लिए बाजार का आश्रय लेना शुरू किया। यह शनै: शनै: महंगा होता जा रहा है। जिस अनुपात में प्रौद्योगिकीय उपकरणों का दाम बढ़ता जा रहा है उस अनुपात में कृषि उपज का दाम नहीं बढ़ पाया है।

सन् 2000 तक जो परिस्थितियाँ सुविधायें व गति के साथ अर्थात् जल्दी-ज्यादा के अर्थ में मानव-प्रवृत्ति उलझने लगा। इसी के साथ पशुपालन विधि से रसायन-खाद एवं कीटनाशक दवाइयों से मुक्ति पाना आवश्यक है।

2. निपुणता-कुशलता-पांडित्य सम्पन्नता सहित श्रम नियोजन के फलन में सामान्य व महत्वाकाँक्षा सम्बन्धी वस्तु व उपकरणों का फलित होना स्पष्ट है। यह मानव की परिभाषा में-से-के लिये मनाकार को साकार करने के सौभाग्य का परिणाम है, जो सुविधा-संग्रह जैसी प्रवृत्ति रहने के साथ भी सुलभ हुआ है। मनस्वस्थता: सर्वतोमुखी समाधान सर्व सुलभ होने के रूप में मानवीय शिक्षा-संस्कार चेतना विकास मूल्य शिक्षा रूप में सार्वभौम है।

   मानवीय शिक्षा का फलन ही मानवीय आचार संहिता रूपी संविधान-व्यवस्था व आचरण-मूल्यांकन परंपरा ही अखण्ड-समाज सूत्र सहित व्याख्या में पारंगत होना पाण्डित्य है। यही मन:स्वस्थता का प्रमाण है। यही दृष्टा-पद-प्रतिष्ठा का वैभव व जागृति सहज प्रमाण रूप में सौभाग्य है।

   उत्पादन के साथ विनिमय अनिवार्य है। आवश्यकता से अधिक उत्पादन विनिमय व्यवस्था का आधार है।

   हर समझदार मानव अपने द्वारा किये गये व्यवहार, उत्पादन व सेवा का मूल्यांकन करे जिसमें परिवार जनों की सहमति होना आवश्यक है। यह परिवार व्यवस्था जिसमें हर नर-नारी मानवत्व सहित व्यवस्था सहज प्रमाण है।

   द्वितीय स्थिति में एक परिवार समूह सभा (दस परिवारों में) अपने में मूल्यांकन करेगा जिसमें दस परिवारों में परस्पर सहमति होना आवश्यक रहता है।

   तीसरी स्थिति में सौ परिवार की परस्परता में से किया गया उत्पादन व व्यवहार का मूल्यांकन होना स्वाभाविक रहेगा। इस स्थिति में सौ परिवार की परस्परता में सहमत होना आवश्यक है। हर परिवार के साथ सौ परिवार सहमति परिवार के समान परिवार समूह का, समूह के साथ ग्राम क्रम से विश्व परिवार सभा में से के लिए समायोजन होना स्पष्ट है।

3. चौथी स्थिति दस गांवों का व्यवहार कार्य व उत्पादन सेवा कार्यों का मूल्यांकन सहज सहमत होना आवश्यक रहेगा।

   ग्राम-मोहल्ला परिवार सभा तक प्रत्येक परिवार का मूल्यांकन, स्वीकृति व सहमति आवश्यक है क्योंकि विश्व-परिवार सभा तक सभाओं में मूल्यों का मूल्यांकन में ताल-मेल एक आवश्यकता है, जिसमें मूल्यांकन में सहमति 'दस-सोपानीय व्यवस्था' स्वीकार और सार्थक हो सके।

   प्रत्येक और सम्पूर्ण मानव में-से-के लिए मानवत्व सहित व्यवस्था में भागीदारी ही है।

   मानवीयता पूर्ण आचरण मूल्य, चरित्र, नैतिकता का संयुक्त रूप है –

   मूल्य = जाग्रत मानव परस्परता में जीवन मूल्य, मानव मूल्य, स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्यों का वर्तमान व प्रमाण।

   चरित्र = स्वधन, स्वनारी-स्वपुरूष, दया पूर्ण कार्य व्यवहार।

   नैतिकता = तन-मन-धन रूपी अर्थ का सदुपयोग व सुरक्षा का वर्तमान।

   यह सभी व्यवस्था सहज सोपानों में मूल्यांकन का आधार है। साथ ही वस्तु मूल्य व कला मूल्य की उपयोगिता के आधार पर मूल्यांकन होना ही जागृत मानव परंपरा है। संबंधों का पहचान, मूल्यों का निर्वाह, मूल्याँकन, परस्परता में तृप्ति होता है।

4. **परिवार में** - हस्त कला, ग्राम-शिल्प कला

   परिवार समूह में - कुटीर उद्योग

   ग्राम परिवार में - ग्रामोद्योग

ग्राम समूह परिवार में - लघु उद्योग, विकल्प

क्षेत्र परिवार में - लघु उद्योग, मध्यम कोटि का उद्योग, विकल्प

मण्डल परिवार में - मध्यम कोटि का उद्योग व बड़े उद्योग, विकल्प

मण्डल समूह परिवार में - मध्यम व बड़े उद्योग, विकल्प

मुख्य राज्य परिवार में - बड़े उद्योग, विकल्प

प्रधान राज्य परिवार में - वृहत्तर उद्योग, विकल्प

विश्व राज्य परिवार में - परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था विधि से श्रेष्ठता व उपयोगिता का मूल्यांकन विधि रहेगा। विश्व परिवार सभा न्याय, शिक्षा, स्वास्थ्य, विनिमय सुलभता में शोधपूर्वक मार्गदर्शन, उत्पादन में गुणवत्ता का शोध, मार्गदर्शन कार्य करेगा।

5. हर जागृत मानव परिवार में ग्राम-शिल्प, कृषि, पशुपालन, उत्पादों को उपयोगिता-मूल्य के आधार पर निर्धारित करने का अधिकार रहेगा। ऐसा मूल्यांकन परिवार समूह व ग्राम-मोहल्ला परिवार सभा में समाहित सभी परिवार सहज उत्पादों का मूल्यांकन के साथ समन्वित रूप में स्वीकृत और सन्तुष्ट रहेगा।
   हर परिवार जन का सन्तुष्ट रहने का आधार हर नर-नारी का समझदारी व समाधानित रहना, हर नर-नारी का आवश्यकता से अधिक उत्पादन में भागीदारी करना, हर नर-नारी का मूल्यांकन कार्य में सम्बद्ध रहना है।
   हर परिवार जन न्यूनतम दस परिवार में (एक परिवार समूह में) किये गये मूल्यांकनों से विदित रहना, अधिकतम देश-धरती में वर्तमान परिवारों का उत्पाद मूल्यांकन से विदित रहने का अधिकार रहेगा।
   हर परिवार समूह-सभा में भागीदारी करता हुआ कम से कम दसों सदस्यों को दस परिवार-समूह में किये गये उत्पादन व मूल्यांकन गति-विधियों से अवगत रहने का अधिकार रहेगा जिससे ग्राम-मोहल्ला में जितने भी परिवार रहते हैं उनमें देश-धरती के परिवारों को मूल्यांकन-तालमेल के अर्थ में सोचने के लिए प्रेरणा सुलभ रहेगा।
6. सार्वभौम व्यवस्था में जीने में हर जागृत मानव परिवार में-से-के लिए उत्पादित वस्तुओं की उपयोगिता के आधार पर मूल्यांकन करना स्वाभाविक रहेगा क्योंकि जागृत मानव श्रम व मूल्यों का सही मूल्यांकन करता ही है।
   - जागृत मानव ही औसत सामान्य मानव है।
   - जागृत मानव ही परिवार मानव है।
   - जागृत मानव ही अखण्ड समाज मानव है।
   - जागृत मानव ही सार्वभौम व्यवस्था सहज मानव है।

   जागृत मानव ही परंपरा सहज रूप में वैभव है। दस सोपानीय व्यवस्था क्रम में पीढ़ी से पीढ़ी जागृत होना ही परंपरा है। यही अभ्युदय, सर्वतोमुखी समाधान परंपरा है। इसी विधि से सर्व मानव समाधान, समृद्धि, अभय, सहअस्तित्व प्रमाण सहित सर्व शुभ परंपरा है।
   जागृत मानव परंपरा में ही **उत्पादन कार्य** व्यवस्था सफल होता है।
7. शरीर पोषण-संरक्षण के साथ जागृति-क्रम, जागृति ही शिक्षा-संस्कार कार्यक्रम है।
   शिक्षा-संस्कार-प्रक्रिया का आरंभ परिवार में ही होना स्वाभाविक है। जागृत मानव परंपरा का यह साक्ष्य है। जागृत मानव-परंपरा में हर परिवार में प्राप्त सन्तान के लिए जागृति सहज समीचीन रहती है। इसी विधि से जागृत मानव परंपरा प्रमाण वर्तमान होना सहज है।
   जागृत परंपरा में ही **उत्पादन-कार्य** व्यवस्था सफल होता है। **उत्पादन कार्य** निपुणता, कुशलता, पाण्डित्य पूर्वक सर्व देश काल में आकाँक्षा-द्रव्य के अर्थ में सफल होता है।
   व्यवस्था-कार्य मूल्यांकन पूर्वक विनिमय संपन्न होता है।

ज्ञान-विवेक-विज्ञान संपन्न मानसिकता ही मानव लक्ष्य के अर्थ में मूल्यांकन होना स्वाभाविक रहता है। यह दस सोपानीय व्यवस्था विधि से गठित होना ही सामाजिक अखण्डता व्यवस्था सहज सार्वभौमता सहज प्रमाण है।

उत्पादन गुणवत्ता की पहचान शरीर पोषण-संरक्षण के अर्थ में व अखण्ड सार्वभौमता सहज समाज-गति के अर्थ में है।

7.3 (2) गुणवत्ता की पहचान

आहार की गुणवत्ता - शरीर-पोषण के रूप में

आवास की गुणवत्ता - शरीर संरक्षण बनाये रखने में आवश्यक शीत-वात-उष्मा से कम-अधिक का बचाव रूप में पहचान।

अलंकार - शरीर शोभा को व्यवस्था में भागीदारी के अर्थ में पहचान बनाये रखने के रूप में शरीर सहज उष्मा को बनाये रखने में पहचान। संज्ञानीयता पूर्वक संवेदनाएं नियंत्रित रहने का प्रमाण।

औषधि - रोग पीड़ाके निवारण करने और बचाव, स्वास्थ्य को संतुलित बनाये रखने के रूप में पहचान।

दूरसंचार यथा दूरश्रवण, दूरदर्शन व दूर गमन और गतिशील यंत्रों का व्यवस्था व उत्पादन गति सन्तुलन के अर्थ में उपयोग, सदुपयोग है।

7.3 (3) उत्पादन – प्रयोजन

उत्पादन में सार्थक उद्देश्य :-शरीर पोषण-संरक्षण, अखण्ड समाज गति में, सार्वभौम व्यवस्था गति में भागीदारी के उपयोग, सदुपयोग, प्रयोजनशीलता के अर्थ में

आहार औषधियाँ :- शरीर पोषण-संरक्षण के अर्थ में स्वस्थता को बनाये रखने, निरोगिता के अर्थ में

आवास :- शरीर, आहार, औषधि और पशुओं के संरक्षण के अर्थ में

अलंकार :- आह्लाद (प्रसन्नता) पूर्वक मानव-संस्कृति-सभ्यता सहज पहचान के अर्थ में वस्त्र, मणि, धातु, पुष्प-पत्रों को सजाना जिसमें अधिक शीत, उष्ण को शरीरानुकूल बनाये रखने व लज्जा की रक्षा के उद्देश्य समाये रहते हैं।

उक्त तीनों सामान्य आकाँक्षायें हैं।

महत्वाकाँक्षा :- दूरश्रवण, दूरदर्शन, दूर गमन के प्रति मानव ने अपने में अपेक्षा अथवा आवश्यकता के रूप में स्वीकारा है। यह धरती पर मानव को उपलब्ध है। ये तीनों महत्वाकाँक्षायें हैं।

दूरसंचार का प्रयोग व्यवस्था गति को बनाये रखने के प्रयोजन से है।

7.3 (4) जागृति-समाधान-उत्पादन-विनिमय समृद्धि

मानव ने मनाकार को साकार किया है। मन: स्वस्थता को प्रमाणित करना ही मानव चेतना, समझदारी, जागृति है।

हर मानव मनाकार को साकार करने मन: स्वस्थता: को परंपरा में प्रमाणित करने समृद्धि का साक्ष्य व व्यवस्था में प्रवृत्त होना पाया जाता है।

सार्वभौम व्यवस्था में ही मानव अपनी जागृति (सर्वतोमुखी समाधान सम्पन्नता) को समाधान-समृद्धि सम्पन्न परिवार सहज व्यवस्था, समग्र व्यवस्था में भागीदारी के रूप में प्रमाणित होता है।

समाधान ज्ञान-विवेक-विज्ञान सहज गति है। यही जागृत मानव गति है - हर सोच विचार गति, कार्य संवाद गति व फल परिणाम गति, अखण्डता सम्पन्न गति।

मानव-लक्ष्य संपन्नता से जीवन-मूल्य प्रमाणित होना, जीवन-मूल्य सहज प्रमाण रूप में सहज विधि से मानव-लक्ष्य साक्षित फलित होता है।

1. **समाधान**

मानव-संस्कृति, पूर्णता के अर्थ में किये जाने वाले कृतियों के रूप में समाधान है।

मानव-सभ्यता पूर्वक व्यवस्था में भागीदारी के रूप में समाधान है।

मानवीयता पूर्ण आचरण समाधान है।

मानवीय सभ्यता, स्वतंत्रता और परिवार मूलक व्यवस्था में भागीदारी सहज सभ्यता, स्वतंत्रता, स्वराज्य के रूप में सर्वतोमुखी समाधान है।

अस्तित्वमूलक मानव केन्द्रित चिन्तन ज्ञान-विवेक-विज्ञान सहज अभिव्यक्ति, सम्प्रेषणा, प्रकाशन समाधान है।

जागृति पूर्वक किया गया, कराया गया, करने के लिए सहमत समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और भागीदारी समाधान है।

जीवन जागृति पूर्वक किया गया कार्य-व्यवहार-विचार समाधान है।

मानव-लक्ष्य को प्रमाणित करना समाधान है।

जीवन-मूल्यों को मानव परंपरा में प्रमाणित करना समाधान है।

2. **समाधान = सहअस्तित्व सहज समझ।**

अस्तित्व स्थिर है, विकास व जागृति निश्चित है।

सहअस्तित्व में जीवन जीवनीक्रम, जीवन जागृतिक्रम, जीवन-जागृति, जागृति सहज निरन्तरता सहज समझ समाधान सम्पन्न परंपरा ही जागृत मानव परंपरा है।

1) व्यापक सत्ता में सम्पृक्त जड़-चैतन्य प्रकृति को अध्ययन पूर्वक समझना समाधान है।
2) सत्ता में सम्पृक्त जड़ चैतन्य प्रकृति को सहअस्तित्व में अविभाज्य व नित्य वर्तमान सहज,वैभव में-से-के लिए अध्ययन पूर्वक समझना समाधान है।
3) सहअस्तित्व परम सत्य है, यह समझना समाधान है।
4) सहअस्तित्व सहज शाश्वीयता को समझना समाधान है। सहअस्तित्व मुद्दों के रूप में स्थिरता, निश्चयता सहज निरन्तरता को समझना समाधान है।
5) सहअस्तित्व सहज निरन्तर स्थिरता को समझना समाधान।
6) सहअस्तित्व सहज नित्य रूप में विकास को समझना समाधान, विकास सहज चैतन्य इकाई गठनपूर्ण परमाणु में दृष्टा पद प्रतिष्ठा होने का समझ समाधान है।
7) नित्य वैभव के रूप में जागृति को समझना समाधान है।
8) जीवन व जागृति को परम प्रयोजन के रूप में समझना समाधान है।
9) जीवन ही दृष्टा पद प्रतिष्ठा सम्पन्न होने को अध्ययन अनुभव पूर्वक समझना समाधान है।
10) जीवन ही जागृति पूर्वक मानव परंपरा में प्रमाणित होने को अध्ययन अनुभव पूर्वक समझना समाधान है।

3. समाधान

1) व्यापक सत्ता (साम्य ऊर्जा) में सम्पृक्त जड़-चैतन्य प्रकृति सहअस्तित्व सहज अस्तित्व अर्थात् सदा-सदा होना और मानव में-से-के लिए स्वीकार होना ही सम्पूर्ण समझदारी का आधार समाधान है।
2) सहअस्तित्व सहज समझदारी समाधान है।
3) सहअस्तित्व में ही जीवन सहज क्रिया-कलाप को समझना समाधान है।
4) सहअस्तित्व में ही जीवनी-क्रम, जीवन-जागृति क्रम, जागृति और जागृति सहज निरन्तरता को मानव परम्परा में समझ होना, मानव परंपरा में ही जागृति प्रमाणित होने की समझ समाधान है।
5) सत्ता में सम्पृक्त जड़-चैतन्य प्रकृति को नित्य वर्तमान सहज सहअस्तित्व रूप में समझना समाधान है।

6) सहअस्तित्व सहज नित्य वर्तमान ही परम सत्य है। यह मानव परंपरा में अर्थात् -
   - मानवीय शिक्षा-संस्कार परंपरा,
   - मानवीय आचार संहिता रूपी संविधान परंपरा,
   - मानवीयता पूर्ण दस सोपानीय सार्वभौम व्यवस्था परंपरा का समझ सर्वतोमुखी समाधान है।
7) सर्वतोमुखी समाधान सम्पन्नता ही हर नर-नारियों में-से-के लिए जागृति सहज प्रमाण, वर्तमान और परंपरा है। यह समझना समाधान है।
8) जागृत मानव-परंपरा, निरन्तरता और प्रयोजनों को समझना समाधान है।
9) सहअस्तित्व रूपी अस्तित्व सहज स्थिरता-निश्चयता को समझना समाधान है।

4. समाधान

1) मानव परंपरा को सार्वभौम व्यवस्था का धारक-वाहक रूप में जागृत मानव को मानवत्व सहित व्यवस्था में पहचानना, समझना, यही समाधान है।
2) विकास व जागृति को सुनिश्चित रूप में समझना समाधान है।
3) जागृति सहज परंपरा, प्रक्रिया व मूल्यांकन विधि को समझना समाधान है।
4) जागृत मानव परम्परा में हर मानव दृष्टा पद में होने की समझ समाधान है।
5) सर्व मानव दृष्टापद में प्रमाणित होने की समझ समाधान है।
6) जीवन जागृति सहज प्रतिष्ठा में ही दृष्टा-पद को मानव प्रमाणित करता है यह समझ समाधान है।
7) हर मानव दृष्टा पद में समझदारी-ईमानदारी जिम्मेदारी-भागीदारी को प्रमाणित करता है, यह समझ समाधान है।
8) दृष्टा-पद में हर मानव मानवत्व को प्रमाणित करता है। यह समझ सहित प्रमाण समाधान है।
9) मानवत्व हर मानव के स्वत्व होने की समझ समाधान है।

5. समाधान

1) गठनपूर्णता-क्रिया पूर्णता-आचरण पूर्णता सहज सर्वतोमुखी वैभव को समझना समाधान है।
2) विकास क्रम में भौतिक-रासायनिक क्रिया-कलाप व विकास -गठन पूर्ण परमाणु चैतन्य पद में होने, जीवन ही जीवनी क्रम विधि से जीवों का वैभव और जागृतिक्रम, जागृति के रूप में मानव परम्परा में होने की समझ समाधान है।
3) जीवन, भौतिक-रासायनिक और जीवन क्रिया कलापों का जानना, मानना, पहचानना, निर्वाह करना वर्तमान में वैभव है। यह समझ समाधान है।
4) जागृत मानव-परंपरा में जानने-मानने- पहचाने, निर्वाह करने में प्रमाण होता है। यह समझ में आना समाधान है।
5) हर नर-नारी में जागृति सहज अस्तित्व में अनुभव सहज वैभव है, यह मानव परम्परा में समझ होना समाधान है।
6) मानवीयता पूर्ण आचरण समाधान है।
7) मानवीयता पूर्ण व्यवस्था समाधान है।
8) जागृत मानव संस्कृति समाधान है।
9) जागृत मानव सभ्यता समाधान है।
10) जागृत मानव परंपरा में संविधान सर्वतोमुखी समाधान है।
11) जागृत मानव परंपरा में मानवीय शिक्षा संस्कार सर्वतोमुखी समाधान है।

6. समाधान

1) परमाणु अंश भी एक दूसरे को पहचानते हैं। इसका प्रमाण परमाणु के रूप में कार्यरत रहना ही है। यह समझ होना समाधान है।
2) एक परमाणु दूसरे को पहचानते हैं इसका प्रमाण अणुओं के रूप में कार्यरत रहना वर्तमान है। यह समझ होना समाधान है।

3) हर परमाणु या अणु दूसरे को पहचानता है, इसका प्रमाण अणु रचित रचना है, यह समझ में आना समाधान है।
4) हर ग्रह-गोल अणु रचित रचना है। यह समझ में आना समाधान है।
5) हर ग्रह गोल एक दूसरे को पहचानते हैं। इसका प्रमाण एक दूसरे से निश्चित अच्छी दूरी शून्याकर्षण में व्यवस्था के रूप में होना है। यह समझ में आना समाधान है।
6) हर ग्रह समूह जो कुछ ग्रह-गोल के साथ निश्चित कार्य करते हैं जैसे यह धरती किस प्रकार से कार्य करती है। यह समझ में आना समाधान है।
7) प्रत्येक धरती पर विकास क्रम, विकास, जागृति क्रम, जागृति प्रकट होने योग्य या प्रकट रहती है यह समझ में आना समाधान है।
8) हर समृद्ध धरती पर मानव ही जागृति पूर्वक मानव-लक्ष्य में सफल होता है। यह समझ में आना समाधान है।
9) हर धरती पर जागृति प्रमाणित होना, चारों अवस्थायें वैभवित रहना नियति है। यह समझ में आना समाधान है।

7. समाधान

1) जागृत परंपरा सम्पन्न हर धरती पर चारों अवस्थायें पूरकता-उपयोगिता विधि से नित्य वैभव रहता है। यह समझ समाधान है।
2) हर धरती शून्याकर्षण में रहते हुए विकास क्रम ,विकास, जागृति क्रम, जागृति की निरन्तरता सहज संभावना समीचीन है। यह समझ होना समाधान है।
3) हर धरती कालान्तर में अपने में पदार्थ-प्राण-जीव एवं ज्ञानावस्था संयुक्त वैभव निरन्तर रहने के लिए है। यह समझ में आना समाधान है।
4) हर धरती पर ज्ञानावस्था में ही स्वतंत्रता, कल्पनाशीलता, कर्मस्वतंत्रता स्वराज्य में संरक्षित रहती है। यह समझ समाधान है।
5) मानव ज्ञानावस्था में होते हुए जब भ्रमवश जीवों सदृश्य जीने को प्रवर्तनशील होता है तब पीड़ित होता है समस्या से प्रताड़ित होता है। इसका निराकरण समझ जागृति पूर्वक सर्वतोमुखी समाधान है।
6) हर मानव अस्तित्व में अनुभव मूलक विधि से सर्वतोमुखी समाधान सम्पन्न होना समीचीन है।
7) सहअस्तित्व अनुभव मूलक विधि से हर मानव अखण्ड समाज, सार्वभौम व्यवस्था में प्रमाण है। यह सर्वतोमुखी समाधान है।
8) हर जागृत मानव जीवन-लक्ष्य, मानव लक्ष्य को प्रमाणित करता है, यह समाधान है।
9) जागृत परंपरा में मानव मानवत्व सहित व्यवस्था व समग्र व्यवस्था में भागीदारी करता है। यह सर्वतोमुखी समाधान है।
10) हर धरती पर जागृत परंपरा में मानव ही स्वयं सन्तुलित रहने का दृष्टा है। यह समझ समाधान है।
11) जागृत परंपरा ही मानव को पीढ़ी से पीढ़ी दृष्टा पद में प्रतिष्ठित करता है। यह समझ समाधान है।

(1) पूरकता (2) उपयोगिता (3) शून्याकर्षण (4) सहअस्तित्व (5) विकास क्रम (6) विकास (7) जागृति क्रम (8) जागृति और निरंतरता सहज समझ समाधान है।

8. समाधान

1) सहअस्तित्व में जीने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
2) ऋतु संतुलन को धरती में बनाये रखने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
3) नियम-नियंत्रण सन्तुलन पूर्वक जीने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
4) न्यायपूर्वक जीने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
5) अखण्ड समाज में भागीदारी का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
6) अभयता पूर्वक समृद्धि सहित जीने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
7) पूरकता, उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनीयता सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
8) जीवन मूल्य को प्रमाणित करने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।

9) मानव-मूल्यों को प्रमाणित करने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
10) स्थापित-शिष्ट-उपयोगिता-सुन्दरता मूल्यों को मानव-परंपरा में प्रमाणित करने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
11) आवश्यकता से अधिक उत्पादन करने के लिए सहअस्तित्व सहज ज्ञान-विवेक-विज्ञान सम्मत सोच-विचार सुनिश्चयन समाधान है।
12) सुख-शांति-संतोष-आनन्द सहज सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
13) सर्व-शुभ सर्व-सुलभ होने के लिए सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
14) सर्व-सुख शांति सर्व सुलभ होने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
15) स्व शुभ सर्व शुभ में समाहित विधि से किया गया सोच-विचार-निश्चयन समाधान है।
16) अनुभव मूलक विधि से सर्वशुभ सोच विचार निश्चयन समाधान है।
17) जागृति-विधि से जीने का सोच-विचार निश्चयन समाधान है।
18) हर नर-नारी में-से-के लिये जीवन समान शरीर में भिन्नता का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
19) हर नर नारी में- से-के लिए जागृति समानता का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
20) हर मानव में-से-के लिये ज्ञान-विवेक -विज्ञान सम्पन्नता का अधिकार सहित समान होने के रूप में सोच-विचार-निश्चयन समाधान है।

9. समाधान

1) भौतिक -रासायनिक प्रकृति को यथा स्थिति विधि से 'त्व' सहित व्यवस्था, समग्र व्यवस्था में भागीदारी के रूप में होने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
2) भौतिकता को परिणामानुषंगीय, प्राणावस्था को बीजानुषंगीय परंपरा होने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
3) जीवावस्था को वंशानुषंगीय परंपरा होने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
4) ज्ञानावस्था में मानव को समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी पूर्वक परंपरा होने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
5) मानव परम्परा को सहअस्तित्व में मानवत्व में प्रमाणित होने वाले ईकाई के रूप में किया गया सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
6) मानव परंपरा को दृष्टा पद में होने का सोच-विचार-निर्णय समाधान है।
7) मानव-परंपरा अनुभव मूलक होने का सोच-विचार-निश्चयन- समाधान है।
8) मानव सहअस्तित्व में अनुभव परंपरा होने का सोच, विचार निश्चयन समाधान है।
9) मानव परंपरा सहअस्तित्व सहज जागृति में-से-के लिये विकास क्रम, विकास, जीवन, जीवन जागृति-क्रम, जागृति सहज दृष्टा, ज्ञाता, कर्ता भोक्ता होने का सोच-विचार-निश्चयन समाधान है।
10) मानव संस्कृति-सभ्यता, विधि-व्यवस्था की संयुक्त परंपरा होने का सोच-विचार निश्चयन समाधान है।
11) मानव अखण्ड समाज सूत्र के आधार पर अखण्ड राष्ट्र-व्यवस्था का सोच-विचार-निश्चयन समाधान है।
12) अखण्ड समाज-राष्ट्र-व्यवस्था को दस सोपानीय परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था का सोच-विचार-निश्चयन समाधान है।
13) जागृति पूर्वक ही मानव परंपरा होने का सोच-विचार-निश्चयन समाधान है।

10. समाधान

1) सहअस्तित्व में अनुभव मूलक विधि से जीना-समाधान है।
2) अनुभव प्रमाणों को प्रमाणित करना समाधान है।
3) व्यवस्था में जीना समाधान है।
4) व्यवस्था में भागीदारी करना समाधान है।
5) जागृति को प्रमाणित करना समाधान है।

6) सहअस्तित्व प्रमाणित करना समाधान है।
7) मानवीय शिक्षा-संस्कार में भागीदारी करना समाधान है।
8) न्याय सुरक्षा में भागीदारी करना समाधान है।
9) परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन करना समाधान है।
10) तन-मन-धन रूपी अर्थ का सदुपयोग करना समाधान है।
11) कायिक, वाचिक, मानसिक, कृत, कारित, अनुमोदित क्रिया में जागृति (समझदारी) को प्रमाणित करना समाधान है।
12) मानवीयता पूर्ण आचरण को प्रमाणित करना समाधान है।
13) मानवीय आचार संहिता रूपी संविधान का पालन करना समाधान है।
14) स्वास्थ्य-संयम कार्य में भागीदारी करना समाधान है।
15) उत्पादित वस्तु की उपयोगिता के आधार पर श्रम मूल्य का विनिमय समाधान है।
16) जन्म-दिन उत्सव, नाम-संस्कार उत्सव, शिक्षा-संस्कार उत्सव, विवाह उत्सव, ऋतु-काल व्यवस्था उत्सवों को सुख-समाधान, समृद्धि के अर्थ में सम्पन्न करना समाधान है।
17) नृत्य, संगीत, साहित्य को मानवीयता व मानवीय व्यवस्था के अर्थ में प्रस्तुत करना समाधान है।
18) परिवार मूलक स्वराज्य-व्यवस्था सहज उत्सवों को दस सोपानीय क्रम में सम्पन्न करना समाधान है।

11. समाधान

1) ज्ञान-विवेक-विज्ञान सम्पन्नता सहज कार्य-व्यवहार करना समाधान है।
2) समझदारी-ईमानदारी-जिम्मेदारी-भागीदारी पूर्वक कार्य व्यवहार करना समाधान है।
3) दस सोपानीय व्यवस्था में भागीदारी करना, सम्बन्धों को पहचानना, जीवन-मूल्य, मानव मूल्य, स्थापित मूल्य, शिष्ट मूल्य व वस्तु मूल्य सहज निर्वाह करना समाधान है।
4) स्थिति-सत्य, वस्तु-स्थिति-सत्य, वस्तुगत सत्य सहज विधि से किया गया कार्य-व्यवहार समाधान है।
5) मनाकार को **उत्पादन-कार्य** से प्रमाणित करना समाधान है।
6) मन: स्वस्थता को कार्य-व्यवहार में प्रमाणित करना समाधान है।
7) जागृति पूर्वक परिवार -व्यवस्था में, से, के लिए किया गया कार्य-व्यवहार समाधान है।
8) जीवन व मानव लक्ष्य के अर्थ में किया गया कार्य व्यवहार समाधान है।
9) समझदार, ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी पूर्वक किया गया कार्य-व्यवहार समाधान है।
10) नियम पूर्वक किया गया कार्य-व्यवहार समाधान है।
11) नियंत्रण पूर्वक किया गया कार्य-व्यवहार समाधान है।
12) संतुलन पूर्वक किया गया कार्य व्यवहार समाधान है।
13) न्याय पूर्वक किया गया कार्य व्यवहार समाधान है।
14) स्थिति सत्य, वस्तु स्थिति सत्य व वस्तुगत सत्य विधि से जीना समाधान है।
15) सर्वतोमुखी समाधान को प्रमाणित करना सत्य पूर्ण है सर्वतोमुखी समाधान है।
16) अस्तित्व में अनुभव मूलक विधि से किया गया कार्य-व्यवहार समाधान है।
17) वीरता पूर्वक किया गया कार्य-व्यवहार व्यवस्था सहज प्रमाण एवं समाधान है।
18) धीरता पूर्वक किया गया कार्य-व्यवहार व्यवस्था सहज प्रमाण एवं समाधान है।
19) उदारता पूर्वक किया गया कार्य-व्यवहार व्यवस्था सहज प्रमाण एवं समाधान है।

12. समाधान

1) दयापूर्वक
2) कृपापूर्वक
3) करुणापूर्वक
4) नाम स्वीकृति को संबोधन अभ्युदय के अर्थ में सार्थक है।

5) जाति स्वीकृति (संस्कार) को मानव परिभाषा के अर्थ में सार्थक है।
6) धर्म स्वीकृति को सर्वतोमुखी समाधान अखण्ड समाज के अर्थ में सार्थक है।
7) शिक्षा पूर्वक स्वीकृति को, समाधान-समृद्धि-अभय-सहअस्तित्व में पारंगत होने के अर्थ में सार्थक है।
8) व्यवहार-कार्य स्वीकृति को सम्बन्धों की पहचान आवश्यकता सहित, मूल्यों का निर्वाह, मूल्यांकन, परस्परता में तृप्ति समाधान संतुलन के अर्थ में सार्थक है।
9) सर्व-शुभ स्वीकृति को अभ्युदय सर्वतोमुखी समाधान, समृद्धि अभय, सहअस्तित्व सहज प्रमाण के अर्थ में सार्थक है।
10) स्व-शुभ को सर्व-शुभ में भागीदारी रहने के रूप में सार्थक है।
11) सच्चरित्र रूप के साथ स्वीकृति को संज्ञानीयता में नियंत्रित संवेदना के रूप में सार्थक है।
12) संज्ञानीयता सहज स्वीकृति को सहअस्तित्व सहज ज्ञान-विवेक-विज्ञान सहज रूप में सार्थक है।
13) ज्ञान-विवेक-विज्ञान को सहअस्तित्व रूपी अस्तित्व में अनुभव मूलक विधि से प्रमाणित करने के रूप में सार्थक है।
14) बल के साथ स्वीकृति दयापूर्वक को जीने देते हुए जीने के रूप में सार्थक है।
15) धन के साथ उदारता की स्वीकृति तन-मन पूर्वक सदुपयोग के रूप में सार्थक है।
16) पद के साथ न्याय पूर्वक जीने की स्वीकृति समाधान समृद्धि अभय सहअस्तित्व के अर्थ में सार्थक है।
17) बुद्धि के साथ विवेक सहज स्वीकृति को मानवीय व्यवस्था, जीवन लक्ष्य को ज्ञान-विज्ञान-सम्मत विधि से सार्थक होने के रूप में समाधान है।
18) आज्ञा-पालन-स्वीकृति सहयोग, अनुकरण कार्य के अर्थ में सार्थक है।
19) अनुशासन स्वीकृति को सहयोग अनुसरण पूर्वक जागृति के अर्थ में सार्थक है।
20) स्वानुशासन स्वीकृति को जागृति प्रमाणिकता प्रमाण के अर्थ में समाधान है। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 135- 158)**

- **विनिमय कोष कार्य व्यवस्था**

  स्वरूप

  गाँव में हर तरह का विनिमय “विनिमय-कोष समिति” द्वारा संचालित “ग्राम स्वायत्त विनिमय-कोष” द्वारा किया जायेगा। विनिमय कोष ग्राम स्वराज्य सभा में से अंगभूत कार्यकलाप होगा। इसका अपना कार्य नीति संविधान सम्मत होगा। यह संस्था लाभ-हानि मुक्त व्यवस्था पर कार्य करेगी। इसका मुख्य उद्देश्य गाँव के प्रत्येक व्यक्ति द्वारा उत्पादित वस्तुओं का विनिमय करना व उनकी आवश्यकता अनुसार वस्तुओं का विनिमय करना होगा। साथ ही यह कोष **“उत्पादन कार्य सलाह समिति”** व “शिक्षा-संस्कार समिति” के साथ मिलकर कार्य करेगी व श्रम मूल्य आधारित नियम के आधार पर विनिमय में ध्यान देगी। विनिमय कोष की कार्य पद्धति निम्न प्रकार से होगी :-....। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 158)**
- **(ग्राम/मोहल्ला व्यवस्था)**

  स्वरूप व निर्वाचन

  ग्राम का प्रत्येक परिवार दस (10) व्यक्तियों के स्वरूप में गण्य होगा। यदि किसी परिवार में उस से कम व्यक्ति हैं तो वह अपने परिवार के निकटस्थ, अन्य परिवारों से मिलकर, एक परिवार सभा का गठन करेंगे। परिवार का प्रत्येक सदस्य युवा व वयस्क सम्मिलित रुप में परिवार सभा का गठन करेंगे। परिवार सभा के सब सदस्य संयुक्त रुप से एक सम्मति से व्यक्ति को समाधान समृद्धि सहित उपयोगिता के आधार पर परिवार समूह सभा के लिए

निर्वाचित करेंगे। जो 'जीवन विद्या (ज्ञान-विवेक-विज्ञान)" व "वस्तु-विद्या (**उत्पादन कार्य** में कुशलता-निपुणता)" में सर्वाधिक पारंगत होंगे। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 163)**

- **(ग्राम/मोहल्ला व्यवस्था)**

8.6 कार्यशैली :-

प्रत्येक ग्राम सभा, "ग्राम स्वराज्य व्यवस्था" को स्थापित करने के लिए निम्न 5 समितियों का गठन ग्राम सभा से मनोनीत सदस्य करेंगे :-

1. मानवीय शिक्षा संस्कार समिति
2. **उत्पादन कार्य व सलाहकार समिति**
3. वस्तु विनिमय कोष समिति
4. स्वास्थ्य संयम समिति
5. मानवीय न्याय सुरक्षा समिति

उपर्युक्त समितियां ग्राम सभा के मार्ग दर्शन के आधार पर कार्य करेंगी। उपरोक्त समितियां क्रम से ग्राम में शिक्षा संस्कार व्यवस्था, **उत्पादन कार्य व्यवस्था**, विनिमय कोष व्यवस्था, स्वास्थ्य संयम व्यवस्था व न्याय सुरक्षा व्यवस्था को सर्व सुलभ करेगी। उपरोक्त समिति के सदस्यों का मनोनयन ग्राम सभा करेगी। प्रत्येक मनोनीत सदस्य इन समितियों के लिए अंश-कालिक सदस्य होगा एवं वह अपनी समिति का कर्तव्य एवं दायित्वों का निर्वाह अपने निजी व्यवसाय के अलावा करेगा। वयोवृद्ध स्त्री व पुरुष, जो जीवन-विद्या व वस्तु-विद्या में पारंगत होंगे, उनको समितियों के अंश कालिक व पूर्ण कालिक सदस्य होने का अवसर रहेगा। प्रत्येक समिति का विस्तृत कार्यक्रम अगले खंडों में विस्तार से दिया गया है। ग्राम स्वराज्य व्यवस्था के लक्ष्य निम्न होंगे :-

1. गाँव के प्रत्येक मानव को मानवीय शिक्षा-संस्कार से संपन्न करना।
2. प्रत्येक व्यक्ति को तकनीकी में निपुणता-कुशलता को सजह सुलभ करना।
3. प्रत्येक व्यक्ति को व्यवहार में सामाजिक होने के लिए ज्ञान-विवेक-विज्ञान सहज शिक्षा संस्कार सर्व सुलभ करना जिससे न्याय सुरक्षा प्रमाणित हो।
4. प्रत्येक व्यक्ति को किसी न किसी **उत्पादन कार्य** में प्रवृत्त प्रोत्साहित करना।
5. उत्पादित वस्तुओं को विनिमय-कोष द्वारा लाभ-हानि मुक्त पद्धति से लेन-देन करने की व्यवस्था प्रदान करना और ग्राम वासियों के लिए आवश्यकीय वस्तुओं को उपलब्ध कराना विनिमय कोष कर्तव्य रहेगा।
6. प्रत्येक व्यक्ति को न्याय व सुरक्षा सहज सुलभ कराना। साथ ही सुधारवादी-प्रक्रिया से गलती व अपराध प्रवृत्तियों का निराकरण करना।
7. प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वास्थ्य के प्रति स्वस्थ रहने का अवधारणापूर्वक संकल्प बद्ध करना, व्यायाम व खेलों के लिए प्रोत्साहित करना, संक्रामक रोग-निरोधी उपायों की उपयोगिता से अवगत कराना। साथ ही हर परिवार में सहज व उपकारी चिकित्सा की व्यवस्था करना।
8. प्रत्येक व्यक्ति में स्वयं के प्रति विश्वास, श्रेष्ठता के प्रति सम्मान, ग्राम जीवन, परिवार-व्यवस्था के प्रति विश्वास व निष्ठा उत्पन्न करना। प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन रहने में निष्ठा स्थापित करना।
9. प्रत्येक व्यक्ति / परिवार अपनी आवश्कता से अधिक उत्पादन करे, ऐसा सुनिश्चित उपाय करना।
10. ग्राम के लिए सामान्य सुविधाओं की व्यवस्था करना।
11. व्यक्तित्व व प्रतिभा का संतुलित उदय हो, ऐसा सुनिश्चित उपाय करना। इसके लिए समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, भागीदारी पूर्वक जीने में निष्ठा सम्पन्न करना।
12. प्रत्येक परिवार में भौतिक समृद्धि व बौद्धिक समाधान साक्षित होने का उपाय करना, समस्त ग्राम वासियों की परस्परता में अभयता व सह-अस्तित्व चरितार्थ होने का सभी उपाय करना। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 166- 168)**

- **(समझदार परिवार समूह सभा व परिवार सदस्य के कर्त्तव्य व दायित्व :-)**

4. परिवार संबंधी समस्त जानकारी, जिसके आधार पर परिवार के सदस्यों को शिक्षा-संस्कार, **उत्पादन कार्य** आदि में लगाना है, के लिए सभी तथ्यों को एकत्रित कर, ग्राम सभा को उपलब्ध कराने का कर्त्तव्य परिवार प्रधान का होगा। परिवार में यदि कोई व्यक्ति, किसी विशेष योग्यता, हस्तकला, हस्त-शिल्प, कृषि व अन्य तकनीकी या साहित्य-कला में माहिर है, तो यह जानकारी भी ग्राम की संबंधित समिति को उपलब्ध कराएगा। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 171)**

- सामान्य आकाँक्षा व महत्वाकाँक्षा संबंधी **उत्पादन कार्य** में हर व्यक्ति पारंगत होने का व्यवस्था रहेगा। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 176)**
- **8.9 (2) उत्पादन कार्य समिति**

ग्राम में हर तरह का उत्पादन व सेवा कार्य "ग्राम **उत्पादन कार्य** सलाह समिति" द्वारा संचालित किया जायेगा। यह समिति अन्य समितियों के साथ मिलकर कार्य करेगी। वह समिति गांव के प्रत्येक स्वस्थ स्त्री पुरुष को, किसी न किसी **उत्पादन कार्य** में लगावेगी। स्थानीय सर्वेक्षण के आधार पर जिसका विस्तृत विवरण सर्वेक्षण प्रक्रिया के अंतर्गत दिया जा चुका है, उत्पादन समिति प्रत्येक व्यक्ति को उसकी वर्तमान अर्हता के आधार पर कोई **उत्पादन कार्य** करने की सलाह देगी व उनके लिए उस व्यक्ति को आवश्यक प्रशिक्षण व अन्य सुविधाएँ उपलब्ध कराएगी। जो भी **उत्पादन कार्य** होगा वह मानव की सामान्य आकाँक्षा (आवास, आहार, अलंकार) व महत्वाकाँक्षा (दूरगमन, दूरदर्शन, दूरश्रवण) संबंधी आवश्यकताओं पर आधारित होगा।

"**उत्पादन कार्य** सलाह समिति" ग्राम सभा के सहयोग से गाँव की सामान्य सुविधाओं को स्थापित करने में सहयोग देगी व आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराएगी। पर्यावरण सुरक्षा व पर्यावरण के साथ एक सूत्रता को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाएगी। प्रदूषण से मुक्त **उत्पादन कार्य** प्रणाली को अपनाया जायेगा। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 177)**

- **(उत्पादन में न्याय)**

  3) उत्पादन के लिए व्यक्ति में निहित क्षमता योग्यता के अनुरूप उसे प्रवृत्त करना जिसका दायित्व "**उत्पादन कार्य** सलाह समिति" का होगा।

  5) **उत्पादन कार्य** सामान्य आकाँक्षा (आहार, आवास, अलंकार) महत्वाकाँक्षा (दूर दर्शन, दूर गमन, दूर श्रवण) सम्बन्धी वस्तुओं के रूप में प्रमाणित होना।

  6) "**उत्पादन कार्य** सलाह समिति" व "विनिमय कोष समिति" संयुक्त रूप में सम्पूर्ण ग्राम की उत्पादन सम्बन्धी तादाद, गुणवत्ता व श्रम मूल्यों का निर्धारण करेगी। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 181-182)**
- **(उत्पादन और विनिमय सुरक्षा) :-**
  1. उत्पादन सुरक्षा :- गाँव में जितने भी प्रकार के उत्पादन सम्बन्धी मौलिकताएँ प्रमाणित होंगी उन सबके सुरक्षा का दायित्व न्याय सुरक्षा समिति का होगा। जैसे किसी **उत्पादन कार्य** में विशेष प्रकार की मौलिकता अथवा मौलिक प्रणाली अथवा मौलिक औजार, मौलिक विधि जो परंपरा में नहीं रही है, ऐसी स्थिति में उन सबको सुरक्षित किया जाएगा। इन सबसे सम्बन्धित मूल वाङ्ग्मय, डिजाइन, चित्रण, नक्शा, प्रक्रिया, प्रणाली और विधियों को लिपि बद्ध, सूत्र बद्ध कर सुरक्षित करेगा। आवश्यकता पड़ने पर लोकव्यापीकरण कराएगा व पुरस्कार की व्यवस्था करेगा।
  2. औषधियों का अनुसंधान, वनस्पतियों का पहचान, ज्योतिष सम्बन्धी अनुसंधान, हस्तरेखा व सामुद्रकि शास्त्र सम्बन्धी साहित्य का अनुसंधान जो परंपरा में नहीं रहा है, उसको उपयोगिता के अनुसार उसकी सुरक्षा का दायित्व "सुरक्षा समिति" का होगा।
  3. साहित्य, कला, संगीत, शिल्प में परंपरा की श्रेष्ठता का अनुसंधान, जो परंपरा में नहीं थी, ऐसी प्रस्तुति होने की स्थिति में उसका यथावत् संरक्षण करेगा।
  4. खेलकूद, व्यायाम, अभ्यास में परंपरा से अधिक श्रेष्ठता और अनुसंधानों को संरक्षित करेगा।

उपरोक्त कार्य के लिए "न्याय सुरक्षा समिति" क्रम से **उत्पादन कार्य सलाह समिति**, "स्वास्थ्य संयम समिति" "शिक्षा संस्कार समिति" के सहयोग से मूल्यांकन प्रक्रिया सम्पादित करेगा। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 184)**

- **(मूल्यांकन, प्रोत्साहन प्रक्रिया)**

1. उत्पादन कार्य सलाह समिति का मूल्यांकन

"**उत्पादन कार्य** सलाह समिति" का मूल्यांकन निम्न आधारों पर किया जायेगा :-

1. कृषि, पशुपालन, वनोपज, हस्त शिल्प, ग्राम-शिल्प, कुटीर उद्योग, ग्रामोद्योग के कुल उत्पादन का मूल्यांकन
2. उत्पादन में कार्य गति का मूल्यांकन।
3. उत्पादन में गुणवत्ता व उत्पादकता का मूल्यांकन।
4. **उत्पादन कार्य** में कुशलता व निपुणता का मूल्यांकन।
5. उत्पादन के लिए आवश्यकीय कच्चेमाल/वस्तुओं की सहज सुलभता का मूल्यांकन।
6. प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए प्रदूषण विहीन प्रणाली से उत्पादन और **उत्पादन कार्य** में तकनीकी परिवर्धन का मूल्यांकन।
7. मानव परंपरा में आवश्यकीय व उपयोगी सामान्य आकाँक्षा (आहार, आवास, अलंकार) व महत्वाकाँक्षा (दूर गमन, दूर दर्शन, दूर श्रवण) संबंधी वस्तुओं में **उत्पादन कार्य** का मूल्यांकन। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 190)**

- **(शिक्षा संस्कार के कार्यों का मूल्यांकन)**

2. स्वयं के प्रति विश्वास व श्रेष्ठता के प्रति सम्मान क्रिया प्रतिभा और व्यक्तित्व में संतुलन, व्यवहार में सामाजिक, **उत्पादन कार्य** में स्वावलंबन सहज विधि से मूल्यांकन। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 191)**

- **(कार्यक्रम-4)**

उत्पादन कार्य समिति से सत्यापन

1. **उत्पादन कार्य** चिन्हित रूप में सर्वसुलभ होने का सत्यापन निरीक्षण-परीक्षण पूर्वक सत्यापित करेगा। कार्यक्रम परिवार-समूह-सभा में समाहित **उत्पादन कार्य** समिति सर्वसुलभता के लिये दायी रहेगी।
2. **उत्पादन कार्य** पूर्वक हर परिवार सहज आहार-विहार-व्यवहार, आवास, अलंकार शरीर पुष्टि- संरक्षण समाज गति के आधार पर परीक्षण-निरीक्षण कार्यक्रम है।
3. किसी परिवार में पर्याप्त उत्पादन न होने की स्थिति में **उत्पादन कार्य** समिति का संयोजन मार्ग दर्शन से पर्याप्त रूप देने का सत्यापन होगा। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 194-195)**

- **(वर्षा कालोत्सव:-)**

3.5 परिवारों में क्रियान्वित हस्त-कला, ग्राम शिल्प कुटीर उद्योग व ग्रामोद्योग में **उत्पादन कार्योत्सव** समझदारी पूर्वक उपयोगिता को प्रमाणित करने में पूरा ध्यान रखना उत्सव। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 208)**

- **(विनिमय उत्सव घोषणा)**

उत्सव

1. **उत्पादन कार्य** व सफलता।
2. विनिमय कोष-कार्य व सफलता का।
3. स्वास्थ्य-संयम-कार्य व सफलता का मूल्यांकन उन समितियों के सदस्य एक परिवार समूह सभा के सदस्यों का संयुक्त निरीक्षण-परीक्षण, ग्राम-सभा पटल में सूचना।
4. स्वास्थ्य संयमोत्सव हर वर्ष कम से कम एक बार सम्पन्न होगा। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 209-210)**

- **(समृद्धि घोषणा)**

उत्पादन कार्य

1. ग्राम के हर परिवार में **उत्पादन-कार्य** सुलभता का परीक्षण-निरीक्षण-कार्य का समिति सदस्य व परिवार-समूह-सभा-सदस्य का संयुक्त प्रक्रिया, निरीक्षण-परीक्षण ग्राम सभा पटल में स्पष्ट सूचना रहेगा।
2. **उत्पादन कार्य** में सुधार बदलाव आवश्यक होने की स्थिति में परिवार-समूह-सभा-प्रस्ताव ग्राम-सभा की स्वीकृति के साथ सम्पन्न होगा।
3. वर्ष में एक बार **उत्पादन कार्य** समिति का उत्सव सम्पन्न होगा। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 210)**

- **(22) नित्य-उत्सव**

  हर नर नारी स्वयं में विश्वास, श्रेष्ठता का सम्मान करने में सहज होने का घोषणा

  1. स्वयं में विश्वास होना समझदारी सहज क्रिया कलाप उत्सव
  2. श्रेष्ठता का सम्मान करना - उत्सव
  3. प्रतिभा सम्पन्नता - उत्सव
  4. व्यक्तित्व सहज प्रमाण - उत्सव
  5. व्यवहार में समाजिक होना - उत्सव
  6. **व्यवसाय (उत्पादन कार्य)** में स्वावलम्बन सहज – उत्सव

  अमानव के लिये मानव, मानव के लिए देवमानव, देवमानव के लिए दिव्य मानव, दिव्यमानव के लिए दस सोपानीय व्यवस्था तंत्र में भागीदारी क्रम में परम श्रेष्ठता की परंपरा व सम्मान व्यवस्था। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 211-212)**

- **(23) शोध - नित्य उत्सव - अनुसन्धान**

  1. व्यवहार व आचरण सुगमता के अर्थ में
  2. मानवीय शिक्षा-संस्कार सुगम परंपरा के अर्थ में
  3. न्याय-सुरक्षा में सुगमता के अर्थ में
  4. **उत्पादन कार्य** में सुगमता के अर्थ में
  5. विनिमय कार्य में सुगमता के अर्थ में
  6. स्वास्थ्य-संयम कार्य में सुगमता के अर्थ में लोक व्यापीकरण पूर्वक प्रयोजन-प्रमाण नित्य उत्सव है। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 212)**

- **(जागृति परंपरा वैभव घोषणा – नित्य उत्सव)**

  मानवीयतापूर्ण आचरण सहित व्यवहार व **उत्पादन कार्य** नित्य उत्सव है। **(अध्याय:9, पृष्ठ नंबर: 214)**

- उत्पादन सुलभता का तात्पर्य परिवार के प्रत्येक सदस्य को वयस्क होने तक व्यवसाय में स्वावलम्बी बनाने से है। परिवार में सभी वयस्क परिवार सहज आवश्यकता से अधिक उत्पादन कर सकें।

  मानवीयता पूर्वक परिवार में उत्पादन का तात्पर्य प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन द्वारा उसके साथ पूरकता विधि से बिना क्षति के सामान्यकाँक्षा (आहार, आवास, अलंकार) व महत्वाकाँक्षा (दूर-श्रवण, दूर-दर्शन, दूर-गमन) सम्बन्धी वस्तुओं के निर्माण से है। परिवार में भौतिक समृद्धि के लिए इससे अधिक की आवश्यकता नहीं है, इससे कम होने से भौतिक समृद्धि होना संभव नहीं है। **(अध्याय:10, पृष्ठ नंबर: 217)**

- **(ग्राम स्वराज्य के लिए पूर्व आंकलन)**

  10.2 (2) उत्पादन सम्बन्धी आंकलन :-

  कृषि भूमि, पड़ती भूमि, कृषि संभावित भूमि। सिंचाई व्यवस्था, जल के स्रोत, तालाब नलकूप, नहर, नदी आदि सम्बन्धी स्थिति और संभावनाओं का आंकलन।

  फसलों के किस्म, प्रकार, कृषि उपज, तादाद, वर्ष-फसल चक्र, स्थानीय अभाव, समस्याएँ व संभावनाएँ।

  कृषि सम्बन्धी तकनीक व ज्ञान में पारंगत-व्यक्तियों की संख्या। क्या वे अन्य को पारंगत बना सकते हैं?

उर्वरक व्यवस्था, गोबर कम्पोस्ट खाद की श्रेष्ठता आवश्यकता व रासायनिक खादों के उपयोग के सम्बन्ध में जानकारी एवं सतर्क होने का उपाय।

बीजों के प्रकार, उनके बारे में जानकारी। कृषि सम्बन्धी औजारों, यंत्रों, कीट नाशक दवाइयों आदि की प्राकृतिक उपलब्धता स्वायत्तता, बीज खाद, पानी, उर्जा संतुलन व अभ्यास के बारे में जानकारी समझदारी।

पशुधन के बारे में पूरी जानकारी। उनकी तादाद, नस्ल, प्रकार के अनुसार। कितने कृषक, कृषि के साथ गौशाला रखते हैं? कितने गोबर गैस प्लांट हैं? कितना लगाना है?

हस्त शिल्प संबंधी उत्पादन जैसे- चित्रकला, मूर्तिकला, शिल्प कला, बुनाई, कढ़ाई, छपाई, रंगाई, बधाई पत्र, सूत कातना, एम्ब्राइडरी, इनग्रेविंग आदि में कितने लोग व्यस्त हैं ? उनसे उपलब्ध तकनीक व उपलब्ध, उपयोग सहज आंकलन।

ग्राम शिल्प सम्बन्धी उत्पादन जैसे धातु कला, वस्त्र कला, रेशम, काष्ठ कला, मिट्टी और चर्म कला आदि में कितने लोग प्रशिक्षित व व्यस्त हैं। इनमें उपलब्ध तकनीक व अभ्यास का आंकलन। कुटीर उद्योग द्वारा उत्पादन कार्यों में कितने लोग व्यस्त हैं ? वे क्या व कितना उत्पादन करते हैं ? इसी तरह ग्रामोद्योग के बारे में आंकलन। सेवा कार्यों में लगे व्यक्तियों का सर्वेक्षण आंकलन। **(अध्याय:10, पृष्ठ नंबर: 220-221)**

- **मूल्य**
  - ❖ सम्पूर्ण संबंध निश्चित है।
  - ❖ परिवार सभा सम्बन्ध, शिक्षा-संस्कार-सम्बन्ध, न्याय-सुरक्षा सम्बन्ध, **उत्पादन कार्य** विनिमय कार्य सम्बन्ध, स्वास्थ्य संयम सम्बन्ध **(अध्याय:11, पृष्ठ नंबर: 230)**
- **(जीवन लक्ष्य, मानव लक्ष्य)**

  2.11 मानव लक्ष्य मानवत्व के योगफल में ही जागृति मूलक शिक्षा, न्याय सुरक्षा, **उत्पादन कार्य**, विनिमय कार्य, स्वास्थ्य संयम कार्य है। **(अध्याय:12, पृष्ठ नंबर: 241)**

- **(जागृति, जागृत परंपरा, जागृत मानव)**

  3.21 जागृत परंपरा में ही मानवीय शिक्षा संस्कार, मानवीय आचरण संहिता रूपी संविधान, मानवीयता पूर्ण परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था सहित सह-अस्तित्व में अनुभव मूलक व्यवहार व प्रयोग **उत्पादन कार्य**, विनिमय कार्य, स्वास्थ्य संयम कार्य, न्याय सुरक्षा कार्य, मानवीय शिक्षा-संस्कार कार्य सहज प्रमाण संपन्नता का बोध सहित स्वयं में विश्वास पूर्वक श्रेष्ठता का सम्मान संपन्न होना है। **(अध्याय:12, पृष्ठ नंबर: 245)**

- **(जीवन, दृष्टापद)**

  8.35 **उत्पादन- कार्य** संबंधों में निर्वाह विधि से किया गया कार्य –व्यवहार व व्यवस्था में भागीदारी में दृष्टा- पद का प्रमाण व्यवस्था सहज रूप में स्पष्ट होता है। **(अध्याय:12, पृष्ठ नंबर: 277)**
- **(अनुभव –प्रमाण)**

  12.2 क्रम से सर्वशुभ है। अनुभव सार्वभौम अक्षुण्ण परम है जिसके आधार पर ही मानव चेतना सहज- व्यवहार, प्रमाण, सामाजिक अखंडता के अर्थ में **उत्पादन कार्य**, प्रयोग, प्रमाण, समाधान पूर्वक समृद्धि के अर्थ में प्रमाणित होना नित्य समीचीन है। **(अध्याय:12, पृष्ठ नंबर: 285)**

- **(मानव-मानवत्व)**

  13.30 मानव सहज अध्ययन पूर्वक मानवीय संविधान शिक्षा व्यवस्था व **उत्पादन कार्य**- व्यवहार विधि स्पष्ट होता है। यह मानवत्व है। **(अध्याय:12, पृष्ठ नंबर: 291)**

- 14.66 परिभाषा संगत होने का तात्पर्य मन: स्वस्थता का सहज मानसिकता सहित मनाकार को साकार कर प्रयोजन सह परिवार आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** में प्रमाणित रहने से है यह मानवत्व है। **(अध्याय:12, पृष्ठ नंबर: 304)**

जीवन विद्या – एक परिचय

(संस्करण: 2010, मुद्रण: 2017)

- मानव अभी तक मूल्यों के पास गया ही नहीं। मूल्यों के पास गया होता तो मूल्य अभिव्यक्त होता, मूल्य प्रमाणित होता, मूल्यांकित होता और स्वाभाविक रूप में न्याय होता। न्यायालयों में फैसला होता है न्याय नहीं। इन फैसलों से एक पक्ष भयवश एक पक्ष प्रलोभनवश सहमत होता है। उभयतृप्ति इसमें कभी हुआ नहीं, हो ही नहीं सकता है। न्याय को पाने में हम सर्वथा असमर्थ रहे हैं। उसके बावजूद भी विकास का दावा करते हैं। विकास का क्या अर्थ होता है आप ही सोच लीजिए। भय और प्रलोभन से हर मानव छूटना चाहता है ये नियति सहज है। इससे मानव का भी कल्याण है। नैसर्गिकता का भी कल्याण है। इस तरह प्रयोजन के आधार पर संबंध है। प्रयोजन समाधान, समृद्धि, अभय सह-अस्तित्व है इसके लिए प्रक्रिया है व्यवस्था में जीना। **व्यवस्था में जीने का मतलब है कि पाँचों आयामों में भागीदारी करना। पाँच आयाम है: 1. शिक्षा- संस्कार, 2. न्याय- सुरक्षा, 3. स्वास्थ्य- संयम, 4. उत्पादन- कार्य, 5. विनिमय- कोष। (अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 76-77)**
- इस तरह धर्म में जीना अर्थात समाधान, समृद्धि, अभय, सह-अस्तित्व सहज प्रमाण पूर्वक सार्वभौम व्यवस्था में जीना, अखंड समाज व्यवस्था में जीना है। इस विधि से मानव की सार्वभौम व्यवस्था ही मानवत्व होने को मैंने देखा है। मानव जाति एक, कर्म अनेक; मानव धर्म एक समाधान अनेक॥ मानव अनेक प्रकार के कर्म कर सकता है सुखी रहने के लिए। अनेक कर्म का मतलब है अलग- अलग कार्य जैसे कपड़े का काम, मिट्टी का काम, फसल का काम आदि। जब तक मानव, मानव को एक जाति के रूप में पहचानेगा नहीं तब तक मानव के साथ शुभ कार्य किया भी कैसे जा सकता है। मानव के लिए यह स्वाभाविक है कि वह अनेक कार्य करेगा। **अनेक कार्य का मतलब उत्पादन कार्य से है।** मानव जाति का एक होना हम स्वीकार करते हैं कि मानव का उद्देश्य एक ही है, वह है सुखी होना। समृद्ध होना, समाधानित होना, अभय होना और निरंतर प्रमाणित करना सह-अस्तित्व को। इन उद्देश्यों को पूरा करने के लिए जो कार्यक्रम बनाते हैं उसका आधार "मानव जाति, मानव धर्म एक" पर ही बनता है। सुखी

होने का रास्ता जो है उसी का नाम है धर्म (व्यवस्था)। एक देश काल में समझदार होकर व्यवस्था को प्रमाणित कर पाते हैं तो उसे हर देश काल में प्रमाणित कर सकते हैं यही प्रस्ताव की खूबी है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 85-86)**

- हर अभिभावक अपने बच्चों को सिखाता ही है उसके बाद शिक्षण संस्थाओं में सिखाते हैं फिर राजगद्दी, धर्म गद्दी अपने ढंग से सिखाते हैं। इस शिक्षा से हम जो भी शिक्षा पाए उससे मानव बने नहीं है। अब विचार इतना ही है, प्रयत्न इतना ही है, प्रमाण इतना ही है कि हम मानव बन सकें। मानव परंपरा बन सकें। इससे फायदा होगा नैसर्गिकता का संतुलन और मानव में न्याय स्थापित हो जाएगा। न्यायपूर्वक व्यवस्था में जीना ही है। यह कौन सा बड़ा दुर्गम कार्य है? किंतु मानव को इसकी आवश्यकता महसूस होने की जरूरत है। अभी तक जो भी किए हैं संवेदना के आधार पर किए हैं। जिससे हमारी जरूरत पूरी होने वाली नहीं इसी से धरती बर्बाद हो गई आदमी तो बर्बाद है ही। इसीलिए आबाद होना है तो मानवीयता को पहचानना ही होगा। मानवीयतापूर्ण व्यवस्था में जीना होगा और उसकी निरंतरता की संभावना है। वर्तमान में मुद्दा है कि नैसर्गिकता के साथ अपराध रुक जाए। **व्यवस्था का स्वरूप है:-**

  1. शिक्षा संस्कार में भागीदारी 2. न्याय सुरक्षा में भागीदारी 3. उत्पादन कार्य में भागीदारी 4.विनिमय कोष में भागीदारी 5. स्वास्थ्य संयम में भागीदारी

  इन पाँचों आयामों में भागीदारी ही व्यवस्था में भागीदारी है। यह जागृति के बाद ऐसी व्यवस्था हर आदमी से उद्गमीत होती है, हर आदमी में प्रमाणित होती है। इस प्रकार सार संक्षेप में व्यवस्था की प्रस्तुति पूरी हुई। हर बुद्धिमान इसे स्वीकार सकता है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 100)**

- ....अभी तक अर्थशास्त्र का डंका बजा- बजाकर हम मानव जाति (पढ़ा हुआ) के उत्पादन प्रकृति को निरर्थक या बिलकुल उन्मूलन किए ही रहे हैं। बर्बाद किए ही रहते हैं। उसके बाद और कोई स्पेशलाइजेशन की बात करते हैं उसमें **उत्पादन कार्य** प्रवृत्ति और भी बर्बाद होती है। बर्बाद होने के बाद वह एक अच्छा आदमी माना जाता है। ऐसा अच्छा आदमी बनने के पश्चात बिना उत्पादन किए उनको सबको चाहिए, सबसे ज्यादा उन्हीं को चाहिए। इस ढंग से उत्पादन नहीं करने की प्रवृत्ति और संपूर्ण वस्तुओं को ज्यादा से ज्यादा पाने की इच्छा यह दोनों मिलाकर के संसार के साथ द्रोह, विद्रोह, शोषण होना भावी हो जाता है। **(अध्याय:4, पृष्ठ नंबर: 109)**

विकल्प एवं अध्ययन बिन्दु

(संस्करण:2011,मुद्रण: 2016)

- (38) व्यवस्था सहज 5 आयामों का स्पष्ट बोध एवं हृदयंगम
    1) शिक्षा-संस्कार व्यवस्था
    2) न्याय-सुरक्षा व्यवस्था
    3) **उत्पादन-कार्य** व्यवस्था
    4) विनिमय-कोष व्यवस्था
    5) स्वास्थ्य-संयम व्यवस्था **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 27-28)**
- (39) (1) अस्तित्व मूलक मानव केंद्रित चिन्तन पूर्वक सहअस्तित्व वादी विधि से :
    - **परिवार व्यवस्था में विश्वास निर्वाह निरंतरता**
    परिवारजन-समझदार-ज्ञान विज्ञान विवेक संपन्न
    परिवार में - मानवीयतापूर्ण आचरण सहित समाधान समृद्धि सहज प्रमाण में स्वत्व स्वतंत्रता अधिकार सम्पन्नता व वैभव निरंतरता अनूकुल परिस्थिति
    वर्तमान में विश्वास (अभय) सूत्र
    - **वर्तमान में उपयोगिता पूरकता सहज अनूकुल परिस्थितियाँ:-**

    (1) मानवीय शिक्षा संस्कार सुलभता
    (2) न्याय सुरक्षा सुलभता
    (3) **उत्पादन कार्य** सुलभता
    (4) विनिमय कोष सुलभता
    (5) स्वास्थ्य, संयम सुलभता - सहज ज्ञान विज्ञान विवेक सुलभता ही अखंडता सार्वभौमता सहज सूत्र दश सोपानीय व्यवस्था व्यक्त हो। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 28)**

    - 37. जागृति सहज मानव परंपरा :- समझदारी सहज सर्वतोमुखी समाधान के रुप में प्रमाणित करने का परंपरा। शिक्षा - संस्कार, न्याय सुरक्षा, **उत्पादन कार्य**, विनिमय कोष, स्वास्थ्य संयम विधि से प्रमाण। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर:40)**

- 113. सार्वभौम व्याख्या :- दश सोपानीय परिवारमूलक स्वराज्य व्यवस्था जिसमें बिना धन व्यय के जनप्रतिनिधि सुलभ होना। सभी प्रतिनिधि समझदारी समृद्धि से सम्पन्न होना। समझदारी सम्पन्न समृद्धि सहित परिवार का प्रतिनिधि होना एवं मानवीय शिक्षा संस्कार, न्याय सुरक्षा संस्कार, **उत्पादन कार्य** संस्कार, विनिमय कार्य संस्कार, स्वास्थ्य संयम संस्कार, कार्य में भागीदारी सहज परिवार प्रतिनिधि निर्वाचित परंपरा रुप में वर्तमान होना। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 47)**
- 127. शिक्षण :- तकनीक, **उत्पादन कार्य** के लिए आवश्यकीय कारीगरी का कर्माभ्यास। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर:48)**

मानवीय आचरण सूत्र

(संस्करण: प्रथम, मुद्रण: 2003)

- 1.6 समझदारी पाँच प्रकार अर्थात् मानवीय शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, **उत्पादन-कार्य**, विनिमय-कोष, स्वास्थ्य-संयम कार्य से - पहचान प्रकट रहता है। यह हर नर-नारियों में, से, के लिए मौलिक अधिकार व समाधान है। समझ न होने की स्थिति में भ्रम प्रवृत्तियाँ प्रभावकारी रहती हैं जो हर नर-नारियों में, से, के लिए समस्या, क्लेश, कष्ट के रूप में पाई जाती हैं। **(अध्याय:1, पृष्ठ नंबर:2)**
- 2.12 मानव-लक्ष्य मानवत्व के योगफल में ही जागृति मूलक शिक्षा, न्याय सुरक्षा, **उत्पादन कार्य**, विनिमय कार्य स्वास्थ्य संयम कार्य है।

संतुलन	नियंत्रण	नियम	(न्याय, धर्म, सत्य)
↓	↓	↓	↓
स्वास्थ्य के रूप में	उत्पादित वस्तुओं के मूल्यांकन के रूप में	उत्पादन कार्य में	शिक्षा संस्कार न्याय, सुरक्षा में

(अध्याय:2, पृष्ठ नंबर: 13)

- 3.21 जागृत परम्परा में ही मानवीय शिक्षा संस्कार, मानवीय आचार संहिता रूपी संविधान मानवीयता पूर्ण परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था सहित सह-अस्तित्व में अनुभव मूलक व्यवहार व प्रयोग **उत्पादन कार्य**, विनिमय कार्य, स्वास्थ्य संयम कार्य, न्याय सुरक्षा कार्य, मानवीय शिक्षा-संस्कार कार्य सहज प्रमाण सम्पन्नता का बोध सहित स्वयं में विश्वास सम्पन्न होना है। **(अध्याय:3, पृष्ठ नंबर: 18)**
- 8.35 **उत्पादन-कार्य** सम्बन्धों की निर्वाह विधि से किया गया कार्य-व्यवहार व समस्त व्यवस्था में भागीदारी में दृष्टा-पद का प्रमाण स्पष्ट होता है। **(अध्याय:8, पृष्ठ नंबर: 60)**

- 12.2 अनुभव सार्वभौम अक्षुण्ण है जिसके आधार पर ही व्यवहार, प्रमाण, सामाजिक अखण्डता के अर्थ में **उत्पादन कार्य**, प्रयोग, प्रमाण, समृद्धि के अर्थ में प्रमाणित होना नित्य समीचीन है। **(अध्याय:12, पृष्ठ नंबर: 71)**
- 13.30 मानव के अध्ययन के आधार पर मानवीय संविधान शिक्षा व्यवस्था व **उत्पादन कार्य**-व्यवहार विधि स्पष्ट होती है। **(अध्याय:13, पृष्ठ नंबर: 78)**
- 14.66 परिभाषा संगत होने का तात्पर्य मन: स्वस्थता सहज मानसिकता सहित मनाकार को **उत्पादन कार्य** के ' में परिवार की आवश्यकता से अधिक **उत्पादन कार्य** में प्रमाणित रहने से है। यह मानवत्व है। **(अध्याय:14, पृष्ठ नंबर:94)**

संवाद भाग १

(संस्करण: प्रथम, मुद्रण: 2011)

- **नाप-तौल, और आवश्यकता का निश्चयन**
  विज्ञान से नाप-तौल करने के तरीके मिले। छोटे और बड़े दोनों स्तरों पर। इन नाप-तौलों से कोई संतुष्टि का बिन्दु मिला नहीं। और छोटा या और बड़ा नाप सकते हैं - यह हमेशा शेष रहता है। कितना भी छोटा नाप लें, और छोटा नाप सकते हैं - यह कल्पना जाती ही है। कितना भी बड़ा नाप लें, और बड़ा नाप सकते हैं - यह कल्पना जाती ही है। कितना नापोगे? कहाँ तक नापोगे? हम जितना नापते हैं - उससे और अधिक नापने की अपेक्षा या अर्हता हम में बना ही रहता है।
  नापना और तौलना हम आवश्यकता के अनुसार ही कर पायेंगे। नापना-तौलना हम अपनी आशा या अपेक्षा के अनुसार कर नहीं पायेंगे। जीवन शक्तियां अक्षय हैं - इसलिए हमारी आशा और अपेक्षा अक्षय हैं। आशा या अपेक्षा के अर्थ में आवश्यकता को मिलाना असंभव है। आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही हम **उत्पादन-कार्य** करते हैं। इस प्रकार - हम अपनी आशा और अपेक्षा के अर्थ में अपने **उत्पादन-कार्य** को निश्चित कर ही नहीं सकते।
  कार्य का निश्चयन तभी हो सकता है - जब हम अपनी आवश्यकताओं का निश्चयन कर पाएं। निश्चित आवश्यकताओं के लिए क्या और कितना **उत्पादन-कार्य** करना है - यह आसानी से तय किया जा सकता है। अध्ययन पूर्वक समाधान को हम प्राप्त कर लेते हैं। समाधान निश्चित है और सर्वतोमुखी है। इसलिए समाधान पूर्वक हम अपनी आवश्यकताओं का निश्चयन कर सकते हैं। आवश्यकताओं का निश्चयन समाधान के पहले हो नहीं सकता - क्योंकि जीवन में आशा और अपेक्षा को संयत करने का आधार समाधान से ही आता है।
  आवश्यकताओं का निश्चयन परिवार की सीमा में ही सम्भव है - अकेले में नहीं। परिवार ही **उत्पादन-कार्य** की मूल ईकाई है। परिवार में आवश्यकता के निश्चयन से श्रम-नियोजन पूर्वक आवश्यकता अधिक उत्पादन करके समृद्धि को प्रमाणित किया जाता है। समाधान-समृद्धि संपन्न परिवार ही व्यवस्था में भागीदारी करने के योग्य होता है।
  - श्रद्धेय श्री नागराज जी के साथ संवाद पर आधारित (अगस्त २००६) **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर:12)**

- गुण को मध्यस्थ दर्शन में सम, विषम और मध्यस्थ स्वरूप में होना समझाया गया है। प्रकृति की इकाइयाँ साम्य उर्जा (सत्ता) में संपृक्त है और कार्य उर्जा को प्रकाशित करती है। साम्य उर्जा घटता बढ़ता नहीं है, कार्य उर्जा घटता बढ़ता है। सम, विषम गुण "कार्य ऊर्जा" से संबंधित है। मानव अपनी कार्य उर्जा को जब "**उत्पादन कार्य**" (मनाकर को साकार करना) में लगाता है और "समझाने" में लगाता है उसे "सम" गुण कहा। मानव अपनी कार्य उर्जा को विनाश करने में या भ्रमित करने में लगाता है उसे "विषम" गुण कहा। भ्रमित करने और विनाश करने में स्व शक्तियों का प्रयोग ही अपराध है। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर:182)**

- साम्य उर्जा संपन्नता वश परमाणुओं में चुंबकीय बल संपन्नता है। चुंबकीय बल संपन्नता वश परमाणुओं में क्रियाशीलता है। क्रियाशीलता वश (जड़) इकाइयों में कार्य ऊर्जा का प्रकाशन है जो ध्वनि, ताप और विद्युत के रूप में होती है। साम्य उर्जा यथावत रहती है। साम्य उर्जा का व्यय नहीं होता। कार्य ऊर्जा का व्यय होता है। जड़ प्रकृति में जो कार्य ऊर्जा प्रकट होती है उसको मानव अपने उद्यम से घटा और बढ़ा सकता है और उसको अपने

उत्पादन कार्य के लिए प्रयोग में ला सकता है यह मानव अभ्यास पूर्वक सिद्ध कर चुका है। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 207)**

- आदर्शवादी विधि में आज्ञा पालन, उपदेश और तर्क विहीन अनुशासन विधि से धर्म गद्दियों द्वारा संचालित प्रणालियाँ और उन्हीं का गौरव- सम्मान करते हुए भी "घुटन" का कारण बना रहा। इन्हीं गतिविधियों के साथ विज्ञान संसार स्थापित हुआ। विज्ञान विधि क्रम में तर्क का समुचित दरवाजा खुल गया। सभी तर्क करने की छूट मिली। विज्ञान विधि से निर्मित औजारों और दमनकारी/ विध्वंसकारी औजारों के प्रति शासन परंपराएं विवश होती गई। विज्ञान विधि के क्रम में प्रौद्योगिकी विधा द्वारा बहुमुखी **उत्पादन कार्यों** को साध लिया गया। इस तरह जो उत्पादित वस्तुएं सभी परंपराओं के लिए आकर्षक होना स्वीकार हुआ।
  इस हौसले के साथ विज्ञान शिक्षा का लोक व्यापीकरण हुआ जिसको व्यक्तिवाद/ समुदाय न कहते हुए भी वह "विशेषज्ञता" और पेटेंटी ¼intellectual property right½ में ग्रस्त हो गया। इस तरह विज्ञान विधि व्यापार और लाभ से संलग्न हो गई। विज्ञान शिक्षा के लोक व्यापीकरण होने से लभोन्मादी, भोगोन्मादी, कामोन्मादी शिक्षा पूरे संसार में फैला। इस तरह उन्माद त्रय "प्रलोभन" का आधार हुआ और सामरिक तंत्र और कार्यक्रम "भय" का आधार हुआ। विज्ञान युग के पहले भी मानव जाति "भय" और "प्रलोभन" से ग्रसित रहा ही है। भले ही वह पहले स्वर्ग के लिए "प्रलोभन" और नर्क के लिए "भय" और पाप पुण्य शब्दों की छाया में पला हो। विज्ञान विधि से पूर्णतया सुविधा संग्रह के लिए प्रलोभन और युद्ध संग्राम ध्वंस- विध्वंस दंड- विधानों के प्रति "भय" प्रभावित हो गया। **(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 223)**
- "सार्वभौम व्यवस्था" में मानव के जीने के पाँच आयाम है:
  (1) शिक्षा –संस्कार
  (2) न्याय –सुरक्षा
  (3) स्वास्थ्य-संयम
  (4) **उत्पादन –कार्य**
  (5) विनिमय –कोष

(अध्याय:, पृष्ठ नंबर: 247)

संवाद भाग २

(संस्करण:2013)

- **परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था**
  दस व्यक्तियों के समझदार परिवार में समाधान-समृद्धि का वैभव होता है। ऐसे दस समझदार परिवार एक-एक व्यक्ति को अपने में से निर्वाचित करते हैं, जो परिवार-समूह सभा को गठित करता है। ऐसे दसों व्यक्तियों का अधिकार समान होगा, उसका कोई एक मुखिया होगा ऐसा नहीं है। इन दसों परिवारों के जीने के पाँचों आयामों – शिक्षा-संस्कार कार्य, न्याय-सुरक्षा कार्य, स्वास्थ्य-संयम कार्य, **उत्पादन कार्य**, विनिमय-कोष कार्य – में जब भी कोई काम आया उसको पूरा करना, इनका काम रहेगा। जैसे सभी दस परिवार शिक्षा-संस्कार में पारंगत हैं या नहीं, उसमे जो कमी है उसको पूरा करना। सभी दस परिवार न्याय पूर्वक जी पा रहे हैं, यदि नहीं जी पा रहे हैं तो उसको पूरा करना। सभी दस परिवार **उत्पादन कार्य** में प्रवीण हैं या नहीं, आवश्यक उत्पादन कर पा रहे हैं या नहीं – इसका परिशीलन करना, और उसकी कमियों को पूरा करना। सभी स्वास्थ्य को लेकर स्वायत्त हैं या नहीं इसका परिशीलन करना और उसकी कमियों को पूरा करना। व्यवस्था के अर्थ में ही कमियों का आंकलन होता है, और उसको पूरा करने के लिए प्रयास होता है।
  इस तरह एक परिवार से एक परिवार-समूह तक पहुँचते हैं। ऐसे दस परिवार-समूह मिल कर एक ग्राम परिवार-सभा को तैयार करते हैं। ग्राम-परिवार सभा में भी यही पाँचों आयाम – शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, स्वास्थ्य-

संयम, **उत्पादन**, और विनिमय - काम करते हैं। इन सौ परिवारों के बीच ही विनिमय-कोष कार्य पूरा होता है, संतुलित होता है।
इसके आगे ग्राम-समूह परिवार-सभा में दस ग्राम परिवार-सभाओं से एक-एक व्यक्ति निर्वाचित हो कर पहुँचते हैं। इस प्रकार उत्पादन के दस गावों तक पहुँचने की व्यवस्था बनती है। इस तरह हज़ार परिवारों के बीच संतुलन की व्यवस्था बनती है।
इसके आगे दस ग्राम-समूह सभाओं से एक-एक व्यक्ति निर्वाचित हो कर मंडल परिवार-सभा तक पहुँचते हैं। इस तरह दस-हज़ार परिवारों के बीच पाँचों आयामों में संतुलन की व्यवस्था बनती है।
इसके आगे दस मंडल-सभाओं से एक-एक व्यक्ति निर्वाचित हो कर मंडल-समूह परिवार-सभा तक पहुँचते हैं। दस मंडल-समूह सभा से एक-एक व्यक्ति निर्वाचित हो कर मुख्य-राज्य परिवार-सभा बनता है। इसी विधि से आगे प्रधान-राज्य परिवार सभा और विश्व परिवार-सभा के होने का प्रावधान है। इस तरह "दस सोपानीय परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था" का स्वरूप निकलता है – जिससे विश्व स्तर तक शिक्षा-संस्कार, न्याय-सुरक्षा, स्वास्थ्य-संयम, **उत्पादन** और विनिमय-कोष कार्यों को व्यवस्था के अर्थ में संपादित किया जाता है, उनमे कमियों को पूरा किया जाता है। व्यवस्था का काम यह है, न कि आदमी को फांसी पर लटकाना, बन्दूक दिखा कर बस में रखना। शक्ति केंद्रित शासन मानव को स्वीकार नहीं है। व्यवस्था ही मानव को स्वीकार होती है. सार्वभौम-व्यवस्था के लिए सह-अस्तित्ववादी ज्ञान, विवेक, विज्ञान में पारंगत होने की आवश्यकता बनती है।

पारंगत होने के लिए शिक्षा-विधि ही है। उसके लिए हम छत्तीसगढ़ में कुछ प्रयास कर रहे हैं, आगे चल कर सभी जगह पहुंचेंगे।
- श्री ए नागराज के जीवन-विद्या राष्ट्रीय सम्मलेन २०१० में उदबोधन पर आधारित **(अध्याय:1(1.2), पृष्ठ नंबर: 37-39)**

- समाधान
  समाधान = सुख। समस्या = दुख। अभी तक मानव जैसे जिया उसने उससे समस्या ही पैदा किया। अब समाधान के लिए यहाँ प्रस्ताव रख रहे हैं। समझदारी (ज्ञान) से समाधान होता है। सहअस्तित्व दर्शन ज्ञान,सह अस्तित्व में जीवन ज्ञान, सह-अस्तित्व में मानवीयता पूर्ण आचरण ज्ञान संपन्न होने से ज्ञान पूरा हुआ। ज्ञानपूर्वक सोच विचार, सोच विचार पूर्वक योजना, योजना पूर्वक कार्य व्यवहार, कार्य व्यवहारपूर्वक फल परिणाम। फल परिणाम यदि समझदारी के अर्थ में हो गया तो समाधान अन्यथा समस्या। न्याय पूर्वक व्यवहार करने से, आवर्तन शील विधि से **उत्पादन कार्य** करने से समझदारी के अर्थ में फल परिणाम होता है।
  (अक्टूबर 2010, बांदा, उत्तर प्रदेश) **(अध्याय:1(1.2), पृष्ठ नंबर: 53-54)**
- व्यापार और नौकरी में जीने का कोई स्थान ही नहीं है। व्यापार में आदमी के साथ "कम देना, ज्यादा लेना" का तौर तरीका है। इसमें "जीना" कहाँ हुआ? नौकरी में भी वैसा ही है। जीने के बारे में सोचा जाए या जीने के नकली साधन (पैसा) के बारे में सोचा जाए? यह सोचने का मुद्दा है। जीने के लिए नकली साधन (पैसा) को लेकर सारा समय लगा देना कहाँ तक न्याय है? भौतिक वस्तुएं जीने के लिए असली साधन है। भौतिक वस्तुएं प्राकृतिक ऐश्वर्य पर श्रम नियोजन द्वारा मानव उत्पादित करता है। अभी विश्व के 12% से कम जनसंख्या **उत्पादन कार्य** में लगे हैं। यदि हर व्यक्ति अपने श्रम को उत्पादन करने के लिए नियोजित करने का मन बना ले तो वस्तु कितना होगा आप सोच लो! समाधान संपन्नता पूर्वक बनी आर्थिक व्यवस्था में वस्तु से समृद्ध होंगे, ना कि पैसे से। समाधान संपन्नता पूर्वक ही परिवार में समृद्धि के साथ जीने का तौर तरीका आता है। समाधान संपन्नता से पहले आदमी की तरह जीना तो बनेगा नहीं। मध्यस्थ दर्शन का प्रस्ताव समाधान संपन्न होने के लिए है। सुविधा संग्रह के चक्कर से मुक्त हुआ जाए और समाधान समृद्धि भवन पूर्वक जिया जाए इसके लिए पुनर्विचार जरूरी है।
  (अप्रैल 2008, अमरकंटक) **(अध्याय:1(1.2), पृष्ठ नंबर: 57)**

- हम काल को उपयोगिता, सदुउपयोगिता और प्रयोजनशीलता के आधार पर समझ सकते हैं। काल का प्रयोजन है? समय बद्ध विधि से हम श्वास लेते हैं। समयबद्ध विधि से हम भोजन करते हैं, समयबद्ध विधि से हम **उत्पादन कार्य**कलाप करते हैं। इसके लिए "काल" का ज्ञान है। **(अध्याय:2(2.1), पृष्ठ नंबर: 125-126)**

10 सोपानीय व्यवस्था के अंतर्गत उत्पादन कार्य व्यवस्था

व्यवहारात्मक जनवाद (संस्करण: 2009, मुद्रण: 2017)

- **प्रथम सोपान व द्वितीय सोपान में**

....इसी क्रम में 10 परिवार में **हस्त शिल्प, ग्राम शिल्प,** कविता साहित्य, चित्रकला **कृषि एवम कुटीर उद्योग** में प्रोत्साहन बनाए रखना है।... **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 111)**

- **तीसरे सोपान में**

व्यवस्था की तीसरी कड़ी **उत्पादन कार्य** है। इन उत्पादन कार्यों में कृषि, पशु पालन, ग्राम शिल्प, हस्त कला की प्रधान रूप में पहचान रहेगी। इसी के साथ ग्राम उद्योग की संभावना रहेगी। ग्रामोद्योग में ऊर्जा संतुलन कार्य रहेगा। यह स्थानीय परिस्थिति के साथ ग्राम सभा निर्णय करेगी। उत्पादन कार्यों की जितनी भी श्रेष्ठतम क्रिया प्रक्रिया तकनीकी होगी वह सभी परिवार में समावेश रहेगी। साथ में यह भी प्रावधान रहेगा कि किसी एक परिवार में स्वयं स्फूर्त श्रेष्ठता होने की स्थिति में समूचे 100 परिवार में सुलभ कराने की व्यवस्था ग्राम सभा में निहित रहेगी। हर परिवार अपने में आगे का कोई श्रेष्ठ कार्य करने में सफल होता है उसे तत्काल ग्राम सभा के आवगाहन में लाने की स्वतंत्रता रहेगी।

गोबर गैस, सूर्य उर्जा, वायुतरंग और कचरा गैस इन सब से ईधन और प्रकाश की व्यवस्था और तकनीकी सहज सुलभ रहेगी। ग्राम सभा के जन प्रतिनिधि इस बात को तय करेगे गृह उद्योग, ग्राम शिल्प, स्थानीय सम्पदा के आधार पर क्या-क्या उद्योग हो सकते है इसकी सूची बनेगी। इसके लिए समुचित तकनीकी सुलभ कराने की व्यवस्था करेगे। हर समझदार परिवार श्रेष्ठता और गतिशीलता के साथ जुटा रहेगा। इसलिये हर श्रेष्ठता, गतिशीलता के स्रोत ग्राह्य रहना स्वाभाविक रहेगा। आरम्भिक चरण में हर परिवार को समझदार बनाना प्रधान कार्य रहेगा। गाँव के हर व्यक्ति के लिए न्याय सुलभ होने में भरोसा न्याय पूर्वक जीने में विश्वास बना रहना ही ग्राम स्वराज्य सफल होने का बिन्दु है। इसी आधार पर हर परिवार में **उत्पादन कार्य** स्वीकृत रहता है ही। उनके लिए ग्राम सभा जो कुछ भी प्रस्तावित करेगी स्वीकृत होती रहेगी। ग्राम सभा अपने में निष्ठा बनाए रखेगी। बाजार में जो चीज जितने पैसे का मिलता है उतने पैसे में यदि गाँव में तैयार होता है तो गांव में तैयार करने का निर्णय लेगी। क्योंकि गाँव में एक व्यक्ति के समुचित उत्पादन का प्रावधान हो जाता है। इसी विधि से आहार आवास अलंकार सम्बंधी वस्तुओ के प्रति नजरिया रहेगी। इसके अनन्तर सम्पूर्ण महत्वाकांक्षी वस्तुएँ जैसे दूर दर्शन, दूर गमन, दूर श्रवण सम्बंधी वस्तुओ को सहज संभालने के लिए सम्पूर्ण कर्माभ्यास करने की व्यवस्था रहेगी। इसके अनन्तर इनसे किसी वस्तु को निर्मित करने की सम्भावना गाँव की परिस्थिति में होने के आधार पर उन-उन वस्तुओ को निर्मित करने का कार्यक्रम गाँव में सम्पन्न होगा। कृषि में बीज स्वायत्ता, उर्वरक स्वायत्तता, कीटनाशक औषधियों की स्वायत्तता, पानी की स्वायत्तता बनी रहेगी। पानी की स्वायत्तता क्रम में अति आधुनिक विधि से हम जो पाताली जल स्रोत उपयोग करने में सफल हो गये है, इसकी पूरकता की विधियों को सोचना आवश्यक है। अभी तक चली संग्रह सुविधावादी विधि से इस ओर ध्यान नहीं गया अथवा कारगर विधि से ध्यान नहीं गया। अब समझदार ग्राम स्वराज्य व्यवस्था का इस ओर ध्यान देना स्वाभाविक है। अस्तु पाताली जल स्रोत जितना हम उपयोग करते है कम से कम तीन गुना, ज्यादा से ज्यादा चार गुना वर्षाकालीन पानी को संग्रह कर रखने की व्यवस्था हर कृषक अपनी जमीन में बनाए रखेगा। जिसमें से कुछ भाग उड़ जाता है, कुछ भाग जमीन पी जाती है जो पाताल जल स्रोत बन जाती है जिससे पाताल जल तादाद बने रहने का सूत्रपात हो सके। जिससे धरती की सतह पर जो वन, वनस्पति शेष है वे सुरक्षित रह सके। क्योंकि पाताल जल स्रोत जितना नीचे चला जायेगा। धरती की सतह का जल और जल स्रोत सूखने की संभावना रहेगी। वर्तमान में सर्वाधिक नदी नाले, तालाब, सरोवर सूखा हुआ देखने को मिलता है। सतह में वन, वनस्पति और औषधि, वनोपज प्रचुर मात्रा में होने के लिए धरती की सतह के ऊपर पानी सर्वाधिक रहना आवश्यक है। तभी नदी नाला किनारा, कुआं, तालाब, सरोवर ये सब भी पानी से भरपूर दिखाई पड़ेंगे। जैसे ऋतु संतुलन और धरती के सन्तुलन की स्थिति में रहे आये हैं। इस क्रम में हम अच्छी तरह से कृषि उत्पादन के साथ इमारती एवम जलाऊ लकड़ी का भी अपने खेतों में उपज लेना सहज है। हर समझदार कृषक को भूमि के सदुपयोग को अपनी पूरकता विधि से पहचानना बन जाता है। अतएव **उत्पादन कार्य** के सभी आयामों की संभावनाओं के आधार पर तकनीकी कर्म अभ्यास गाँव में स्थापित करने का अधिकार ग्राम सभा में बना रहेगा। कृषि के चारो स्वायत्ता के पक्ष हर ग्राम सभा सुलभ सार्थक बनाने का कार्य करेगी। **(अध्याय: 7, पृष्ठ नंबर: 114- 116)**

- **चौथे सोपान में**

तीसरी कड़ी में **उत्पादन कार्य** एक महत्वपूर्ण भूमिका है ही। परिवार समूह सभा में प्रौद्योगिकी के पक्ष में जितनी भी जानकारी चाहिये उन सब में पारंगत रहना आवश्यक है। ये दसों सदस्य ग्रामोद्योग, लघु उद्योग विधा में पारंगत रहेंगे। जैसे वन खनिज की संतुलित व्यवस्था है। वैसे ग्राम उद्योग विधा में उद्योगों को स्थापित करेगें। जैसे पढ़ाई की सामग्री, अलंकार सम्बंधी सामग्री, गृह निर्माण के लिए आवश्यक सामग्री, दूरगमन दूर दर्शन, दूरश्रवण सम्बंधी उपकरणों को निर्मित करने की व्यवस्था बनी रहेगी। ऐसा उत्पादन उन दस गाँव की आवश्यकता के अर्थ में रहेगा। इस **उत्पादन कार्य** में श्रम निवेश परस्पर दस गाँव के बीच ही बना रहेगा। इसका आदान प्रदान के लिए विनिमय कोष बनाना स्वाभाविक है। इस विनिमय कोष के साथ आदान-प्रदान का सम्बंध बनाए रखेगी। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 118-119)**

- **पांचवे सोपान में**

इसी क्रम में हर सभा के अधिकार में कुछ मझोले, बड़े प्रौद्योगिकी समायी रहेगी। इसके लिए बुनियादी रूप में आवश्यकीय सभी साधन क्षेत्र सभाओं के प्रौद्योगिकी सम्पदा से निर्मित किये रहेंगे। इस विधि से हर क्षेत्र परिवार सभा में मझोले और छोटे उद्योगो का उत्पादन प्रचुर होने की व्यवस्था रहेगी। प्रधानत: ये उद्योग आवास, अलंकार, दूरश्रवण, दूरदर्शन, दूरगमन सम्बंधी यंत्रो को बनाने के कार्य में प्रवृत्त होगा। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 120)**

- **छठवाँ सोपान**

इसकी तीसरी कड़ी **उत्पादन कार्य** रहेगी। यह बड़े-बड़े उद्योगो के सम्बंध में सोच विचार करेगी। लघु उद्योग, ग्राम उद्योग, कुटीर उद्योग ग्राम शिल्प के मूल द्रव्यो को तैयार करने के सम्बंध में रहेगी। दूर श्रवण, दूरदर्शन, दूरगमन, के यंत्र उपकरणों को निर्मित करने के भी साधारण प्रयास रहेगी। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 121)**

- **सातवीं सोपान**

तीसरी कड़ी **उत्पादन कार्य** होगी बड़े उद्योगो को यह परिवार सभा संचालित करेगी। जिससे सभी मंडलों की आवश्यकता पूरी होती रहे। जिससे गाँव-गाँव के लिए यान वाहन सब उपलब्ध हो सके। इसी क्रम में **उत्पादन कार्य** में शोध कर्माभ्यास की व्यवस्था बनी रहेगी। वर्तमान से आगे श्रेष्ठतम यान वाहन, दूर संचार तंत्र सम्बंधी यंत्रो को, उपकरणों को तैयार करने का कार्य करने के रूप में पहचाना जायेगा। जिससे देश धरती की आवश्यकता पूरी होती रहे। तकनीकी प्रक्रिया में जो मंडल समूह सभा अपने में श्रेष्ठता को पहचाने जायेंगे उसे सभी सोपनीय सभाओं के लिए प्रस्तुत किये रहेंगे। इसी प्रकार तकनीकी कर्माभ्यास का लोकव्यापीकरण करने की संभावना बनाए रखेंगे। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 123)**

- **आठवीं सोपान**

तीसरी कड़ी अपने आप में **उत्पादन कार्य** की रहेगी इसमें बड़े उद्योग समाहित रहेंगे प्रत्येक मुख्य राज्य में यातायात जैसे रेल सम्बंधी उपकरणों को प्राप्त करने का कार्यक्रम बना रहेगा। हर मुख्य राज्य परिवार सभा में इसकी परिपुष्टता को बनाये रखने की व्यवस्था रहेगी। जैसे बड़े बड़े वाहन इनको बनाने की प्रौद्योगिकी बनी रहेगी। इस क्रम में प्रत्येक राज्य सभा अपने में समृद्ध होने की व्यवस्था बनी रहेगी। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 124)**

- **नवें सोपान**

इस सभा की तीसरी कड़ी **उत्पादन कार्य** रहेगी जो आकाश गमन आदि यंत्रो को तैयार करने की प्रौद्योगिकी बनाये रखेगी। साथ में जलप्रवाह बल से विद्युत उपार्जन कार्य सम्पादित करने की व्यवस्था और दायित्व रहेगी। इसी के साथ साथ वायु प्रवाह, समुद्र तरंग विधियों से भी विद्युत उपार्जन करने के उपक्रम समावेशित रहेंगे। इसी प्रौद्योगिकी कार्यक्रम के साथ और श्रेष्ठतर उपलब्धियो के लिए प्रयोगशील रहने के अधिकार समावेशित रहेंगे जिससे ऊर्जा संतुलन सुलभ हो। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 125)**

- **दसवीं सोपान**

इस सभा की तीसरी कड़ी **उत्पादन-कार्य** है। उपयोगिता, सदुपयोगिता, प्रयोजनशीलता का मूल्याँकन करना सभी सोपानीय उत्पादनो के सम्बन्ध में पूर्णतया सजग रहना सन्तुलन वस्तु उत्पादन के लिए प्रधान राज्य सभाओं का मार्ग दर्शन देना बना रहेगा। इस सभा के सम्पूर्ण साधनो को मुख्य राज्य सभाओं के जो मुख्य प्रौद्योगिकी रहेगी उसी के बलबूते पर पूरा साधन एकत्रित रहेगा। साधनो के सदुपयोग का चित्रण, प्रेरणा देने का अधिकार इस सभा में निहित रहेगा। आरंभिक स्थिति में आवश्यक समझने पर सामरिक तंत्रो का उत्पादन प्रौद्योगिकीय विधि से विश्व राज्य सभा में रहेगा। उसके लिए स्रोत सभी प्रधान राज्य सभाएँ है। सभी आवश्यक तकनीकी प्रचलित हो चुकी है। इस विश्व राज्य सभा में एक विश्व सुरक्षा समिति बनी रहेगी। इसमें सभी प्रधान राज्य सभा के एक एक प्रतिनिधि निर्वाचित विधि से प्रस्तुत रहेंगे।

जहाँ तक सामरिक तंत्र के लिए आवश्यक है इसकी आवश्यकता तब तक रहेगी जब तक परस्पर राज्यों में पूर्ण विश्वास एकरूपता का सेतु न बन जाये। इस विधा में निश्चयन यही है समझदारी के साथ परिवार मूलक स्वराज्य व्यवस्था सार्थक रहेगी। थोड़े दिन उपरान्त मानव कुल में सामरिक उत्पादन सर्वथा अयोग्य सिद्ध होकर रहेगा।
यह भी एक परिकल्पना मानव कुल कर सकता है कि दूसरे किसी पृथ्वी से इस पृथ्वी पर आक्रमण करने का भ्रम हो सकता है। इसमें कही भी मानव हो, शनैः शनैः जागृत होते हुए जागृतिपूर्ण विधि से समग्र व्यवस्था को पहचानने का मुहूर्त हर पृथ्वी पर उदय होता ही है। क्योंकि पूरी प्रक्रिया इस धरती पर जैसी गुजर चुकी है उसे देखने पर अनुमान यही होता है किसी पृथ्वी पर भिन्न जलवायु में मानव कुल का विस्तार होते-होते पूरी उस पृथ्वी का ज्ञान होना उसका भौगोलिक और जलवायु सम्बन्धी स्वरूप समझ में आना विभिन्न जलवायु से दूरसंचार जुड़ना, ये सब शनैः शनैः गतिशील सोच-विचार का परिणाम होता रहेगा। ऐसी संभावना के चलते अन्ततोगत्वा जागृति पूर्ण विधि को तलाशना होता है।
जागृति पूर्ण विधि को तलाशने के उपरान्त सदा-सदा से बनी हुई इतिहास जुड़ी हुई मिलती है और जागृति के उपरान्त व्यवस्था का सूझबूझ होना मानव कुल की ही प्रतिष्ठा है। मानसिकता के आधार पर जागृति को विकसित करने वाला, पहचानने, जानने, मानने, प्रमाणित करने वाला एक मात्र मानव ही है।
हर जलवायु में विभिन्न प्रकार के आदमी होते है अर्थात मानव शरीर का रचना विभिन्न नस्ल, रंग, रूप का होता है। यह बात इसी धरती पर गवाहित हो चुकी है। इसी प्रकार अन्य धरती पर भी हो सकती है। जागृति की महिमा सार्वभौम व्यवस्था अखंड समाज का प्रमाण किसी अन्य धरती अथवा अनंत धरती में भी मानव का उदय हो चुका हो, उन सबका स्वरूप एक ही हो जाता है यानि मानसिक स्वरूप, क्योंकि उद्देश्य एक ही बनता है। दृष्टा कर्ता भोक्ता पद निश्चित हो जाता है। इन तथ्यो से हमें विदित होता है हम मानव लक्ष्य सम्पन्न विधि से जीने के लिए जागृति एक मात्र सहारा है। मानव जागृति सहित सहअस्तित्व रूप में नित्य वर्तमान है ही। वर्तमानता सदा-सदा के लिए नित्य है। इस विधि से हम सर्वशुभ कल्पना, परिकल्पना और प्रमाण तक की स्थिति में आते है कि परिवार मूलक स्वराज्य विधि से विश्व मानव परिवार सभा को अभी तक वैभवित न होते हुए, वैभवित होने की संभावना मानव मन तक पहुंचता है। सम्भावना तक स्वीकृति होती है। आगे मानव की चाहत बलवती होने की स्थिति में व्यवहार में वर्तमान हो सकता है यही आवश्यकता हर मानव में विद्यमान है। **(अध्याय:7, पृष्ठ नंबर: 126- 128)**